जुलाई-सितंबर, 2024 (संयुक्तांक)

I.S.S.N. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय
निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

डा. राजीव मणि,
सचिव, विधायी विभाग

श्री अश्वनी,
संयुक्त सचिव और विधायी परामर्शी,
विधायी विभाग, (विभागाध्यक्ष) वि.सा.प्र.

डा. अनुराग दीप, एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. आर्येन्दु द्विवेदी,
प्राचार्य, मां वैष्णों देवी ला कालेज
फैजाबाद रोड, चिनहट, लखनऊ, उ.प्र.

श्री कुलदीप चौहान,
चेयरमैन, एस.आर.सी. ला कालेज
129, सेक्टर-1, मंगल पाण्डेय नगर,
मेरठ, उ.प्र.

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री दयाल चन्द ग्रोवर,
सेवानिवृत्त उप-संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री अविनाश शुक्ला,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक

श्री पुंडरीक शर्मा,
संपादक

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह, जसवन्त सिंह, जाह्नवी शेखर शर्मा और अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

परामर्शदाता : सर्वश्री कमला कान्त, असलम खान और अविनाश शुक्ला

ISSN 2457-0494

कीमत : **डाक-व्यय सहित**

एक प्रति : ` 195/-

वार्षिक : ` 2,100/-

© **2024 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय**

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

जुलाई-सितंबर, 2024 (संयुक्तांक)

संपादक
पुंडरीक शर्मा

[2024] 3 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

क्या ऐसे किसी मामले में जहां एक ग्रामीण पृष्ठभूमि वाले व्यक्ति ने कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया और आवेदन किए जाने के पश्चात् उसे एक दांडिक मामले में संलिप्त किया गया किन्तु न्यायालय द्वारा उसे दोषमुक्त कर दिया गया और राज्य ने उक्त दोषमुक्ति के विरुद्ध कोई अपील न करने का निर्णय लिया तथा उक्त व्यक्ति का उपरोक्त पद के लिए चयन हो जाने के पश्चात् उसके द्वारा अपेक्षित दांडिक इतिवृत्त के संबंध में प्रस्तुत किए गए शपथ-पत्र में कोई दांडिक मामला रजिस्ट्रीकृत न होने का उल्लेख किया गया तो सत्यापन के दौरान तात्विक जानकारी छिपाने और असत्य जानकारी देने के लिए उसका चयन रद्द किया जाना उचित है ? इसी प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने **रविन्द्र कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** [2024] 3 उम. नि. प. 1 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि तात्विक जानकारी छिपाने और असत्य जानकारी देने वाला व्यक्ति नियुक्ति के लिए उन्मुक्त अधिकार का दावा नहीं कर सकता, तो भी उसे उसके मामले पर मनमाने तौर पर विचार न करने का अधिकार है और नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा शक्ति का प्रयोग हर मामले के विशिष्ट तथ्यों पर विचार करते हुए वस्तुनिष्ठता से युक्तियुक्त रीति में किया जाना चाहिए और अपीलार्थी की ग्रामीण पृष्ठभूमि, पद के लिए आवेदन करते समय उसका इतिवृत्त निष्कलंक होने, दांडिक मामले में उसकी दोषमुक्ति और दोषमुक्ति के विरुद्ध राज्य द्वारा कोई अपील न किए जाने, चरित्र सत्यापन के दौरान थाना अधिकारी

और पुलिस अधीक्षक द्वारा उसका चरित्र उत्कृष्ट होने संबंधी रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने जैसे सभी सुसंगत पहलुओं को ध्यान में रखते हुए नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा यांत्रिक रीति में उसके चयन को रद्द करना उचित नहीं कहा जा सकता ।

क्या ऐसे किसी मामले में जहां पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त किया गया हो किन्तु उच्च न्यायालय द्वारा उक्त दोषमुक्ति को उलट कर उन्हें दोषी ठहराते हुए दंडादिष्ट किया गया हो, दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में अपील न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की कितनी गुंजाइश है । इसी प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने **बल्लू** उर्फ **बलराम** उर्फ **बालमुकुंद और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** [2024] 3 उम. नि. प. 30 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में केवल तब हस्तक्षेप कर सकता है जब वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विचारण न्यायालय का निर्णय अनुचित या असंभव है और जहां मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित हो और विचारण न्यायालय द्वारा अन्वेषण अधिकारी तथा अन्य साक्षियों के परिसाक्ष्य को त्यक्त करने के लिए ठोस और तर्कपूर्ण कारण दिए गए हों तथा साक्ष्य की विस्तारपूर्वक चर्चा करने के पश्चात् अभियुक्तों को दोषी न पाया गया हो, विचारण न्यायालय का निर्णय अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के सही मूल्यांकन पर आधारित हो और अभियोजन पक्ष द्वारा अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया हो, वहां उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में केवल अनुमान के आधार पर विचारण न्यायालय के निर्णय को उलटना उचित नहीं कहा जा सकता ।

इस अंक में संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

पुंडरीक शर्मा
संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

जुलाई-सितंबर, 2024

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
धर्मेन्द्र कुमार **उर्फ** धम्मा **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	135
पंजाब राज्य **बनाम** प्रताप सिंह वेरका	179
बल्लू **उर्फ** बलराम **उर्फ** बालमुकुंद और एक अन्य **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	30
रविन्द्र कुमार **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	1
राजेन्द्र पुत्र रामदास कोल्हे **बनाम** महाराष्ट्र राज्य	84
लाल मोहम्मद मंजूर अंसारी **बनाम** गुजरात राज्य	189
शिव प्रताप सिंह राणा **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य	205
सुखपाल सिंह **बनाम** राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली	50
सुरेन्द्र सिंह **बनाम** राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)	113

संसद् के अधिनियम

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 - 30

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 161 और 162 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32 और 145] – मृतक व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु से पूर्व पुलिस अधिकारी के समक्ष अपनी मृत्यु के कारण के संबंध में कथन किया जाना – ऐसे कथन की मृत्युकालिक कथन के रूप में ग्राह्यता – जहां किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो मर गया है, अपने मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई किसी पुलिस अधिकारी को कोई कथन किया गया है और उसे धारा 161 के अधीन लेखबद्ध किया गया है, वहां ऐसे कथन का साक्ष्य में प्रयोग करने के विरुद्ध इस धारा में अभिव्यक्त वर्जन होते हुए भी ऐसी स्थिति में ऐसा कथन सुसंगत और ग्राह्य होगा क्योंकि ऐसे कथन को असाधारण रूप से विश्वसनीय माना गया है और धारा 161 के अधीन किया गया कथन एक मृत्युकालिक कथन का स्वरूप ग्रहण कर लेता है, तथापि, दोषसिद्धि करने के लिए ऐसे कथन का अवलंब लेते समय न्यायालय को अत्यंत सावधान और सचेत रहना चाहिए ।

धर्मेन्द्र कुमार उर्फ **धम्मा** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 135

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 299 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – हत्या – अभियुक्त द्वारा अपनी पत्नी

पृष्ठ संख्या

के व्यभिचारिणी होने पर संदेह करते हुए अलग स्थान पर रहना आरंभ कर देना और कभी-कभार उसके पास आते-जाते रहना – अभियुक्त द्वारा घटना से एक दिन पहले उसके पास आकर रहना और अभिकथित रूप से उसकी गला घोंटकर हत्या किया जाना – अपराध कारित करने के पश्चात् घटनास्थल से फरार हो जाना और लगभग दस वर्षों तक गिरफ्तारी न होना – घटनास्थल से एक संस्वीकृति टिप्पण प्राप्त होना – मृतका के एक निकट पड़ोसी द्वारा घटना की शिकायत किया जाना और पुलिस द्वारा उसका कथन अभिलिखित किया जाना – पुलिस द्वारा अभियुक्त को फरार दर्शित करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त की अनुपस्थिति में साक्षी (शिकायतकर्ता) का शपथ पर कथन अभिलिखित किया जाना – अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् विचारण पुन: आरंभ होने पर शिकायतकर्ता को उसके पते पर न पाया जाना और सभी संभव प्रयासों के बावजूद उसे न्यायालय में अभिसाक्ष्य देने के लिए पेश न किया जा सकना – विचारण न्यायालय द्वारा शिकायतकर्ता के शपथ पर किए गए पूर्ववर्ती कथन के आधार पर अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – शिकायतकर्ता-साक्षी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन शपथ पर किए गए कथन से अभियुक्त द्वारा मृतका की हत्या करने का हेतु सिद्ध होने, अभियुक्त को अंतिम बार मृतका के साथ देखे जाने, उसके द्वारा अपराध कारित करने के बारे में घटनास्थल पर छोड़े गए संस्वीकृति टिप्पण की लिखावट का उसके हस्तलेख से मिलान होने, अपराध कारित

पृष्ठ संख्या

करने के पश्चात् घटनास्थल से फरार हो जाने और लगभग दस वर्षों तक उसकी गिरफ्तारी न होने, शिकायतकर्ता का अभियुक्त को मिथ्या रूप से अपराध में फंसाने के लिए कोई हेतु न होने से संबंधित ऐसी परिस्थितियां हैं जो पारिस्थितिक साक्ष्य की एक पूर्ण श्रृंखला प्रदान करती हैं और जो एक सारभूत साक्ष्य के रूप में ग्रहण करने योग्य हैं तथा इसके अतिरिक्त घटना की रात्रि में मकान में केवल अभियुक्त और उसकी मृतका पत्नी के मौजूद होने पर उसकी मृत्यु हो जाने के संबंध में अभियुक्त द्वारा कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण न दिए जाने से उसकी दोषसिद्धि का निष्कर्ष निकलता है और उसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

सुखपाल सिंह बनाम **राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली** 50

– धारा 302 – हत्या – दोषसिद्धि – एक कमरे में एक साथ रह रहे अभियुक्त-अपीलार्थी और मृतक के बीच टेप-रिकार्डर बजाने को लेकर कहा-सुनी होना और दोनों के बीच झगड़ा होने पर अभियुक्त द्वारा मृतक पर चाकू से हमला करके क्षतियां कारित किया जाना – क्षतियों के कारण मृतक की मृत्यु हो जाना – अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से अपने नियोजक जिसके पास उसने केवल पांच माह काम किया था, को फोन करके अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति किया जाना – मृतक द्वारा अभिकथित रूप से एक अभियोजन साक्षी के समक्ष मृत्युकालिक कथन किया जाना – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों सहित कुछ अभियोजन साक्षी पक्षद्रोही हो जाना – विचारण न्यायालय द्वारा उनके परिसाक्ष्य के कतिपय भागों का अवलंब लेते हुए अभियुक्तअपीलार्थी को दोषसिद्ध

पृष्ठ संख्या

किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – प्रसामान्यत: कोई अभियुक्त उसके द्वारा कारित किए गए अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति उस व्यक्ति के समक्ष करेगा जिस पर उसका गहरा विश्वास हो और इस बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि अभियुक्त द्वारा जिस व्यक्ति को फोन करके अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति की गई हो उसके पास उसने केवल पांच माह काम किया था और पुलिस द्वारा उस फोन नंबर की जांच तक नहीं की गई हो जिससे फोन किया गया था और इसके अतिरिक्त पक्षद्रोही हो गए अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर ऐसा कुछ निकलकर न आता हो जिसके आधार पर अभियुक्त-अपीलार्थी को मृतक की हत्या के अपराध से संपृक्त किया जा सके, वहां अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषमुक्त करना उचित होगा ।

लाल मोहम्मद मंजूर अंसारी बनाम **गुजरात राज्य** 189

– धारा 302 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32] – हत्या – मृत्युकालिक कथन – विश्वसनीयता – पति द्वारा अपनी पत्नी पर मिट्टी का तेल छिड़कने के पश्चात् आग लगाया जाना – पत्नी को गंभीर दाह-क्षतियां पहुंचना और उपचार के दौरान कुछ दिनों के पश्चात् अस्पताल में मृत्यु हो जाना – मृतका का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि को कायम रखा जाना – अपील – जहां मृतका द्वारा अपने मृत्युकालिक कथन में अभियुक्त (पति) द्वारा उसे दाह-क्षतियां कारित करने के लिए निभाई गई भूमिका के बारे में स्पष्ट रूप से कथन किया

पृष्ठ संख्या

गया हो और मृतका का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने से पूर्व उसका उपचार करने वाले डाक्टर द्वारा प्रमाणित किया गया हो कि वह अपना कथन करने योग्य है और अन्य साक्षियों के साक्ष्य द्वारा भी मृत्युकालिक कथन की अंतर्वस्तुओं को साबित किया गया हो भले ही उनके साक्ष्य में कतिपय विसंगतियां पाई गई हों जो तात्विक न हों और मृतका के मृत्युकालिक कथन के सारभाग को प्रभावित न करती हों, वहां ऐसे मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता पर संदेह न करते हुए अभियुक्त की दोषिता युक्तियुक्ति संदेह के परे साबित होने पर उसकी दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

राजेन्द्र पुत्र रामदास कोल्हे बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 84

– धारा 302/34 और 201 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति को उलटा जाना और अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में अपील न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की गुंजाइश – उच्च न्यायालय दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में केवल तब हस्तक्षेप कर सकता है जब वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विचारण न्यायालय का निर्णय अनुचित या असंभव है और जहां मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित हो और विचारण न्यायालय द्वारा अन्वेषण अधिकारी तथा अन्य साक्षियों के परिसाक्ष्य को त्यक्त करने के लिए ठोस और तर्कपूर्ण कारण दिए गए हों तथा साक्ष्य की विस्तारपूर्वक चर्चा करने के पश्चात् अभियुक्तों

पृष्ठ संख्या

को दोषी न पाया गया हो, विचारण न्यायालय का निर्णय अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के सही मूल्यांकन पर आधारित हो और अभियोजन पक्ष द्वारा अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया हो, वहां उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में केवल अटकलबाजी और अनुमान के आधार पर विचारण न्यायालय के निर्णय को उलटना उचित नहीं कहा जा सकता और उसे अभिखंडित और अपास्त करते हुए अभियुक्तों को दोषमुक्त करना न्यायोचित होगा ।

बल्लू उर्फ **बलराम** उर्फ **बालमुकुंद और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 30

– धारा 302, 307 और 300 का अपवाद 1 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 105] – हत्या – मृतक के अभिकथित रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी की पत्नी के साथ अयुक्त संबंध होना – अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा पुलिस थाने में संतरी की अपनी ड्यूटी के दौरान अन्य पुलिस कार्मिकों की मौजूदगी में अपनी कार्बाइन से गोलियां चलाकर मृतक की हत्या किया जाना और शिकायतकर्ता महिला पुलिस कर्मी को भी गोली की क्षतियां कारित होना – अभियुक्त द्वारा घटना से इनकार न किया जाना किंतु आत्म-रक्षा तथा गंभीर और अचानक प्रकोपन में कार्य करने का अभिवाक् किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – मृतक के अपीलार्थी की पत्नी के साथ अयुक्त संबंध होने के कारण अभियुक्त के पास मृतक की मृत्यु कारित करने का स्पष्ट

पृष्ठ संख्या

हेतु होने, मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट और साक्षियों के साक्ष्य से यह दर्शित होना कि अभियुक्त द्वारा मृतक की छाती पर अत्यंत निकट से गोली मारने के साथ-साथ मृतक द्वारा बचने की कोशिश करते समय उसकी पीठ पर भी गोली मारी गई थी और आठ से नौ गोलियां मारी गई थीं इसलिए इसे आत्म-रक्षा में तथा गंभीर और अचानक प्रकोपन में गोली चलाकर मृत्यु कारित किया जाना नहीं कहा जा सकता और अभियुक्त का मामला हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध का मामला न होकर हत्या का मामला है इसलिए हत्या के अपराध के लिए की गई उसकी दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

सुरेन्द्र सिंह बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)** 113

– धारा 302/34 – हत्या – दोषसिद्धि – पक्षकारों के बीच एक दीवार के निर्माण को लेकर वाद-विवाद होना – अभियुक्त-अपीलार्थी सहित अन्य अभियुक्तों द्वारा शिकायतकर्ता और दीवार का निर्माण कर रहे दो व्यक्तियों के साथ गाली-गलौच किया जाना और अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा एक व्यक्ति पर चाकू से प्रहार किया जाना और एक अन्य अभियुक्त द्वारा दूसरे व्यक्ति को भी क्षतियां कारित किया जाना – दोनों में से एक व्यक्ति की मृत्यु हो जाना और कुछ समय पश्चात् दूसरे व्यक्ति की भी मृत्यु हो जाना – अन्वेषण अधिकारी द्वारा क्षतिग्रस्त जीवित व्यक्ति का कथन अभिलिखित किया जाना – अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि – उच्चतम न्यायालय में अपील – प्रत्यक्षदर्शी

पृष्ठ संख्या

साक्षियों के परिसाक्ष्य संगत, अनधिक्षेपणीय और चिकित्सीय साक्ष्य तथा अपराध कारित करने में प्रयुक्त किए गए आयुध की बरामदगी से उनके परिसाक्ष्यों की सम्यक् रूप से संपुष्टि होने, घटनास्थल पर अभियुक्त-अपीलार्थी की मौजूदगी और अपराध कारित करने में भाग लेने की बात सिद्ध होने पर उसकी दोषसिद्धि उचित है और शिकायतकर्ता को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तुओं को पढ़कर नहीं सुनाए जाने या अभियोजन साक्षियों के साक्ष्यों में छुट-पुट विरोधाभास या विसंगति होने से अभियोजन के पक्षकथन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़ने के कारण निचले न्यायालयों द्वारा की गई उसकी दोषसिद्धि में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

धर्मेन्द्र कुमार उर्फ **धम्मा** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 135

– धारा 376(2)(ढ), धारा 506 और धारा 90 – बार-बार बलात्संग और आपराधिक अभित्रास – अभियुक्त और अभियोक्त्री के बीच मैत्री संबंध होना – अभियुक्त द्वारा अभियोक्त्री की एक झरने के नीचे स्नान करते समय और स्नान के पश्चात् वस्त्र बदलते समय मोबाइल फोन से कुछ तस्वीरें खींच लेना – अभियुक्त द्वारा अभियोक्त्री को एक दूसरे स्थान पर लेना जाना और अभिकथित रूप से इन तस्वीरों को सार्वजनिक करने की धमकी देकर उसके साथ कई बार जबरदस्ती शारीरिक संबंध बनाना – अभियुक्त द्वारा अभियोक्त्री को उसके साथ विवाह करने का वचन दिया जाना – अभियोक्त्री द्वारा कई अवसरों पर अभिकथित रूप से अभियुक्त को कुछ धनराशि और जेवरात भी दिया जाना – अभियुक्त द्वारा बाद में उससे विवाह करने

पृष्ठ संख्या

से इनकार करने पर अभियोक्त्री द्वारा दो वर्ष पश्चात् अभियुक्त के विरुद्ध बलात्संग का अभिकथन करते हुए पुलिस थाने में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा आरोप विरचित किया जाना – अभियुक्त द्वारा उन्मोचन के लिए सेशन न्यायालय के समक्ष आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन खारिज हो जाना – उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया पुनरीक्षण आवेदन भी खारिज कर दिया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – अभियोक्त्री द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन और धारा 164 के अधीन किए गए कथनों में विरोधाभास होने, पुलिस द्वारा अभियुक्त का मोबाइल फोन जिससे उसके द्वारा अभियोक्त्री की तस्वीरें खींची गई थीं और उन तस्वीरों को भी अभिगृहीत न किए जाने और अभियोक्त्री द्वारा अभियुक्त के साथ एक झरने के नीचे स्नान करने और उसके सामने अपने वस्त्र बदलने के तथ्य के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि अभियोक्त्री और अभियुक्त के बीच शारीरिक संबंध अभियोक्त्री की इच्छा के विरुद्ध और उसकी सम्मति के बिना और तथ्य के भ्रम के अधीन नहीं थे, अपितु यह एक सहमति-जन्य संबंध होना कहा जा सकता है इसलिए बलात्संग और आपराधिक अभित्रास का कोई मामला नहीं बनने के कारण अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाहियों को अभिखंडित करना उचित होगा ।

शिव प्रताप सिंह राणा बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य** 205

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 5)

– धारा 19 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 319] – लोक सेवक के विरुद्ध अभियोजन के

पृष्ठ संख्या

लिए पूर्व मंजूरी – शिकायतकर्ता द्वारा प्रत्यर्थी-लोक सेवक और एक अन्य सह-अभियुक्त के विरुद्ध रिश्वत लेने का अभिकथन करते हुए सतर्कता ब्यूरो में शिकायत किया जाना – सतर्कता ब्यूरो द्वारा सह-अभियुक्त को रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों गिरफ्तार किया जाना – सतर्कता ब्यूरो द्वारा फाइल किए गए आरोप पत्र में प्रत्यर्थी-लोक सेवक का नाम न होना – शिकायतकर्ता की ओर से प्रत्यर्थी को विचारण का सामना करने लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन फाइल किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन मंजूर करते हुए प्रत्यर्थी-लोक सेवक को धारा 7/13(2) के अधीन विचारण का सामना करने के लिए समन किया जाना – प्रत्यर्थी के विरुद्ध अभियोजन चलाने के लिए सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी न लेने के आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय के आदेश को अपास्त किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – शुद्धता – भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19(1) में प्रयुक्त शब्दों और वाक्यांशों से स्वत: यह स्पष्ट है कि यह उपबंध आज्ञापक प्रकृति का है और न्यायालय किसी लोक सेवक के विरुद्ध पहले धारा 19 में दी गई प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना यहां तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन किए गए आवेदन के आधार पर भी भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7, 11, 13 और 15 के अधीन किए गए अपराधों का संज्ञान नहीं ले सकता, अत: उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश में किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

पंजाब राज्य बनाम **प्रताप सिंह वेरका** 179

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 32 – मृत्युकालिक कथन – दोषसिद्धि के लिए एक मात्र आधार – संधार्यता – जब कोई मृत्युकालिक

पृष्ठ संख्या

कथन प्रामाणिक पाया जाता है और न्यायालय का विश्वास प्रेरित होता है तो किसी संपुष्टि के बिना मात्र ऐसे कथन के आधार पर अभियुक्त की दोषसिद्धि की जा सकती है, तथापि, किसी मृत्युकालिक कथन को स्वीकार करने से पूर्व न्यायालय का अवश्य यह समाधान हो जाना चाहिए कि वह कथन स्वेच्छापूर्वक किया गया, संगत और विश्वसनीय है और किसी के सिखाने-पढ़ाने से रहित है ।

राजेन्द्र पुत्र रामदास कोल्हे बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 84

सेवा विधि

– अपीलार्थी द्वारा कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया जाना – आवेदन करने के पांच दिन पश्चात् एक दांडिक मामले में उलझ जाना – न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया जाना – अपीलार्थी का चयन हो जाना और चयन के पश्चात् अपेक्षित दांडिक इतिवृत्त के संबंध में प्रस्तुत किए गए शपथ-पत्र में कभी कोई दांडिक मामला रजिस्ट्रीकृत न होने का उल्लेख किया जाना – सत्यापन के दौरान तात्विक जानकारी छिपाने और असत्य जानकारी देने के आधार पर उसका चयन रद्द किया जाना – अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय में रिट याचिका/विशेष अपील फाइल किया जाना – रिट याचिका/विशेष अपील खारिज कर दिया जाना – संधार्यता – यद्यपि तात्विक जानकारी छिपाने और असत्य जानकारी देने वाला व्यक्ति नियुक्ति के लिए उन्मुक्त अधिकार का दावा नहीं कर सकता, तो भी उसे उसके मामले पर मनमाने तौर पर विचार न करने का अधिकार है और नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा शक्ति का प्रयोग

पृष्ठ संख्या

हर मामले के विशिष्ट तथ्यों पर विचार करते हुए वस्तुनिष्ठता से युक्तियुक्त रीति में किया जाना चाहिए और अपीलार्थी की ग्रामीण पृष्ठभूमि, पद के लिए आवेदन करते समय उसका इतिवृत्त निष्कलंक होने, दांडिक मामले में उसकी दोषमुक्ति और दोषमुक्ति के विरुद्ध राज्य द्वारा कोई अपील न किए जाने, चरित्र सत्यापन के दौरान थाना अधिकारी और पुलिस अधीक्षक द्वारा उसका चरित्र उत्कृष्ट होने की रिपोर्ट किया जाना जैसे सभी सुसंगत पहलुओं को ध्यान में रखते हुए नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा यांत्रिक रीति में उसके चयन को रद्द करना उचित नहीं कहा जा सकता और उसे कांस्टेबल के पद पर नियुक्त करने का आदेश देना न्यायोचित होगा ।

रविन्द्र कुमार बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 1

तुलनात्मक सारणी

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

[2024] 3 उम. नि. प.

जुलाई-सितंबर, 2024

क्र. सं.	निर्णय का नाम व तारीख	उम. नि. प.		ए. आई. आर. (एस. सी.)		एस. सी. सी.	
1	2	3		4		5	
1.	रविन्द्र कुमार **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (24 फरवरी, 2024)	[2024] 3	1	2024	–	(2024) 5	264
2.	बल्लू **उर्फ** बलराम **उर्फ** बालमुकुंद और एक अन्य **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (2 अप्रैल, 2024)		30		1678	–	–
3.	सुखपाल सिंह **बनाम** राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली (7 मई, 2024)		50		2724	–	–
4.	राजेन्द्र पुत्र रामदास कोल्हे **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (15 मई, 2024)		84		2682	–	–

1	2	3		4		5	
5.	सुरेन्द्र सिंह **बनाम** राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली) (3 जुलाई, 2024)	[2024] 3	113	2024	3220	(2024) 7	40
6.	धर्मेन्द्र कुमार **उर्फ** धम्मा **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (8 जुलाई, 2024)		135		4354	8	60
7.	पंजाब राज्य **बनाम** प्रताप सिंह वेरका (8 जुलाई, 2024)		179		3299	–	–
8.	लाल मोहम्मद मंजूर अंसारी **बनाम** गुजरात राज्य (8 जुलाई, 2024)		189		3596	7	733
9.	शिव प्रताप सिंह राणा **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य (8 जुलाई, 2024)		205		3485	8	313

[2024] 3 उम. नि. प. 1

रविन्द्र कुमार

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

[2012 की सिविल अपील सं. 5902]

24 फरवरी, 2024

न्यायमूर्ति जे. के. महेश्वरी और न्यायमूर्ति के. वी. विश्वनाथन

सेवा विधि – अपीलार्थी द्वारा कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया जाना – आवेदन करने के पांच दिन पश्चात् एक दांडिक मामले में उलझ जाना – न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया जाना – अपीलार्थी का चयन हो जाना और चयन के पश्चात् अपेक्षित दांडिक इतिवृत्त के संबंध में प्रस्तुत किए गए शपथपत्र में कभी कोई दांडिक मामला रजिस्ट्रीकृत न होने का उल्लेख किया जाना – सत्यापन के दौरान तात्विक जानकारी छिपाने और असत्य जानकारी देने के आधार पर उसका चयन रद्द किया जाना – अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय में रिट याचिका/विशेष अपील फाइल किया जाना – रिट याचिका/विशेष अपील खारिज कर दिया जाना – संधार्यता – यद्यपि तात्विक जानकारी छिपाने और असत्य जानकारी देने वाला व्यक्ति नियुक्ति के लिए उन्मुक्त अधिकार का दावा नहीं कर सकता, तो भी उसे उसके मामले पर मनमाने तौर पर विचार न करने का अधिकार है और नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा शक्ति का प्रयोग हर मामले के विशिष्ट तथ्यों पर विचार करते हुए वस्तुनिष्ठता से युक्तियुक्त रीति में किया जाना चाहिए और अपीलार्थी की ग्रामीण पृष्ठभूमि, पद के लिए आवेदन करते समय उसका इतिवृत्त निष्कलंक होने, दांडिक मामले में उसकी दोषमुक्ति और दोषमुक्ति के विरुद्ध राज्य द्वारा कोई अपील न किए जाने, चरित्र सत्यापन के दौरान थाना अधिकारी और पुलिस अधीक्षक द्वारा उसका चरित्र उत्कृष्ट होने की रिपोर्ट किया जाना जैसे सभी सुसंगत पहलुओं को

ध्यान में रखते हुए नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा यांत्रिक रीति में उसके चयन को रद्द करना उचित नहीं कहा जा सकता और उसे कांस्टेबल के पद पर नियुक्त करने का आदेश देना न्यायोचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी ने तारीख 12 फरवरी, 2004 को सिपाही के पद के लिए आवेदन किया । उसका इतिवृत्त निष्कलंक था । आवेदन प्रस्तुत करने के पांच दिन पश्चात् अर्थात् तारीख 7 फरवरी, 2004 को वह भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 324, 352 और 504 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक दांडिक मामले में उलझ गया, जिसके बारे में यह दावा किया गया कि यह एक मिथ्या मामला था । उसने लिखित परीक्षा और साक्षात्कार उत्तीर्ण किया । इससे पूर्व उसने शारीरिक दक्षता परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी । विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया । अपीलार्थी को, चयन किए जाने के पश्चात्, दांडिक पूर्ववृत्त, यदि कोई हो, का प्रकटन करते हुए एक शपथपत्र प्रस्तुत करना आवश्यक था । अपीलार्थी ने तारीख 30 अक्तूबर, 2004 को शपथपत्र प्रस्तुत किया, जिसमें उसने, अन्य बातों के साथ-साथ, यह कथन किया कि उसके विरुद्ध कभी भी कोई दांडिक मामला, संज्ञेय या असंज्ञेय, रजिस्ट्रीकृत नहीं किया गया है । इसके पश्चात्, उसे प्रशिक्षण के लिए रिपोर्ट करने के लिए कहा गया और जब उसने रिपोर्ट की, तो उसे इस आधार पर प्रशिक्षण के लिए नहीं भेजा गया कि चरित्र सत्यापन लंबित है । अपीलर्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए शपथपत्र में दांडिक मामलों के बारे में जानकारी छिपाने के आधार पर नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा उसका चयन रद्द कर दिया गया । अपीलार्थी ने रद्दकरण के आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय में रिट याचिका फाइल की । उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका को खारिज कर दिया गया । अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के समक्ष एक विशेष अपील फाइल की गई । खंड न्यायपीठ द्वारा विशेष अपील को खारिज कर दिया गया । अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए

अभिनिर्धारित – यद्यपि कोई व्यक्ति जिसने तात्विक जानकारी को छिपा लिया है, वह नियुक्ति के लिए उन्मुक्त अधिकार का दावा नहीं कर सकता है, किंतु उसे उसके साथ मनमाने ढंग से व्यवहार नहीं करने का अधिकार है । अधिकार का प्रयोग निष्पक्षता और तथ्यों को सम्यक् ध्यान में रखते हुए युक्तियुक्त रूप से किया जाना चाहिए । संक्षेप में सभी सुसंगत पहलुओं पर उचित विचार करने के पश्चात् अंतिम कार्रवाई वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित होनी चाहिए । उन कतिपय विशेष विशेषताओं को उपवर्णित करना आवश्यक है, जो प्रस्तुत मामले में है – अपीलकर्ता छोटे से गांव बागपर, डाकघर करवाना कटौड़ा, पुलिस थाना गौरी बाजार जिला देवरिया उ.प्र. का निवासी है । आवेदन की तारीख पर, कोई दांडिक मामला लंबित नहीं था और आवेदन पत्र में कोई बात छिपाई नहीं गई थी । यह दांडिक मामला तब रजिस्ट्रीकृत किया गया था जब उसकी आयु 21 वर्ष थी । इसमें कोई संदेह नहीं है कि सत्यापन शपथपत्र में के कईं स्तंभों में, उससे अलग-अलग क्रम परिवर्तन और संयोजनों में प्रश्न पूछे गए थे । वह गहरी दुविधा में रहा होगा क्योंकि उसे नौकरी खो देने की आसन्न संभावना थी । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि विद्वान् अपर महाधिवक्ता द्वारा निष्पक्ष और स्पष्ट रूप से उपलब्ध कराए गए सत्यापन दस्तावेजों से न्यायालय यह पाता है कि दांडिक मामले और उसके पश्चात् दोषमुक्त होने के पश्चात् सत्यापन रिपोर्ट में यह कहा गया था कि उसका चरित्र अच्छा है, उसके विरुद्ध कोई शिकायत नहीं पाई गई थी और उसकी सामान्य प्रतिष्ठा अच्छी थी । यही नहीं उसके अवस्थान का दौरा करने वाले व्यक्ति ने रिपोर्ट में उसके उज्ज्वल भविष्य की कामना भी की थी । गौरी बाजार पुलिस थाना के थाना अधिकारी, जिन्होनें रिपोर्ट की अन्तर्वस्तु को दोहराने के बाद पुलिस अधीक्षक को रिपोर्ट भेजी थी, ने मत व्यक्त किया था कि उसे दोषमुक्त कर दिया गया था और कोई अपील फाइल नहीं की गई थी । इसके अतिरिक्त, कोई अन्य मामला लंबित नहीं है और न ही अभ्यर्थी के विरुद्ध कोई मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया है । थाना अधिकारी ने प्रमाणित किया था कि अभ्यर्थी का चरित्र उत्कृष्ट और वह राज्य सरकार के अधीन सरकारी सेवा करने के योग्य है । उन्होंने पुलिस थाने की रिपोर्ट के साथ-साथ ग्राम प्रधान की रिपोर्ट और न्यायालय के दस्तावेजों

को भी संलग्न किया था । पुलिस अधीक्षक ने कमांडेट को लिखे अपने पत्र में रिपोर्ट का समर्थन किया और दोहराया कि अभ्यर्थी का चरित्र उत्कृष्ट है । यह परीक्षा करते हुए कि क्या प्राधिकारी द्वारा जांच के लिए अपनाई गई प्रक्रिया निष्पक्ष और युक्तियुक्त थी, न्यायालय यह पाता है कि तारीख 12 अप्रैल, 2005 के रद्द करने के आदेश में इस निर्णय के पहले भाग में उपवर्णित चरित्र सत्यापन प्रपत्र के खंड 4 में विहित आदेश का भी पालन नही किया गया है । अपीलार्थी नियुक्ति के लिए उपयुक्त था या नहीं, इस पर विचार करने के बजाय नियुक्ति प्राधिकारी ने यंत्रवत् रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि उसका चयन अनियमित और अवैध था, क्योंकि अपीलार्थी ने असत्य तथ्यों के साथ एक शपथपत्र प्रस्तुत किया था । न्यायालय यह पाता है कि तारीख 12 अप्रैल, 2005 का रद्द करने का आदेश न तो उचित है और न ही युक्तियुक्त । (पैरा 21, 29 और 30)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2023] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1379 :
पुलिस महानिदेशक, तमिलनाडु, मायलापुर बनाम **जे. रघुनीस** ; 27

[2023] (2023) 7 एस. सी. सी. 530 :
सतीश चंद्र यादव बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 26,29

[2022] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 532 :
पवन कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 24,27

[2019] (2019) 17 एस. सी. सी. 696 :
मोहम्मद इमरान बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य** ; 25

[2016] (2016) 8 एस. सी. सी. 471 : 16,20,21,
अवतार सिंह बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 22,23,24,26

[2011] (2011) 14 एस. सी. सी. 709 :
राम कुमार बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ; 23,29

[2011] (2011) 4 एस. सी. सी. 644 :
पुलिस आयुक्त और अन्य बनाम **संदीप कुमार** ; 22,27,29

[1970] (1970) 2 क्यू. बी. 114 :
मॉरिस बनाम **क्राउन ऑफिस** । 22

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2012 की सिविल अपील सं. 5902.

2005 की विशेष अपील सं. 896 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 29 अक्तूबर, 2010 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री पी. चौधरी, सौरव अजय गुप्ता, निशांत बिशनोई, सृष्टि प्रभाकर, अंकित चौधरी, आर. के. सिंह और निवेदित सिंह

प्रत्यर्थियों की ओर से सुश्री गरिमा प्रसाद, अपर महा-अधिवक्ता और सुश्री रुचिरा गोयल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति के. वी. विश्वनाथन ने दिया ।

न्या. विश्वनाथन – पुन: परेशान करने वाला प्रश्न आया है । क्या यह एक कठोर और निश्चित नियम है कि सभी परिस्थितियों में, सत्यापन प्रपत्र में किसी दांडिक मामले (जिसमें अभ्यर्थी को दोषमुक्त कर दिया जाता है) का प्रकटन न करना अभ्यर्थी के नियोजन के लिए घातक है ? हम ऐसा नहीं सोचते हैं और ऐसा होना भी नहीं चाहिए । सौभाग्य से, हमारे विचार का समर्थन करने के लिए हमारे पास विभिन्न न्यायिक निर्णय हैं । प्रत्येक मामला विशेष तथ्यों और परिस्थितियों को प्रदर्शित करेगा । हमने लागू पूर्व-निर्णयों का विश्लेषण करने का प्रयास किया है और उन मामलों की श्रृंखला का अनुसरण किया है, जो मौजूद तथ्यों से अत्यधिक समरूप हैं ।

मामले के तथ्य :

2. रविन्द्र कुमार (अपीलार्थी) ने तारीख 12 फरवरी, 2004 को सिपाही के पद के लिए आवेदन किया । उसका इतिवृत्त निष्कलंक था ।

आवेदन प्रस्तुत करने के पांच दिन पश्चात् अर्थात् तारीख 7 फरवरी, 2004 को वह भारतीय दंड संहिता, 1860 ("भारतीय दंड संहिता") की धारा 324, 352 और 504 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक दांडिक मामले में उलझ गया, जिसके बारे में यह दावा किया गया है कि यह एक मिथ्या मामला था । उसने लिखित परीक्षा और साक्षात्कार उत्तीर्ण किया । इससे पूर्व उसने शारीरिक दक्षता परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी ।

3. इसी बीच, दांडिक मामले ने एक दिलचस्प मोड़ ले लिया क्योंकि तारीख 13 सितंबर, 2004 के निर्णय द्वारा अपीलार्थी को दोषमुक्त कर दिया गया । उस दांडिक विचारण में, इत्तिलाकर्ता (अभि. सा. 1) श्रीकांत जो, अभियोजन पक्ष के अनुसार, अपीलार्थी और विजेंद्र, ईश्वर दयाल और राधे श्याम द्वारा अभिकथित रूप से कारित की गई क्षतियों के कारण घटना में अभिकथित रूप से क्षतिग्रस्त हो गया था, पक्षद्रोही हो गया । अभियोजन पक्ष के अनुसार, इत्तिला देने वाले का पुत्र, अभि. सा. 2 राम गुलाम, जिसके साथ अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभियुक्त पक्ष अभि. सा. 1 श्रीकांत के बीच-बचाव करने तक झगड़ा कर रहे थे और जिस पर अभिकथित रूप से शारीरिक आक्रमण किया गया था, भी पक्षद्रोही हो गया । राम गुलाम ने स्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया कि वह किसी भी अभियुक्त की शनाख्त नहीं कर सकता । साक्षियों ने भी यह कथन किया कि दरोगा जी (थाना अधिकारी) ने उनका कथन अभिलिखित नहीं किया था । प्रतिपरीक्षा में, उन्होनें यह भी कथन किया कि घटना के समय भारी भीड़ इकट्ठा हो गई थी और इसलिए वे हमलावरों की शनाख्त नहीं कर सके । जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 504 का संबंध है, जो शांति भंग करने को प्रकोपित करने के आशय से साशय अपमान करने के संबंध में है, दोनों पक्षकारों ने एक समझौता ज्ञापन फाइल किया, जिसे न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया । उपर्युक्त को देखते हुए, उन्हें सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया ।

4. अपीलार्थी को, चयन किए जाने के पश्चात्, दांडिक पूर्ववृत्त, यदि कोई हो, का प्रकटन करते हुए एक शपथपत्र प्रस्तुत करना आवश्यक था । अपीलार्थी ने तारीख 30 अक्तूबर, 2004 को शपथपत्र प्रस्तुत किया, जिसमें उसने, अन्य बातों के साथ-साथ, यह कथन किया कि उसके

विरुद्ध कभी भी कोई दांडिक मामला, संज्ञेय या असंज्ञेय, रजिस्ट्रीकृत नहीं किया गया है ।

5. इसके पश्चात्, उसे प्रशिक्षण के लिए रिपोर्ट करने के लिए कहा गया और जब उसने रिपोर्ट की, तो उसे इस आधार पर प्रशिक्षण के लिए नहीं भेजा गया कि चरित्र सत्यापन लंबित है । इसके पश्चात्, तारीख 12 अप्रैल, 2005 को उसे उसका चयन रद्द करते हुए निम्नलिखित पत्र दिया गया :–

> "यह सूचित करना है कि आपको परीक्षा के पश्चात् चयन समिति, 18वीं बटालियन पी. ए. सी., बरेली द्वारा भर्ती कांस्टेबल पी.ए.सी के पद पर चयनित किया गया । चयन के पश्चात्, आपने तारीख 30 अक्तूबर, 2004 का शपथपत्र प्रस्तुत किया, जिसमें आपने उल्लिखित किया है कि आपके विरुद्ध कभी कोई दांडिक मामला, संज्ञेय या असंज्ञेय, रजिस्ट्रीकृत नहीं किया गया है और कोई चालान तथा पुलिस अन्वेषण आपके विरुद्ध लंबित नहीं है । आपके गृह जिले देवरिया के पुलिस अधीक्षक से आपके चरित्र का सत्यापन कराने के पश्चात्, यह तथ्य सामने आया है कि आपके विरुद्ध पुलिस थाना, गौरी बाजार, जिला देवरिया में भारतीय दंड संहिता की धारा 324/504 और धारा 352 के अधीन अपराध सं. 95/04 रजिस्ट्रीकृत किया गया था, जिसमें तारीख 13 सितंबर, 2004 को आपको प्रश्नगत आरोप से उन्मोचित कर दिया गया था ।
>
> उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि आपने उपर्युक्त अपराध को छिपाया है और मिथ्या शपथपत्र फाइल किया है । इसलिए, मिथ्या शपथपत्र प्रस्तुत करने के कारण पी.ए.सी में भर्ती कांस्टेबल के पद पर आपका चयन तद्द्वारा रद्द किया जाता है ।"

6. विभाग का पक्षकथन यह था कि तारीख 20 जनवरी, 2004 की भर्ती अधिसूचना के खंड 9 के अधीन, यदि अभ्यर्थी द्वारा शपथपत्र में कोई तथ्य छिपाया जाता है, तो उसकी अभ्यर्थिता रद्द किए जाने के लिए दायी है । खंड 9 को सुसंगत होने के कारण, यहां नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"9. चरित्र सत्यापन :

उपर्युक्त योग्य पाए गए सभी अभ्यर्थियों का चरित्र सत्यापन उस समय प्रचलित सरकारी नियमों के अनुसार किया जाएगा । चरित्र सत्यापन में, पात्र अभ्यर्थियों को एक सार्वजनिक नोटरी द्वारा सम्यक् रूप से सत्यापित गैर-न्यायिक स्टाम्प पेपर पर विहित प्रारूप में एक शपथपत्र प्रस्तुत करना होगा । शपथपत्र का प्रारूप चयन समिति द्वारा साक्षात्कार में अंतिम रूप से चयनित अभ्यर्थियों को उपलब्ध कराया जाएगा । यदि चरित्र सत्यापन या किसी अन्य माध्यम से यह पाया जाता है कि अभ्यर्थी द्वारा शपथपत्र द्वारा तथ्यों को छिपाया गया है, तो न केवल अभ्यर्थी का चयन रद्द किया जाएगा, बल्कि उसके विरुद्ध विधिक कार्रवाई भी की जा सकती है । शपथपत्र में असत्य तथ्यों का उल्लेख किए जाने या विहित आवश्यक जानकारी प्रदान नहीं करने के कारण चयन रद्द होने की स्थिति में किसी भी अभ्यर्थी/व्यक्ति/संगठन को किसी भी न्यायालय में विरोध करने का अधिकार नहीं होगा ।"

7. शपथपत्र के कई खंड अर्थात् खंड 4, 5, 6, 7 और 11 जिन्हें तारीख 30 अक्तूबर, 2004 को सत्यापित किया गया है, निम्नानुसार हैं :–

"4. यह कि मेरी सर्वोत्तम जानकारी में, मेरे विरुद्ध कभी कोई दांडिक मामला/विषय (संज्ञेय या असंज्ञेय) रजिस्ट्रीकृत नहीं किया गया है, न ही पुलिस ने मुझे ऐसे किसी दांडिक मामले में चालान किया है, न ही मेरे विरुद्ध कोई पुलिस अन्वेषण लंबित है । नहीं

5. यह कि मुझे कभी भी किसी दांडिक मामले (संज्ञेय या असंज्ञेय) में गिरफ्तार नहीं किया गया है और न ही मैनें कभी ऐसे किसी दांडिक मामले में अभ्यर्पण किया है । नहीं

6. यह कि जो दांडिक मामले मेरे विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत किए गए हैं या जिनमें मेरा चालान किया गया है या जो मेरे विरुद्ध न्यायालय में पुलिस द्वारा अन्वेषण के अधीन लंबित थे/हैं, उनका विवरण इस प्रकार है (यदि जानकारी शून्य है तो 'शून्य' लिखें)

7. यह कि किसी भी न्यायालय में मेरे विरुद्ध लंबित दांडिक मामलों का विवरण और जिसमें मुझे दंडित किया गया था या दोषमुक्त कर दिया गया था या उन्मोचित कर दिया गया था, निम्नानुसार हैं (यदि जानकारी शून्य है तो 'शून्य' लिखें) शून्य

11. यह कि यदि आवेदन में उल्लिखित कुछ भी असत्य पाया जाता है या तथ्यों को छिपाया जाता है और यदि मुझे तुरंत उत्तर प्रदेश पुलिस सेवा से बिना शर्त पर्यवसित कर दिया जाता है और कानूनी दंड भी दिया जाता है, तो यह मुझे स्वीकार होगा ।"

8. इसी बीच, पुलिस सत्यापन अग्रसर हुआ । तारीख 9 दिसंबर, 2004 को पुलिस थाना, गौरी बाजार, जिला देवरिया की रिपोर्ट में कहा गया जबकि अभ्यर्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 324, 352 और 504 के अधीन 2004 के अपराध सं 95 में एक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया था, किंतु अभ्यर्थी को दोषमुक्त कर दिया गया था और दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध कोई अपील फाइल नहीं की गई थी । इसके अतिरिक्त, किसी भी न्यायालय में कोई अन्य मामला लंबित नहीं था और न ही अभ्यर्थी के विरुद्ध पुलिस थाने में कोई मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया था । थाना अधिकारी ने आगे इस प्रकार उल्लिखित किया :–

"अभ्यर्थी का चरित्र उत्कृष्ट है । मेरी सम्मति के अनुसार अभ्यर्थी राज्य सरकार के अधीन सरकारी सेवा करने का पात्र है ।"

इसके अतिरिक्त, ग्राम प्रधान ने भी उसके द्वारा जारी किए गए चरित्र प्रमाण पत्र में अपीलार्थी के "उत्कृष्ट" चरित्र का समर्थन किया । ग्राम प्रधान द्वारा जारी चरित्र प्रमाण पत्र इस प्रकार है –

'चरित्र प्रमाणपत्र

यह प्रमाणित किया जाता है कि रविन्द्र कुमार पुत्र स्वर्गीय परदेसी प्रसाद, गांव बागपर, डाकघर कटोड़ा, पुलिस थाना गौरी बाजार, जिला देवरिया (उत्तर प्रदेश) का स्थायी निवासी है । मैं इसे अच्छी तरह से जानता और पहचानता हूं । उसका चरित्र उत्कृष्ट है । मैं उसके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं ।

9. इसके पश्चात्, तारीख 10 दिसंबर, 2004 को, देवरिया के पुलिस अधीक्षक ने पुलिस थाना, गौरी बाजार, जिला देवरिया की रिपोर्ट पर ध्यान देते हुए, कमांडेंट, 8वीं बटालियन, पी.ए.सी, बरेली को सूचित किया कि उनकी राय में, अभ्यर्थी राज्य सरकार के अधीन सरकारी सेवा करने योग्य है । तारीख 10 दिसंबर, 2004 के पत्र के सुसंगत भाग को निम्नानुसार उद्धृत किया जाता है :–

> ".....अभ्यर्थी का चरित्र उत्कृष्ट है । इसलिए अभ्यर्थी श्री रविन्द्र कुमार पुत्र श्री परदेसी राम, निवासी बागपर, पोस्ट कठौड़ा, पुलिस थाना गौरी बाजार, जिला देवरिया राज्य सरकार के अधीन सरकारी सेवा करने के लिए पात्र हैं ।"

10. उत्तर प्रदेश राज्य ने तारीख 12 अप्रैल, 2005 के रद्दकरण पत्र के समर्थन में पुलिस महानिरीक्षक, पी.ए.सी. की ओर से कमांडेट, 8वीं बटालियन, पी.ए.सी. को लिखे गए तारीख 31 दिसंबर, 2004 के पत्र का अवलंब लिया, जिसमें कहा गया था कि अपीलार्थी और दो अन्य लोगों के मामलों के संबंध में, जिन्हें चरित्र सत्यापन के दौरान दांडिक मामले में दोषमुक्त पाया गया था और शपथपत्र में उन मामलों के तथ्य का उल्लेख नहीं किया था, यह सुनिश्चित किया जाना था कि उन अभ्यर्थियों के विरुद्ध असत्य शपथपत्र प्रस्तुत करने के संबंध में नियमों के अनुसार कार्यवाही की जाए । राज्य ने पी.ए.सी. बटालियन, उत्तर प्रदेश के सभी कमांडेटों को पुलिस महानिरीक्षक द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2005 के एक पत्र को भी अभिलेख पर प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया था कि असत्य शपथपत्र प्रस्तुत करने के संबंध में जारी किए गए अनुदेशों के अनुसार कार्यवाही की जाए । जिन अभ्यर्थियों ने शपथपत्र में अपने विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत आरोपों से संबंधित तथ्यों का उल्लेख किया था, उनके मामलों में अपने स्वविवेक और सरकारी आदेशों के अनुसार कार्यवाही की जाए ।

11. राज्य ने अभिलेख पर "चरित्र सत्यापन का प्रपत्र" भी रखा, जिसमें यह उपवर्णित किया गया था कि किसी अभ्यर्थी की नियुक्ति से पूर्व चरित्र और पूर्ववृत्त को सत्यापित करना आवश्यक था । यदि पात्र पाया जाता है तो सत्यापन प्राधिकारी को सीधे रिपोर्ट करना था । यदि

अभ्यर्थी रिपोर्ट के अनुसार अयोग्य है तो रिपोर्ट जिला मजिस्ट्रेट को भेजी जानी थी । जिला मजिस्ट्रेट को अभ्यर्थी को बुलाना था और उसका कथन अभिलिखित करना था और अपनी राय लिखनी थी कि अभ्यर्थी के विषय में उनका क्या विचार है और अभ्यर्थी का कथन भी भेजना था । संलग्न टिप्पण में, यह भी उपवर्णित था कि यहां तक कि दोषसिद्धि में भी अच्छे चरित्र का प्रमाण पत्र देने से इंकार करना आवश्यक नहीं है । दोषसिद्धि की परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए और यदि उनमें कोई नैतिक अधमता अंतर्वलित नहीं है या वे हिंसा के अपराधों से अथवा किसी ऐसे आंदोलन से संबंध नहीं हैं जिसका उद्देश्य भारत संघ में विधि द्वारा स्थापित सरकार को हिंसक तरीकों से उखाड़ फेंकना है, तो केवल दोषसिद्धि को अयोग्यता नहीं माना जाना चाहिए । चरित्र सत्यापन के प्रारूप के खंड 4 में भी इसका उल्लेख निम्नानुसार किया गया है :–

> "4. यह भी अनुरोध किया जाता है कि सरकारी नौकरियों के लिए अभ्यर्थियों के आचरण के संबंध में निम्नलिखित सामान्य नियमों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए ।
>
> सीधी नियुक्ति के लिए अभ्यर्थी का चरित्र ऐसा होना चाहिए कि वह उस सेवा या पद में रोजगार के लिए हर तरह से उपयुक्त हो, जिसमें उसे नियुक्त किया जाना है । यह नियुक्ति प्राधिकारी का कर्तव्य होगा कि वह इस बिन्दु पर स्वयं को संतुष्ट करे ।"

उच्च न्यायालय में कार्यवाही –

12. चयन रद्द करने के तारीख 12 अप्रैल, 2005 के पत्र से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष 2005 की सिविल रिट याचिका सं. 39418 फाइल की । अपीलार्थी ने तर्क दिया कि उसकी ओर से जानबूझकर कुछ छिपाया नहीं गया था क्योंकि उसे दांडिक मामले में दोषमुक्त कर दिया गया है । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 16 मई, 2005 के निर्णय द्वारा रिट याचिका को यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया गया कि याची ने प्ररूप भरते समय एक दांडिक मामले में अपनी संलिप्तता के संबंध में सारवान्

जानकारी को छिपाया है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि दांडिक मामले में उसकी संलिप्तता की पश्चात् दोषमुक्ति उसे इस तथ्य से मुक्त नहीं करेगी कि उसने तात्विक जानकारी को छिपा लिया था ।

13. अपीलार्थी ने एकल न्यायाधीश के निर्णय़ से व्यथित होकर 2005 की विशेष अपील सं. 896 फाइल की । खंड न्यायपीठ ने तारीख 29 अक्तूबर, 2020 के आक्षेपित निर्णय द्वारा विशेष अपील को यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि यदि कोई व्यक्ति नामांकन के समय असत्य शपथपत्र की शपथ लेता है, तो वह अनुशासित सेवा में नामांकित होने के योग्य नहीं है । इसके अतिरिक्त यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि असत्य शपथ की शपथ लेने का कार्य स्वयमेव एक ऐसा कार्य है, जो व्यक्ति के आचरण और चरित्र को बताता है । नियोक्ता से सारवान् जानकारी को छिपाना मामले में पश्चात्वर्ती दोषमुक्ति से सही नहीं साबित होता है । इसके अतिरिक्त, नियुक्ति प्राधिकारी को दांडिक मामले में आरोपों, विचारण में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य और उन अभिकथनों के विवरण में जाने की आवश्यकता नहीं थी जिनके लिए दांडिक न्यायालय ने अभ्यर्थी को दोषी ठहराया था या दोषमुक्त कर दिया था ।

14. अपीलार्थी तारीख 29 अक्तूबर, 2010 के निर्णय से व्यथित होकर वर्तमान अपील में हमारे समक्ष आया है ।

दलीलें

15. हमारे समक्ष अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री प्रेमाशीष चौधरी ने दलील दी कि कोई जानबूझकर छिपाने की बात नहीं थी; यह कि तारीख 12 फरवरी, 2004 को आवेदन प्रस्तुत करने के समय, अपीलार्थी के विरुद्ध कोई दांडिक मामला लंबित नहीं था; और उस प्रक्रम पर कोई शपथपत्र प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी । अपीलार्थी को दांडिक मामले में तारीख 13 सितंबर, 2004 अर्थात् तारीख 30 अक्तूबर, 2004 को अपना शपथपत्र फाइल करने से बहुत पूर्व ही दोषमुक्त कर दिया गया था । चूंकि शपथपत्र फाइल करने के समय कोई दांडिक मामला लंबित नहीं था, इसलिए अपीलार्थी को पूर्ण विश्वास था कि प्रकटन करने

की कोई आवश्यकता नहीं है । इसके अतिरिक्त, यह दलील दी गई कि प्रवंचित करने का कोई आशय नहीं था ।

16. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान् अपर महाधिवक्ता सुश्री गरिमा प्रसाद और विद्वान् स्थायी काउंसेल सुश्री रूचिरा गोयल ने दलील दी कि अपीलार्थी ने अपने शपथपत्र के खंड 4, 5, 6 और 7 में असत्य कथन किया है । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी के साथ-साथ दो अन्य व्यक्तियों, जिनके विषय में पाया गया था कि उन्होंने असत्य कथन किया था, पर भी रद्दकरण की कार्यवाही की गई है । इसके अतिरिक्त, वर्तमान मामला **अवतार सिंह** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय विशिष्ट रूप से पैरा 38.1, 38.2, 38.3 और 38.11 द्वारा राज्य के पक्ष में है ।

विचार के लिए प्रश्न –

17. उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, विचार के लिए जो प्रश्न उद्भूत होते हैं, वे हैं :–

i. क्या राज्य द्वारा अपने तारीख 12 अप्रैल, 2005 के आदेश के अनुसार अपीलार्थी के चयन को रद्द करना न्यायानुमत था ?

ii. अपीलार्थी किस अनुतोष, यदि कोई हो, का हकदार है?

चर्चा और निष्कर्ष :

18. जैसाकि तथ्यों से प्रकट होता है, स्वीकृत रूप से तारीख 12 फरवरी, 2004 को, जब अपीलार्थी ने कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया था, तब कोई दांडिक मामला रजिस्ट्रीकृत या लंबित नहीं था । आवेदन प्रस्तुत करने के पांच दिन पश्चात्, इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह एक दांडिक मामले में उलझ गया था, जिसमें बाद में विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 13 सितंबर, 2004 के आदेश द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था और उसके विरुद्ध कोई अपील फाइल नहीं की गई थी । इस बात में कोई विवाद नहीं है कि तारीख 20 जनवरी, 2004 की भर्ती अधिसूचना के खंड 9 के अधीन उसके लिए चयन समिति द्वारा

[1] (2016) 8 एस. सी. सी. 471.

दिए गए रूप विधान में एक शपथपत्र प्रस्तुत करना आवश्यक था । खंड 9 में यह भी विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि यदि यह पाया जाता है कि शपथपत्र में तथ्यों को छिपाया जाता है तो अभ्यर्थी का चयन रद्द होने के लिए दायी है । जैसा कि शपथपत्र के पैरा 4, 5, 6 और 7 से प्रदर्शित होता है, सूचना की (हालांकि कुछ हद तक दोहराव वाली) ईप्सा की गई थी । इसमें अभ्यर्थी ऐसे किसी भी दांडिक मामले को प्रकटन करने के लिए आबद्ध था, जो उसके विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत किया गया था; अतीत में की गई कोई गिरफ्तारी, लंबित मामलों का विवरण और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि दोषमुक्त होने के विवरण की भी ईप्सा की गई थी । यह भी एक निर्विवाद तथ्य है कि अपीलार्थी ने इनमें से प्रत्येक प्रश्न के लिए 'नहीं' कहा । अपीलार्थी का स्पष्टीकरण है कि चूंकि उसे दोषमुक्त कर दिया गया था, इसलिए उसे यह सद्भावी विश्वास था कि वह केवल किसी लंबित कार्यवाही का विवरण देने के लिए आबद्ध था ।

19. राज्य ने यह स्थिति ली कि भर्ती अधिसूचना का खंड 9 और शपथपत्र में प्रश्न अत्यंत स्पष्ट थे और छिपाव होने के कारण रद्दकरण पूर्ण तरह से न्यायानुमत था ।

20. इस विवाद्यक पर विधि को **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा स्थिर किया गया है । पैरा 34, 35, 36 और 38, जिनसे निष्कर्ष उपवर्णित हैं, नीचे उद्धृत किए जाते हैं :–

> "34. इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि चरित्र और पूर्ववृत्त का सत्यापन उपयुक्तता का आकलन करने के लिए महत्वपूर्ण मानदंडों में से एक है और नियोक्ता के पास यह स्वतंत्रता है कि पदधारी के पूर्ववृत्तों का न्यायनिर्णयन करे, किंतु अंतिम कार्यवाही <u>सभी सुसंगत पहलुओं पर सम्यक् विचार करने पर वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित होनी चाहिए ।</u>
>
> 35. "सारवान्" जानकारी को छिपाना यह पूर्वानुमान है कि जो छिपाया जा रहा है वह तात्विक है, न कि प्रत्येक तकनीकी या

तुच्छ मामला । नियोक्ता को अभ्यर्थिता रद्द करने या कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त करने के लिए शक्तियों का प्रयोग करते हुए नियमों/अनुदेशों, यदि कोई हो, पर उचित विचार करते हुए कार्य करना होगा । यद्यपि एक व्यक्ति जिसने सारवान् जानकारी को छिपा दिया है, वह नियुक्ति या सेवा में निरंतरता के लिए निरकुंश अधिकार का दावा नहीं कर सकता है, किंतु उससे मनमाने ढंग से व्यवहार नहीं करने का अधिकार है और मामलों के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए निष्पक्षता के साथ युक्तियुक्त रूप से शक्ति का प्रयोग करना चाहिए ।

36. किस मानदंड को लागू किया जाना है, यद पद की प्रकृति पर निर्भर करता है, न केवल वर्दीधारी सेवाओं के लिए उच्च पद की सभी सेवाओं के लिए अधिक कठोर मानदंड अंतर्वलित होंगे । निम्नतर पदों के लिए जो संवेदनशील नहीं हैं, कर्तव्यों की प्रकृति, उपयुक्तता पर छिपाव के प्रभाव पर संबंधित प्राधिकारियों को पद/कर्तव्यों/सेवाओं की प्रकृति पर विचार किया जाना चाहिए और विभिन्न पहलुओं पर सम्यक् रूप से विचार करने पर शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

38. हमने विभिन्न विनिश्चयों को देखा है और जहां तक सम्भव हो, उनको स्पष्ट करने/सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश की है । पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए हम अपने निष्कर्ष का सारांश इस प्रकार देते हैं :

38.1 किसी अभ्यर्थी द्वारा दोषसिद्धि, दोषमुक्ति या गिरफ्तारी या किसी दांडिक मामले के लंबित होने के बारे में नियोक्ता को दी गई जानकारी, चाहे वह सेवा में आने से पूर्व हो या बाद में सही होनी चाहिए और आवश्यक जानकारी का कोई छिपाव या असत्य उल्लेख नहीं होना चाहिए ।

38.2 असत्य जानकारी देने के लिए सेवाओं की समाप्ति या अभ्यर्थिता को रद्दकरण का आदेश पारित करते समय, नियोक्ता ऐसी जानकारी देते समय मामले की विशेष परिस्थितियों, यदि कोई हों, पर ध्यान दे सकता है ।

38.3 नियोक्ता विनिश्चय करते समय कर्मचारी पर लागू सरकारी आदेशों/अनुदेशों/नियमों को ध्यान में रखेगा ।

38.4 यदि किसी दांडिक मामले में संलिप्त होने का छिपाव या असत्य जानकारी दी जाती है, जहां आवेदन/सत्यापन प्रपत्र भरने से पूर्व ही दोषसिद्धि या दोषमुक्ति अभिलिखित की जा चुकी है और ऐसा तथ्य बाद में नियोक्ता के संज्ञान में आता है, तो मामले के लिए समुचित निम्नलिखित में से किसी का अवलंबन लिया जा सकता है :

38.4.1 किसी तुच्छ प्रकृति के मामले में जिसमें दोषसिद्धि अभिलिखित की गई थी, जैसे कि युवा आयु में नारे लगाना या किसी छोटे से अपराध के लिए जिसका खुलासा होने पर कोई पदधारी विचाराधीन पद के लिए अयोग्य नहीं होता, नियोक्ता अपने विवेकानुसार तथ्य के इस तरह के छिपाव या असत्य जानकारी की चूक को माफ करके अनदेखी कर सकता है ।

38.4.2 जहां दोषसिद्धि ऐसे मामले में अभिलिखित की गई है, जो तुच्छ प्रकृति का नहीं है वहां नियोक्ता कर्मचारी की अभ्यर्थिता को रद्द कर सकता है या उसकी सेवाओं को समाप्त कर सकता है ।

38.4.3 यदि नैतिक अधमता या जघन्य/गंभीर प्रकृति के अपराध से जुड़े मामले में तकनीकी आधार पर पहले ही दोषमुक्ति अभिलिखित की जा चुकी है और यह स्पष्ट दोषमुक्ति का मामला नहीं है, या युक्तियुक्त संदेह का लाभ दिया गया है, तो <u>नियोक्ता पूर्ववृत्त के बारे में उपलब्ध सभी प्रासंगिक तथ्यों पर विचार कर सकता है, और कर्मचारी के बने रहने के बारे में समुचित विनिश्चय कर सकता है ।</u>

38.5 ऐसे मामले में जहां कर्मचारी ने किसी समाप्त दांडिक मामले की सच्चाई से घोषणा की है, नियोक्ता को अभी भी पूर्ववृत्त पर विचार करने का अधिकार है और अभ्यर्थी को नियुक्त करने के लिए विवश नहीं किया जा सकता है ।

38.6 यदि तुच्छ प्रकृति के दांडिक मामले के लंबित होने के संबंध में चरित्र सत्यापन प्रपत्र में तथ्य को सच्चाई से घोषित किया गया है, तो नियोक्ता, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अपने विवेक से, ऐसे मामले के निर्णय के अधीन अभ्यर्थी की नियुक्ति कर सकता है ।

38.7 कई लंबित मामलों के संबंध में तथ्य को जानबूझकर छिपाने के मामले में ऐसी झूठी जानकारी अपने आप में महत्वपूर्ण हो जाएगी और नियोक्ता अभ्यर्थिता को रद्द करने या सेवाओं को समाप्त करने के लिए समुचित आदेश पारित कर सकता है क्योंकि ऐसे किसी व्यक्ति की नियुक्ति, जिसके विरुद्ध बहुत सारे दांडिक मामले लंबित हैं, उचित नहीं हो सकती है ।

38.8 यदि दांडिक मामला लंबित था किंतु प्ररूप भरते समय अभ्यर्थी को इसकी जानकारी नहीं थी, तो भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है और नियुक्ति प्राधिकारी अपराध की गंभीरता पर विचार करने के पश्चात् विनिश्चय करेगा ।

38.9 यदि कर्मचारी की सेवा में पुष्टि हो जाती है, तो छिपाव या सत्यापन प्रपत्र में असत्य जानकारी प्रस्तुत करने के आधार पर सेवा समाप्ति/निष्कासन या पदच्युति का आदेश पारित करने से पूर्व विभागीय जांच करना आवश्यक होगा ।

38.10 छिपाव या असत्य जानकारी का अवधारण करने के लिए प्रमाणन/सत्यापन प्रपत्र विनिर्दिष्ट होना चाहिए, अस्पष्ट नहीं होना चाहिए । केवल ऐसी जानकारी का प्रकटन किया जाना चाहिए जिसका विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख किया जाना आवश्यक था । यदि ऐसी सूचना जो मांगी नहीं गई है, किंतु सुसंगत है, नियोक्ता के ज्ञान में आ जाती है तो उपयुक्तता के प्रश्न पर विचार करते समय उस पर वस्तुनिष्ठ रूप से विचार किया जा सकता है । यद्यपि, ऐसे मामलों में छिपाव या असत्य जानकारी प्रस्तुत करने के आधार पर कार्रवाई नहीं की जा सकती है क्योंकि इस तथ्य के बारे में पूछा भी नहीं गया था ।

38.11. इससे पूर्व कि किसी व्यक्ति को सत्य के गोपन या असत्य के सुझाव का दोषी ठहराया जाए, उसे तथ्य का ज्ञान अवश्य होना चाहिए ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

21. जैसा कि **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले से स्पष्ट होता है, स्पष्ट रूप से यह अधिकथित किया गया है कि [यद्यपि कोई व्यक्ति जिसने तात्विक जानकारी को छिपा लिया है, वह नियुक्ति के लिए उन्मुक्त अधिकार का दावा नहीं कर सकता है, किंतु उसे उसके साथ मनमाने ढंग से व्यवहार नहीं करने का अधिकार है । अधिकार का प्रयोग निष्पक्षता और तथ्यों को सम्यक् ध्यान में रखते हुए युक्तियुक्त रूप से किया जाना चाहिए । संक्षेप में, सभी सुसंगत पहलुओं पर उचित विचार करने के पश्चात् अंतिम कार्रवाई वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित होनी चाहिए ।]

22. **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में **पुलिस आयुक्त और अन्य** बनाम **संदीप कुमार**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय को भी उल्लिखित किया गया । **संदीप कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय ने विक्टर ह्यागो के उपन्यास लेस मिजरेबल्स में "जीन वाल्जियन" चरित्र की कहानी को प्रस्तुत किया, जिसमें उस चरित्र को अपने भूखे कुटुंब के लिए रोटी चुराने के लिए चोर के रूप में चिह्नित किया गया था । इसमें **मॉरिस** बनाम **क्राउन ऑफिस**[2] वाले मामले में लॉर्ड डेनिंग के उत्कृष्ट निर्णय पर भी चर्चा की गई और निष्कर्ष इस प्रकार दिया गया :–

"10.....हमारी राय में, हमें उसी बुद्धिमत्ता को प्रदर्शित करना चाहिए जो लॉर्ड डेनिंग ने प्रदर्शित की थी ।

11. जैसा कि पहले ही ऊपर मत व्यक्त किया गया है, युवा प्राय: अविवेकी होते हैं, जिन्हें अक्सर उपमर्जित कर दिया जाता है ।

---

[1] (2011) 4 एस. सी. सी. 644.

[2] (1970) 2 क्यू. बी. 114.

12. यह सत्य है कि आवेदन पत्र में प्रत्यर्थी ने यह उल्लेख नहीं किया कि वह भारतीय दंड संहिता की धारा 325/34 के अधीन एक दांडिक मामले में अंतर्वलित था । संभवत: उन्होनें इस भय से इसका उल्लेख नहीं किया कि अगर उन्होनें ऐसा किया तो स्वत: ही अयोग्य हो जाएंगे । किसी भी स्थिति में, यह हत्या, डकैती या बलात्कार जैसा गंभीर अपराध नहीं था और इसलिए इस मामले में अधिक उदार दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए ।"

इसके पश्चात् **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में **संदीप कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

"24.....इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि छिपाव उस मामले से संबंधित है जब संदीप कुमार की आयु लगभग 20 वर्ष थी । वह युवा था और ऐसी आयु में लोग प्राय: अविवेकी होते हैं और इस प्रकार की अविवेक को माफ किया जा सकता है । आधुनिक दृष्टिकोण किसी व्यक्ति को जीवन भर अपराधी घोषित करने के बजाय उसे सुधारने का होना चाहिए । [मॉरिस **बनाम** क्राउन ऑफिस,(1970) 2 क्यू.बी. 114:(1970) 2 डब्ल्यू.एल.आर. 792 (सी.ए.)] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया कि युवा लोग कोई साधारण अपराधी नहीं है । उनमें कोई हिंसा, बेईमानी या बुराई नहीं है । वे वेल्श भाषा को संरक्षित करने का प्रयास कर रहे थे । यद्यपि उन्होंने गलत किया है किंतु हमें उन पर दया दिखानी चाहिए और उन्हें अपनी पढ़ाई, अपने माता-पिता के पास वापस जाने और अच्छे पाठ्यक्रम को जारी रखने की अनुज्ञात किया गया ।"

23. **राम कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में एक अन्य मामले का उल्लेख किया गया था और जिसकी **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में चर्चा की गई थी, जो लगभग समान तथ्यों से उद्भूत हुआ था और सत्यापन प्रपत्र में इसी प्रकार के खंड का

[1] (2011) 14 एस. सी. सी. 709.

अर्थान्वयन करते हुए, इस न्यायालय ने अनुतोष प्रदान करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :–

"9. हमने "सरकारी सेवकों की उनकी प्रथम नियुक्ति से पूर्व चरित्र और पूर्ववृत्त का सत्यापन" विषय पर तारीख 28 अप्रैल, 1958 के सरकारी आदेश को ध्यानपूर्वक पढ़ा है और सरकारी आदेश में उल्लेख किया गया है कि राज्यपाल द्वारा पिछले सभी अनुदेशों को अधिक्रमण करते हुए निम्नलिखित अनुदेश अधिकथित किए हैं :-

"राज्य सरकार के अधीन नियुक्ति के लिए अभ्यर्थी के चरित्र के विषय में नियम इस प्रकार बने रहेंगे :

प्रत्यक्ष नियुक्ति के लिए अभ्यर्थी का चरित्र ऐसा होना चाहिए कि वह उस सेवा या पद में नियोजन के लिए हर तरह से उपयुक्त हो, जिसमें उसे नियुक्त किया जाना है । यह नियुक्ति प्राधिकारी का कर्तव्य होगा कि वह इस बिन्दु पर स्वयं को संतुष्ट करे ।

*** *** ***

12. अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के तारीख 18 जुलाई, 2002 के आदेश को पढ़ने पर यह दर्शित होता है कि न्यायालय के समक्ष परीक्षा किए गए एकमात्र साक्षी, अभि.सा. 1, श्री अखिलेश कुमार ने न्यायालय के समक्ष अभिसाक्ष्य दिया था कि तारीख 2 दिसंबर, 2000 को शाम 4 बजे बच्चे झगड़ रहे थे और उस समय अपीलार्थी शैलेंद्र और अजय कुमार अन्य पड़ोसियों के साथ वहां पहुंच गए थे और भीड़ में से किसी ने गालियां दी और हाथापाई में अखिलेश कुमार जब वह गिर गया था और उसका सिर ईंट के चबूतरे से टकरा गया था तो क्षतिग्रस्त हो गया और अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा उसे किसी भी धारदार हथियार से नहीं पीटा गया था । अपीलार्थी के विरुद्ध किसी अन्य साक्षी के अभाव में, अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की

धारा 323/34/504 के अधीन आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । इन तथ्यों के आधार पर नियुक्ति प्राधिकारी के लिए यह दृष्टिकोण अपनाना बिल्कुल भी संभव नहीं था कि अपीलार्थी पुलिस कांस्टेबल के पद पर नियुक्ति के लिए उपयुक्त नहीं था ।

13. अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट का तारीख 18 जुलाई, 2002 का आदेश जसवंत नगर पुलिस थाने की तारीख 15 जनवरी, 2007 की रिपोर्ट के साथ ज्येष्ठ पुलिस अधीक्षक, गाजियाबाद को भेजा गया था, किंतु ज्येष्ठ पुलिस अधीक्षक, गाजियाबाद के तारीख 8 अगस्त, 2007 के आदेश से ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या अपीलार्थी सेवा में या कांस्टेबल के पद के लिए नियुक्ति के लिए उपयुक्त था या नहीं, जिस पर उसे नियुक्त किया गया था और उन्होंने केवल यह अभिनिर्धारित किया है कि अपीलार्थी का चयन अवैध और अनियमित था क्योंकि उसने सत्यापन सूची के प्ररूप में अपने शपथपत्र में यह प्रस्तुत नहीं किया था कि उसके विरुद्ध दांडिक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया है ।

14. जैसाकि तारीख 28 अप्रैल, 1958 के सरकारी आदेश में दिए गए अनुदेशों में उल्लेख किया गया है, नियुक्ति प्राधिकारी के रूप में ज्येष्ठ पुलिस अधीक्षक, गाजियाबाद का यह कर्तव्य था कि वे इस बिन्दु पर स्वयं का समाधान करें कि क्या अपीलार्थी छिपाव की प्रकृति और दांडिक मामले की प्रकृति के संदर्भ में कांस्टेबल के पद पर नियुक्ति के लिए उपयुक्त था । यह विचार करने के बजाय कि क्या अपीलार्थी पुरुष कांस्टेबल के पद पर नियुक्ति के लिए उपयुक्त था, नियुक्ति प्राधिकारी ने यांत्रिक रूप से अभिनिर्धारित किया कि उसका चयन अनियमित और अवैध था क्योंकि अपीलार्थी ने भर्ती के समय असत्य तथ्यों का उल्लेख करते हुए एक शपथपत्र प्रस्तुत किया था ।

*** *** ***

17. पूर्वोक्त कारणों से, हम अपील को मंजूर करते हैं, विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश और खण्ड न्यायपीठ के आक्षेपित आदेश को अपास्त करते हैं और अपीलार्थी की रिट

याचिका को मंजूर करते हैं और ज्येष्ठ पुलिस अधीक्षक, गाजियाबाद के तारीख 8 अगस्त, 2007 के आदेश को रद्द करते हैं । अपीलार्थी को आज से दो माह की अवधि के भीतर सेवा में वापस ले लिया जाएगा, किंतु वह सेवा से बाहर रहने की अवधि के लिए किसी भी पिछले वेतन का हकदार नहीं होगा । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं होगा ।"

राम कुमार (उपर्युक्त) वाला मामला भी कांस्टेबल के पद पर चयन को रद्द करने का मामला था ।

24. हाल ही में **पवन कुमार** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में जो रेलवे सुरक्षा बल में कांस्टेबल के पद पर नियुक्ति और सत्यापन प्ररूप में कथित छिपाव के कारण उन्मोचन आदेश को अपास्त करने से संबंधित था, इस न्यायालय ने **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले पर विचार करने के पश्चात् निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :–

"11. इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि चयन प्रक्रिया में भाग लेने का आशय रखने वाले अभ्यर्थी को हमेशा सेवा में सम्मिलित होने से पूर्व और बाद में सत्यापन/प्रमाणन प्रपत्र में अपने चरित्र और पूर्ववृत्त से संबंधित सही जानकारी प्रस्तुत करनी होती है । यह भी उतना ही सत्य है कि जिस व्यक्ति ने सारवान् जानकारी को छिपा दिया है या असत्य घोषणा की है, उसे वास्तव में नियुक्ति या सेवा में निरंतरता की ईप्सा करने का कोई निरंकुश अधिकार नहीं है, किंतु उसे कम से कम यह अधिकार तो है कि उससे मनमाने ढंग से व्यवहार नहीं किया जाए और प्रस्तुत मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए शक्ति का प्रयोग निष्पक्षता के साथ युक्तियुक्त रीति में किया जाना चाहिए । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि पदधारी की उपयुक्तता का न्यायनिर्णयन करने के संबंध में जिस मानदंड/मानक को लागू किया जाना है, वह सदैव पद की प्रकृति, कर्तव्यों की प्रकृति, उपयुक्तता पर छिपाव के प्रभाव पर निर्भर करता है, जिस पर प्राधिकारी द्वारा विभिन्न पहलुओं पर सम्यक् तत्परता से विचार किया जाना चाहिए, किंतु

[1] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 532.

इस संबध में कोई कठोर और सीधा सरल नियम अधिकथित नहीं किया जा सकता है ।

13. इस न्यायालय द्वारा अधिकथित प्रतिपादना से जो सामने आता है वह यह है कि तथ्यों का छिपाव मात्र/असत्य जानकारी से, इस तथ्य को ध्यान में रखे बिना कि कोई दोषसिद्धि या दोषमुक्ति अभिलिखित की गई है, कर्मचारी/भर्ती किए गए व्यक्ति को स्वत: प्रमाण रूप में केवल एक कलम के प्रहार से सेवा से उन्मुक्त/ पदच्युत नहीं किया जाना चाहिए । साथ ही, किसी दांडिक मामले से संबंधित महत्वपूर्ण/असत्य सूचना को छिपाने के प्रभाव, यदि कोई हो, को नियोक्ता पर छोड़ा जाता है, ताकि वह पूर्ववृत्त के संबंध में उपलब्ध सभी सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार कर सके तथा वस्तुनिष्ठ मानदंडों और सुसंगत सेवा नियमों को ध्यान में रखते हुए, कर्मचारी की सेवा में निरंतरता/उपयुक्तता के संबंध में उचित निर्णय ले सके । इस न्यायालय द्वारा जो उल्लिखित किया गया है वह यह है कि किसी दिए गए मामले में केवल सामग्री/असत्य जानकारी को दबाने का अर्थ यह नहीं है कि नियोक्ता मनमाने ढंग से कर्मचारी को सेवा से उन्मोचन/समाप्त कर सकता है ।

19. परिणामस्वरूप, अपील सफल होती है और मंजूर की जाती है । उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के तारीख 17 नवंबर, 2015 के निर्णय और तारीख 24 अप्रैल, 2015 और तारीख 23 दिसंबर, 2021 के उन्मोचन के आदेश को इसके द्वारा अभिखंडित किया जाता है । प्रत्यर्थियों को निदेश दिया जाता है कि वे अपीलार्थी को कांस्टेबल के पद पर बहाल करें, जिस पर उसे रोजगार सूचना सं. 1/2011 के तारीख 27 फरवरी, 2011 के संदर्भ में अपनी भागीदारी के अनुसरण में चयनित किया गया था । हम यह स्पष्ट करते हैं कि अपीलार्थी उस अवधि के लिए वेतन के बकाया का हकदार नहीं होगा जिसके दौरान उसने बल में सेवा नहीं दी है और साथ ही वह वेतन, ज्येष्ठता और अन्य पारिणामिक फायदों सहित सभी काल्पनिक लाभों का हकदार होगा । आज से

एक माह की अवधि के भीतर आवश्यक आदेश पारित किए जाएंगे । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।"

25. **मोहम्मद इमरान** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में निस्संदेह, जो एक ऐसा मामला था जिसमें एक अभ्यर्थी ने दांडिक मामले को प्रकटन किया था, इस न्यायालय ने न्यायमूर्ति नवीन सिन्हा की ओर से बोलते हुए निम्नलिखित कथन उल्लिखित किया जो रोजमर्रा की वास्तविकताओं के साथ प्रतिध्वनित होता है :–

> "5. हमारे देश में रोजगार के अवसर एक दुर्लभ वस्तु है । प्रत्येक विज्ञापन की सीमित संख्या में रिक्तियों के लिए बड़ी संख्या में अभ्यर्थी आते हैं । किंतु यह बात वहां अनुतोष प्रदान करने के लिए सहानुभूति दिखाने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकती है जहां अभ्यर्थी के प्रत्यय पत्र से योग्यता के बावजूद उपयुक्तता के बारे में गंभीर प्रश्न उठा सकता है । निस्संदेह, न्यायिक सेवा अन्य सेवाओं से बहुत भिन्न है और उपयुक्तता का पैमाना जो अन्य सेवाओं पर लागू हो सकता है, न्यायिक सेवा के लिए समान नहीं हो सकता है । किंतु न्यायिक सेवा में नियुक्ति से इनकार करने के लिए नैतिक अधमता का कोई यांत्रिक या आलंकारिक मंत्र नहीं हो सकता है । बहुत कुछ मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा । प्रत्येक व्यक्ति को सुधार करने, अतीत से सीखने और आत्म-सुधार द्वारा जीवन में आगे बढ़ने का अवसर मिलना चाहिए । सभी पहलुओं पर विचार किए बिना, पिछले आचरण को उम्मीदवार के गले में लटकाना हमेशा न्याय नहीं कहा जा सकता । यद्यपि, बहुत कुछ किसी मामले की तथ्यात्मक स्थिति पर निर्भर करेगा ।"

26. हमने **सतीश चंद्र यादव** बनाम **भारत संघ और अन्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय के हाल ही के निर्णय और इस न्यायालय द्वारा पैरा 93, विशेष रूप से पैरा 93.1, 93.3 और 93.7 में निर्धारित व्यापक

---

[1] (2019) 17 एस. सी. सी. 696.

[2] (2023) 7 एस. सी. सी. 530.

सिद्धांतों को भी ध्यान में रखा गया है । यहां तक कि उसमें निर्धारित व्यापक सिद्धांत भी मानते हैं कि प्रत्येक मामले की संबंधित लोक नियोक्ता द्वारा पूर्ण रूप से जांच की जानी चाहिए और न्यायालय यह जांच करने के लिए आबद्ध है कि क्या संबंधित प्राधिकारी द्वारा अपनाई गई जांच प्रक्रिया निष्पक्ष और युक्तियुक्त थी । **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में पैरा 38.2 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि असत्य सूचना देने के लिए अभ्यर्थिता को रद्द करने का आदेश पारित करते समय, नियोक्ता ऐसी जानकारी देते समय मामले की विशेष परिस्थितियों, यदि कोई हों, पर ध्यान दे सकता है । इसके अलावा, **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) के पैरा 38.4.3 में यह सिद्धांत कि दोषमुक्ति या दांडिक मामले में संलिप्तता को छिपाने या असत्य जानकारी देने के मामले में, जहां दोषमुक्ति पहले ही अभिलिखित की जा चुकी है, नियोक्ता फिर भी पूर्ववृत्त के रूप में उपलब्ध सभी सुसंगत तथ्यों पर विचार कर सकता है और कर्मचारी के बने रहने के विषय में समुचित विनिश्चय कर सकता है । हमने **सतीश चंद्र यादव** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित व्यापक सिद्धातों को **अवतार सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में निम्नलिखित महत्वपूर्ण पैराग्राफ के साथ पढ़ा और समझा है :–

> "35. "सारवान्" जानकारी को छिपाने पर यह पूर्व-कल्पना की जाती है कि जो छिपाया जा रहा है वह तात्विक है न कि प्रत्येक तकनीकी या तुच्छ बात । नियोक्ता को अभ्यर्थिता रद्द करने या कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त करने के लिए शक्तियों का प्रयोग करते हुए नियमोंअनुदेशों, यदि कोई हो, पर उचित विचार करते हुए कार्य करना होगा । यद्यपि एक व्यक्ति जिसने सारवान् जानकारी को छिपाया है, वह नियुक्ति या सेवा में निरंतरता के लिए निरकुंश अधिकार का दावा नहीं कर सकता है, लेकिन उससे मनमाने ढंग से व्यवहार नहीं करने का अधिकार है और मामलों के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए निष्पक्षता के साथ युक्तियुक्त रूप से शक्ति का प्रयोग करना चाहिए ।"

27. हमने **पुलिस महानिदेशक, तमिलनाडु, मायलापुर** बनाम **जे.**

रघुनीस[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय की भी परीक्षा की है और हम पाते हैं कि अपीलार्थी का मामला **पवन कुमार** (उपर्युक्त), **संदीप** (उपर्युक्त) और **राम कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय के तथ्यों से अधिक मेल खाता है । इसलिए, हम पाते हैं कि **जे. रघुनीस** (उपर्युक्त) वाले मामले में दिया गया निर्णय स्पष्ट रूप से प्रभेदनीय है ।

28. पद की प्रकृति, दांडिक मामले का समय और प्रकृति; दोषमुक्त किए जाने के निर्णय पर समग्र विचार; आवेदन/सत्यापन प्रपत्र में पूछताछ की प्रकृति; चरित्र सत्यापन रिपोर्ट की अन्तर्वस्तु; आवेदन करने वाले व्यक्ति का सामाजिक आर्थिक स्तर; अभ्यर्थी के अन्य पूर्ववृत्त; विचार की प्रकृति और रद्द सेवा समाप्त करने का आदेश ऐसे कुछ निर्णायक पहलू हैं जो उपयुक्तता के न्यायनिर्णयन और आदेश दिए जाने वाले अनुतोष की प्रकृति का अवधारण करने के लिए न्यायिक अधिमत में अभिलिखित होने चाहिएं ।

29. उपर्युक्त विधिक स्थिति पर चर्चा करने के पश्चात्, उन कतिपय मुख्य विशेषताओं को उपवर्णित करना आवश्यक है, जो प्रस्तुत मामले में है :–

i. अपीलकर्ता छोटे से गांव बागपर, डाकघर कटौड़ा, पुलिस थाना, गौरी बाजार, जिला देवरिया, उ. प्र. का निवासी है ।

ii. आवेदन की तारीख पर, कोई दांडिक मामला लंबित नहीं था और आवेदन पत्र में कोई बात छिपाई नहीं गई थी ।

iii. यह दांडिक मामला तब रजिस्ट्रीकृत किया गया था जब उसकी आयु 21 वर्ष थी और अपराध **संदीप कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में निर्दिष्ट अपराध से अत्यधिक मिलते-जुलते थे तथा इस दांडिक मामले में भी उसे दोषमुक्त कर दिया गया था ।

iv. इसमें कोई संदेह नहीं है कि सत्यापन शपथपत्र के कई

[1] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1379.

स्तंभों में, उससे अलग-अलग क्रम परिवर्तन और संयोजनों में प्रश्न पूछे गए थे । वह एक गहरी दुविधा में रहा होगा क्योंकि उसे नौकरी खो देने की आसन्न संभावना थी ।

v. सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि विद्वान् अपर महाधिवक्ता द्वारा निष्पक्ष और स्पष्ट रूप से उपलब्ध कराए गए सत्यापन दस्तावेजों से हम पाते हैं कि दांडिक मामले और उसके पश्चात् दोषमुक्त होने के पश्चात् सत्यापन रिपोर्ट में कहा गया था कि उसका चरित्र अच्छा है, उसके विरुद्ध कोई शिकायत नहीं पाई गई थी और उसकी सामान्य प्रतिष्ठा अच्छी थी ।

vi. यही नहीं उसके अवस्थान का दौरा करने वाले व्यक्ति ने रिपोर्ट में उसके उज्ज्वल भविष्य की कामना भी की थी ।

vii. गौरी बाजार पुलिस थाना के थाना अधिकारी, जिन्होंने रिपोर्ट की अन्तर्वस्तु को दोहराने के बाद पुलिस अधीक्षक को रिपोर्ट भेजी थी, ने मत व्यक्त किया था उसे दोषमुक्त कर दिया गया था और कोई अपील फाइल नहीं की गई थी । इसके अतिरिक्त, कोई अन्य मामला लंबित नहीं है और न ही अभ्यर्थी के विरुद्ध कोई मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया है ।

viii. थाना अधिकारी ने प्रमाणित किया था कि अभ्यर्थी का चरित्र उत्कृष्ट है और वह राज्य सरकार के अधीन सरकारी सेवा करने के योग्य है । उन्होंने पुलिस थाने की रिपोर्ट के साथ-साथ ग्राम प्रधान की रिपोर्ट और न्यायालय के दस्तावेजों को भी संलग्न किया था ।

ix. पुलिस अधीक्षक ने कमांडेंट को लिखे अपने पत्र में रिपोर्ट का समर्थन किया और दोहराया कि अभ्यर्थी का चरित्र उत्कृष्ट है ।

x. यह परीक्षा करते हुए कि क्या प्राधिकारी द्वारा जांच के लिए अपनाई गई प्रक्रिया निष्पक्ष और युक्तियुक्त थी, हम पाते हैं कि तारीख 12 अप्रैल, 2005 के रद्द करने के आदेश में इस

निर्णय के पहले भाग में उपवर्णित चरित्र सत्यापन प्रपत्र के खंड 4 में विहित आदेश का भी पालन नहीं किया गया है । जैसाकि **राम कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में पाया गया था, अपीलार्थी नियुक्ति के लिए उपयुक्त था या नहीं, इस पर विचार करने के बजाय नियुक्ति प्राधिकारी ने यंत्रवत् रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि उसका चयन अनियमित और अवैध था, क्योंकि अपीलार्थी ने असत्य तथ्यों के साथ एक शपथपत्र प्रस्तुत किया था । इसलिए, **सतीश चंद्र यादव** (उपर्युक्त) वाले मामले के पैरा 93.7 में निर्धारित व्यापक सिद्धांतों को लागू करने पर भी, हम पाते हैं कि तारीख 12 अप्रैल, 2005 का रद्द करने का आदेश न तो उचित है और न ही युक्तियुक्त । भर्ती अधिसूचना के खंड 9 को ऊपर उपवर्णित मामलों में अधिकथित विधि के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए ।

30. मामले के तथ्यों के आधार पर और ऊपर दी गई विशेष परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में, दुर्भाग्यपूर्ण दांडिक मामले का प्रकटन न करना (जिसमें दोषमुक्त भी कर दिया गया था), स्थितियों की योजना में कहां खड़ा/आता है ? मामले के विशिष्ट तथ्यों के आधार पर हमारी राय में, हमें नहीं लगता कि इसे अपीलार्थी के लिए घातक माना जा सकता है । हर गैर-प्रकटीकरण को अयोग्यता के रूप में व्यापक रूप से परिभाषित करना अन्यायपूर्ण होगा और यह इस महान, विशाल और विविधतापूर्ण देश में मौजूद आधारिक वास्तविकताओं से पूर्ण रूप से अनजान होने के समान होगा । प्रत्येक मामला उसमें प्रचलित तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और न्यायालय को उपलब्ध पूर्व-निर्णयों को मार्गदर्शक के रूप में प्रयोग करते हुए, वस्तुनिष्ठ मानदंडों के आधार पर एक समग्र दृष्टिकोण अपनाना होगा । यह कभी भी हर परिस्थिति में एक जैसा नहीं हो सकता है ।

राहत :

31. ऊपर बताए गए कारणों से, यह अपील मंजूर की जाती है और विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश और 2020 की विशेष अपील सं.

896 में तारीख 29 दिसंबर, 2010 के खण्ड न्यायपीठ के आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाता है । तीसरे प्रत्यर्थी, कमांडेट 27वीं बटालियन, पी. ए. सी. सीतापुर के तारीख 12 अप्रैल, 2005 के आदेश को अपास्त किया जाता है । प्रत्यर्थी को निदेश दिया जाता है कि वे अपीलार्थी को कांस्टेबल के पद पर सेवा में नियुक्त करें, जिसके लिए वह तारीख 20 जनवरी, 2004 की भर्ती अधिसूचना के संदर्भ में भाग लेकर चयनित हुआ था । हम स्पष्ट करते हैं कि अपीलार्थी उस अवधि के लिए बकाया वेतन के लिए हकदार नहीं होगा जिसके दौरान उसने बल में सेवा नहीं दी है । साथ ही, हम निदेश देते हैं कि अपीलार्थी वेतन, ज्येष्ठता और अन्य पारिणामिक लाभों सहित सभी काल्पनिक लाभों का हकदार होगा । आवश्यक आदेश आज से चार माह की अवधि के भीतर पारित किए जाएंगे । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

पां./जस.

[2024] 3 उम. नि. प. 30

बल्लू उर्फ बलराम उर्फ बालमुकुंद और एक अन्य

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

[2018 की दांडिक अपील सं. 1167]

2 अप्रैल, 2024

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 और 201 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति को उलटा जाना और अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में अपील न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की गुंजाइश – उच्च न्यायालय दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में केवल तब हस्तक्षेप कर सकता है जब वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विचारण न्यायालय का निर्णय अनुचित या असंभव है और जहां मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित हो और विचारण न्यायालय द्वारा अन्वेषण अधिकारी तथा अन्य साक्षियों के परिसाक्ष्य को त्यक्त करने के लिए ठोस और तर्कपूर्ण कारण दिए गए हों तथा साक्ष्य की विस्तारपूर्वक चर्चा करने के पश्चात् अभियुक्तों को दोषी न पाया गया हो, विचारण न्यायालय का निर्णय अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के सही मूल्यांकन पर आधारित हो और अभियोजन पक्ष द्वारा अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया हो, वहां उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में केवल अटकलबाजी और अनुमान के आधार पर विचारण न्यायालय के निर्णय को उलटना उचित नहीं कहा जा सकता और उसे अभिखंडित और अपास्त करते हुए अभियुक्तों को दोषमुक्त करना न्यायोचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतक-महेश साहू के अनिता के साथ प्रेम संबंध थे, जो इस अपील में अपीलार्थी सं. 2 की पुत्री और इस अपील में अपीलार्थी सं. 1 की बहिन है । अनिता और मृतक महेश साहू लगभग आठ माह आगरा में रहे और फिर दामोह वापस आ गए । उसके पश्चात्, अनिता का विवाह एक अन्य व्यक्ति के साथ अनुष्ठापित कर दिया गया । फिर भी वे एक-दूसरे के संपर्क में थे । इस शत्रुता के कारण, अपीलार्थियों ने अपने सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए मृतक की हत्या कर दी । बेनी प्रसाद **उर्फ** बेरी प्रसाद (अभि. सा. 1) और सुमित्रा बाई (अभि. सा. 6), जो मृतक के पिता और माता हैं, घटना के बारे में पता चलने पर घटनास्थल पर आए । अभि. सा. 1 की मौखिक रिपोर्ट के आधार पर पुलिस थाना, दामोह में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी के न्यायालय में आरोप पत्र फाइल किया गया । क्योंकि मामला अनन्य रूप से विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा विचारणीय था इसलिए इसे विद्वान् विचारण न्यायाधीश को सुपुर्द किया गया । विचारण के समाप्त होने पर विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अभियुक्त व्यक्तियों को दोषमुक्त कर दिया क्योंकि अभियोजन पक्ष मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा था । प्रत्यर्थी-राज्य द्वारा अभियुक्तों की दोषमुक्ति के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायाधीश के यथा पूर्वोक्त निष्कर्ष को उलट दिया गया । इससे व्यथित होकर अभियुक्तों द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – निस्संदेह, अभियोजन का पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अन्वेषण अधिकारी और अन्य साक्षियों के परिसाक्ष्य को त्यक्त करने के लिए ठोस और तर्कपूर्ण कारण दिए थे । इस न्यायालय का यह मत है कि उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त करके पूरी तरह से गलती की है कि विचारण न्यायाधीश ने अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य को मात्र

अटकलबाजी और अनुमानों के आधार पर अस्वीकार कर दिया था । बल्कि उच्च न्यायालय का निर्णय ही अटकलबाजी और अनुमानों पर आधारित है । यद्यपि उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश के विषय में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि का उल्लेख किया है, तो भी उच्च न्यायालय ने इसे गलत रूप से लागू किया और विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य के सही मूल्यांकन पर आधारित एक बहुत ही सकारण निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा केवल अटकलबाजी और अनुमानों के आधार पर उलट दिया गया । उच्च न्यायालय दांडिक अपील में केवल तब हस्तक्षेप कर सकता था यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता कि विचारण न्यायाधीश के निष्कर्ष या तो अनुचित थे या असंभव । जैसाकि इसमें पहले ही ऊपर चर्चा की गई है, विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में कोई अनुचितता या असंभाव्यता नहीं पाई जा सकती । किसी मामले में, यदि दो मत संभव हों और विचारण न्यायाधीश ने दूसरे मत को अधिक अधिसंभाव्य पाया हो, तो उच्च न्यायालय द्वारा तब तक हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित नहीं होगा जब तक विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अपनाया गया मत एक अनुचित या असंभव मत न हो । मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए, इस न्यायालय का निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया निर्णय पूरी तरह से विधि की दृष्टि से असंधार्य है । (पैरा 6, 16, 19-22)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[1985] [1985] 1 उम. नि. प. 995 =
(1984) 4 एस. सी. सी. 116 :
शरद बिरधीचंद सारदा बनाम **महाराष्ट्र राज्य** । 6

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2018 की दांडिक अपील सं. 1167.

1995 की दांडिक अपील सं. 261 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर द्वारा तारीख 6 अप्रैल, 2018 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री वरुण ठाकुर, रामकरण, (सुश्री) श्रद्धा सरन, बृजेश पांडेय और वरिन्द्र कुमार शर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री पशुपति नाथ राजदान, विकास बंसल, मिर्जा कयेश बेग, (सुश्री) मैत्रेयी जगत ज्योति, आस्तिक गुप्ता, (सुश्री) आकांक्षा तोमर, अरघा राय, (सुश्री) ओजस्विनी गुप्ता और (सुश्री) रूबी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. आर. गवई ने दिया ।

न्या. गवई – वर्तमान अपील में 1995 की दांडिक अपील सं. 261 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर द्वारा तारीख 6 अप्रैल, 2018 को पारित किए गए उस निर्णय को चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी-राज्य की उस अपील को मंजूर किया गया था जो 1992 के सेशन विचारण सं. 160 में तारीख 26 मार्च, 1994 को पारित किए गए उस निर्णय को चुनौती देते हुए फाइल की गई थी, जिसके द्वारा विद्वान् द्वितीय श्रेणी सेशन न्यायाधीश, दामोह (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विद्वान् विचारण न्यायाधीश' कहा गया है) ने अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'भारतीय दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 302, 201 और 34 के अधीन आरोपों से दोषमुक्त कर दिया था । उच्च न्यायालय ने विद्वान् विचारण न्यायाधीश के निर्णय को उलटते हुए अपीलार्थी सं. 1 (बल्लू चौरसिया **उर्फ** बलराम **उर्फ** बालमुकुंद) को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 201/34 के अधीन तथा अपीलार्थी सं. 2 (हलकी बहू **उर्फ** जमनाबाई **उर्फ** जमुनाबाई) को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 और धारा 201 के अधीन दोषसिद्ध किया था और धारा 302 और धारा 302/34 के अधीन 1,000/- रुपए के जुर्माने सहित कठोर आजीवन कारावास भुगतने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया था । जहां तक भारतीय दंड संहिता

की धारा 201 और धारा 201/34 का संबंध है, उच्च न्यायालय ने 3,000/- रुपए के जुर्माने सहित सात वर्ष के कठोर कारावास और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर पांच माह का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया था ।

2. अभियोजन पक्ष का वृत्तांत संक्षेप में निम्नलिखित है –

2.1 मृतक-महेश साहू के अनिता के साथ प्रेम संबंध थे, जो प्रत्यर्थी सं. 2 जमनाबाई (इस अपील में अपीलार्थी सं. 2) की पुत्री और बल्लू **उर्फ** बलराम **उर्फ** बालमुकुंद (इस अपील में अपीलार्थी सं. 1) की बहिन है । अनिता और मृतक महेश साहू लगभग आठ माह आगरा में रहे और फिर दामोह वापस आ गए । उसके पश्चात्, अनिता का विवाह एक अन्य व्यक्ति के साथ अनुष्ठापित कर दिया गया । फिर भी वे एक-दूसरे के संपर्क में थे । इस शत्रुता के कारण, अपीलार्थियों ने तारीख 7 जून, 1992 को लगभग 11.00 बजे अपराह्न में अपने सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए मृतक की हत्या कर दी । अभियोजन पक्ष ने गोविन्द (अभि. सा. 7) के साक्ष्य का अवलंब लिया, जिसने देखा था कि अपीलार्थी सं. 1 अपने मकान से एक शव को घसीट रहा था । उसने उसकी माता, अपीलार्थी सं. 2 को भी देखा था जो अपने मकान के दरवाजे पर रक्त के धब्बों को साफ कर रही थी ।

2.2 बेनी प्रसाद **उर्फ** बेरी प्रसाद (अभि. सा. 1) और सुमित्रा बाई (अभि. सा. 6), जो मृतक के पिता और माता हैं, घटना के बारे में पता चलने पर घटनास्थल पर आए । अभि. सा. 1 की मौखिक रिपोर्ट के आधार पर पुलिस थाना, दामोह में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-1) रजिस्ट्रीकृत की गई ।

2.3 अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी के न्यायालय में आरोप पत्र फाइल किया गया । क्योंकि मामला अनन्य रूप से विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा विचारणीय था इसलिए इसे विद्वान् विचारण न्यायाधीश को सुपुर्द किया गया ।

2.4 विचारण के समाप्त होने पर विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने

अभियुक्त व्यक्तियों को दोषमुक्त कर दिया क्योंकि अभियोजन पक्ष मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा था । प्रत्यर्थी-राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की ।

2.5 उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा विद्वान् विचारण न्यायाधीश के यथा पूर्वोक्त निष्कर्ष को उलट दिया ।

2.6 इससे व्यथित होकर यह अपील फाइल की गई है ।

3. हमने अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री वरुण ठाकुर और प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री पशुपति नाथ राज़दान को सुना ।

4. विद्वान् काउंसेल श्री वरुण ठाकुर ने दलील दी कि उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के एक सकारण निर्णय को उलट कर गंभीर गलती की है । उन्होंने दलील दी कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने विस्तृत कारण देते हुए पाया था कि अभियोजन पक्ष मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है । उन्होंने दलील दी कि उच्च न्यायालय ने सरसरी रीति में उक्त निष्कर्ष में हस्तक्षेप किया । उन्होंने दलील दी कि वर्तमान मामला एक पारिस्थितिक साक्ष्य का मामला है और जब अभियोजन पक्ष परिस्थितियों की श्रृंखला को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में समर्थ न रहा हो, तो विचारण न्यायाधीश के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करना और दोषसिद्धि का निष्कर्ष अभिलिखित करना अनुज्ञेय नहीं है । उन्होंने यह भी दलील दी कि दोषमुक्ति से उद्भूत अपील में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश सीमित है । जब तक निष्कर्षों का अनुचित या असंभव होना दर्शित न किया जाए, अपील न्यायालय के लिए उसमें हस्तक्षेप करना अनुज्ञेय नहीं होगा ।

5. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री पशुपति नाथ राज़दान ने दलील दी कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने साक्ष्य का पूरी तरह से गलत रूप में विवेचन किया था । उन्होंने दलील दी कि बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) और सुमित्रा बाई (अभि. सा. 6) के साक्ष्य के साथ-साथ चिकित्सा साक्ष्य से दर्शित होता है कि अभियोजन पक्ष ने मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है ।

6. निस्संदेह, अभियोजन का पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि के संबंध में विधि को **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय में भली-भांति स्पष्ट किया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था :–

> "152. उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिए गए मामलों पर चर्चा करने से पूर्व हम एकमात्र पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी दांडिक मामले की प्रकृति, स्वरूप और अपेक्षित आवश्यक सबूत पर कुछेक विनिश्चयों को उद्धृत करना चाहेंगे । इस न्यायालय का सबसे मौलिक और मूलभूत विनिश्चय हनुमंत **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य {ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343 = [1952] एस. सी. आर. 1091 = 1953 क्रिमिनल ला जर्नल 129} वाला मामला है । इस न्यायालय द्वारा आज तक अनेक विनिश्चयों में इस मामले का बराबर अनुसरण और उपयोग किया गया है । उदाहरण के लिए, तुफेल **उर्फ** सिम्मी **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [(1969) 3 एस. सी. सी. 198 = 1970 एस. सी. सी. (क्रि.) 55] और रामगोपाल **बनाम** महाराष्ट्र राज्य [(1972) 4 एस. सी. सी. 625 = ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 656 वाले मामले] । हनुमंत वाले मामले {ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343 = [1952] एस. सी. आर. 1091 = 1953 क्रिमिनल ला जर्नल 129} में न्यायमूर्ति महाजन ने जो कुछ अधिकथित किया है, उसे उद्धृत करना उपयोगी होगा –
>
> > 'यह ध्यान रखना होगा कि जिन मामलों में साक्ष्य पारिस्थितिक साक्ष्य होता है, उनमें वे परिस्थितियां जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पहली बार में पूरी तरह से सिद्ध की जानी चाहिएं और इस प्रकार सिद्ध सभी तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिए । साथ ही वे परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

प्रवृत्ति की होनी चाहिएं तथा वे ऐसी होनी चाहिएं कि प्रत्येक कल्पना अपवर्जित हो जाए और वही शेष रहे जो साबित की जानी है । दूसरे शब्दों में, साक्ष्य की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए जिससे अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप किसी निष्कर्ष के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार शेष न बचे और वह ऐसी होनी चाहिएं जिससे यह दर्शित होता हो कि समस्त मानवीय अधिसंभाव्यताओं में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।'

153. इस विनिश्चय के सूक्ष्म-विश्लेषण से यह दर्शित होता है कि अभियुक्त के प्रतिकूल मामले को पूरी तरह सिद्ध मानने से पहले निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिएं –

(1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं ।

यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह इंगित किया था कि संबंधित परिस्थितियां 'सिद्ध करनी होंगी' या 'की जानी चाहिएं न कि की जा सकती हैं' । 'साबित की जा सकती हैं' और 'साबित करनी होंगी या की जानी चाहिएं' में केवल व्याकरणिक अंतर ही नहीं है, बल्कि विधिक अंतर है, जैसाकि इस न्यायालय ने शिवाजी साहबराव बोबडे और एक अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य {[1973] 3 उम. नि. प. 1011 = (1973) 2 एस. सी. सी. 793} वाले मामले में अभिनिर्धारित किया था । उसमें न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

'निश्चय ही यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पहले कि न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सके, अभियुक्त दोषी 'होना चाहिए' न कि केवल 'दोषी हो सकता है' तथा 'हो सकता है' और 'होना चाहिए' के बीच मानसिक अंतर बहुत लंबा है, अस्पष्ट अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करता है ।'

(2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त

की दोषिता के कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं,

(3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं,

(4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाय हर संभावित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए, और

(5) साक्ष्य की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि संपूर्ण मानवीय अधिसंभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।

154. ये पांच स्वर्णिम सिद्धांत हैं, यदि हम ऐसा कह सकते हैं । ये पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी पक्षकथन के सबूत के पंचशील सिद्धांत हैं ।"

7. इस प्रकार, स्पष्ट रूप से यह देखा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक है कि जिन परिस्थितियों से दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है वे पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं । न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पूर्व कि न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जा सके, अभियुक्त 'अवश्य दोषी होना चाहिए' न कि मात्र 'दोषी हो सकता है' । यह अभिनिर्धारित किया गया कि 'साबित किया जा सकता है' और 'अवश्य साबित करना होगा या किया जाना चाहिए' के बीच न केवल एक व्याकरणिक अंतर है अपितु विधिक अंतर भी है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता के संगत होने चाहिएं अर्थात् वे इसके सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि परिस्थितियां ऐसी होनी चाहिएं कि साबित की जाने वाली कल्पना के सिवाय प्रत्येक संभावित उप-कल्पना अपवर्जित

हो जाए । यह अभिनिर्धारित किया गया कि साक्ष्य की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार शेष न रहे और अवश्य यह दर्शित होना चाहिए कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यताओं में वह कार्य अवश्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा ।

8. यह स्थिर विधि है कि संदेह चाहे कितना भी मजबूत हो, युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता । किसी अभियुक्त को संदेह के आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता, भले ही वह कितना मजबूत क्यों न हो । अभियुक्त के तब तक निर्दोष होने की उपधारणा की जाती है जब तक युक्तियुक्त संदेह के परे दोषी साबित नहीं किया जाता है ।

9. इसके अतिरिक्त, यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान मामला दोषमुक्ति को उलटे जाने का है । अपील न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने से संबंधित विधि भली-भांति स्पष्ट है । जब तक दोषमुक्ति का निष्कर्ष अनुचित या असंभव होना न पाया जाए, उसमें हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं होगा । यद्यपि इस विवाद्यक पर अनेक निर्णय हैं, तो भी हम केवल दो निर्णयों का उल्लेख करेंगे जिनको स्वयं उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में उद्धृत किया है, जिन्हें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "13. साधु सरन सिंह **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [(2016) 4 एस. सी. सी. 397] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि –
>
> > 'दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में, जहां अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषिता की उपधारणा सुदृढ़ हो जाती है, अपील न्यायालय दोषमुक्ति के आदेश में केवल तब हस्तक्षेप करेगा जब तथ्य और विधि विषयक अनुचितता हो । तथापि, हमारा मानना है कि न्यायालय का सर्वोपरि विचार सारभूत न्याय करना और न्याय की हानि को रोकना है जो ऐसे अभियुक्त को दोषमुक्त करने से उद्भूत हो सकती है जो किसी अपराध का दोषी है । न्याय की हानि जो दोषी को दोषमुक्त करने से

हो सकती है वह किसी निर्दोष को दोषसिद्ध करने से कम नहीं है । दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में अपील न्यायालय की शक्तियों की व्याप्ति के संबंध में सिद्धांतों को प्रतिपादित करते हुए कहा है कि अपील न्यायालय पर उस संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्विलोकन और पुनर्विचार करने के लिए विधि में कोई आत्यंतिक निर्बंधन नहीं है जिसके आधार पर दोषमुक्ति का आदेश आधारित है ।'

14. इसी प्रकार, हरिजन भल्ला तेजा **बनाम** गुजरात राज्य [(2016) 12 एस. सी. सी. 665] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि –

'निस्संदेह, जहां अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर दो मत संभव हों और विचारण न्यायालय ने दोषमुक्ति का मत अपनाया हो, वहां अपील न्यायालय को उसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए । तथापि, इसका यह अर्थ नहीं है कि सभी मामलों में जहां विचारण न्यायालय ने दोषमुक्ति अभिलिखित की है, उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए भले ही मत अनुचित हो । जहां विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत अभिलेख पर के साक्ष्य के महत्व के विरुद्ध है, या अनुचित है, वहां यदि साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् आरोप अभिलेख पर युक्तियुक्त संदेह के परे साबित हो जाता है तो अपील न्यायालय सदैव सही निष्कर्ष अभिव्यक्त करने और अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए स्वतंत्र है ।'"

10. विधि के उपरोक्त स्थिर सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए हमें वर्तमान मामले की परीक्षा करनी होगी ।

11. यह विवादग्रस्त नहीं है कि मृतक की मृत्यु एक मानव वध मृत्यु है और इसलिए चिकित्सीय साक्ष्य को निर्दिष्ट करना आवश्यक नहीं होगा । एकमात्र प्रश्न जो रह जाता है वह इस बारे में है कि क्या

अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है और क्या अपीलार्थी अपराध कारित करने के दोषी हैं ।

12. विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक चर्चा करते हुए पाया था कि अपीलार्थी दोषी नहीं हैं । हम विद्वान् विचारण न्यायाधीश के निष्कर्षों का स्पष्ट रूप से उल्लेख करते हैं, जो निम्नलिखित प्रकार से हैं –

12.1 बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1), जो मृतक का पिता है, ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि जब वह अपने पुत्र महेश साहू को रात्रि के भोजन हेतु बुलाने के लिए गया तब महेश साहू चौक पर पप्पू तमराकर और दो लड़कों के साथ खड़ा था । महेश साहू ने उसे कहा कि वह बाद में आएगा, फिर बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) अपने मकान पर गया और सो गया तथा बाद में रात्रि में लगभग 11.45 बजे एक लड़का उसके पास आया और उसे बताया कि बल्लू चौरसिया (अपीलार्थी सं. 1), संतोष चौरसिया और अन्य व्यक्ति महेश बाबू को पीट रहे हैं । यह सुनकर वह चड्डी और बनियान पहनकर बल्लू चौरसिया के मकान की ओर दौड़ा । उसने देखा कि बल्लू चौरसिया, संतोष चौरसिया और उसके दो भाई महेश साहू को मृत हालत में घसीट रहे थे और उसके शव को अपने मकान से दस फुट दूर रख दिया । इसके पश्चात् अभियुक्त बल्लू चौरसिया अपने मकान के अंदर चला गया । बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) उस स्थान के निकट गया जहां महेश साहू का शव पड़ा हुआ था और उसने उसे मृत पाया । उसी समय पर, मृतक की माता सुमित्रा बाई (अभि. सा. 6) भी वहां आई और उसने देखा कि जमुना बाई (अपीलार्थी सं. 2), जो अभियुक्त बल्लू चौरसिया की माता है, दरवाजे पर रक्त को साफ कर रही थी ।

12.2 बेनी प्रसाद ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वर्ष 1991 के अंतिम माह (दिसंबर, 1991) में उसका पुत्र महेश साहू एक साक्षात्कार के लिए भोपाल गया था और लगभग आठ माह तक उसका कोई अता-पता नहीं था । उसके पश्चात्, उसके पास उसके पुत्र से वर्ष 1992 के चौथे माह (अप्रैल, 1992) में एक पत्र आया जिसमें उसे सूचित किया गया कि वह

आगरा में काम कर रहा है और उसने अनिता नामक एक लड़की से विवाह कर लिया है, जोकि अभियुक्त/अपीलार्थी सं. 1 बल्लू चौरसिया की बहिन है । उसके पश्चात्, मृतक महेश साहू और अनिता दामोह (वर्ष 1992 के चौथे माह अर्थात् अप्रैल, 1992 में) वापस आए और अनिता अपने घर रहने लगी तथा उसके पश्चात् अनिता का विवाह उसके भाई बल्लू चौरसिया (अपीलार्थी सं. 1) द्वारा उज्जैन में एक अन्य व्यक्ति से कर दिया गया । उसके पश्चात्, अनिता अपनी ससुराल चली गई और उसके पश्चात् महेश साहू और अनिता के बीच पत्राचार आरंभ हुआ । इस साक्षी ने यह कथन किया कि यह पत्राचार बल्लू चौरसिया (अपीलार्थी सं. 1) को पसंद नहीं था और वह महेश साहू को मृत्यु की धमकी देने लगा ।

12.3 विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) द्वारा विचारण न्यायाधीश के समक्ष किया गया कथन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन (प्रदर्श डी/1) के बिल्कुल विपरीत हैं । यह पाया गया कि बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) ने न्यायालय के समक्ष अपने अभिसाक्ष्य में अपने वृत्तांत में पूरी तरह सुधार किया था । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) के व्यवहार को भी अस्वाभाविक पाया । बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया कि जब उसने चार व्यक्तियों को शव को घसीटते हुए देखा था तब उसने कुछ नहीं कहा था क्योंकि वह अकेला था । तथापि, उसने स्वीकार किया कि महेश साहू का शव एक घनी बस्ती में पड़ा हुआ था और उक्त स्थान के आस-पास लोगों के मकान हैं तथा उसके मकान से लगभग 9 फुट दूर गौरी शंकर मंदिर पर स्थित नगरपालिका का एक औषधालय भी है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि उसी औषधालय में ही हवलदार और कांस्टेबलों द्वारा संचालित पुलिस चौकी स्थित थी । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि मृतक का शव घसीटे जाने के बारे में किसी व्यक्ति को और विशिष्ट रूप से पुलिस चौकी, जो घटनास्थल से मुश्किल से कुछ ही दूरी पर थी, में सूचित न करने का बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) का आचरण पूर्णत: अस्वाभाविक था ।

विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि जब शव का पंचनामा (प्रदर्श पी-2) किया जा रहा था, तब उसने हत्यारों के नाम नहीं दिए थे । बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण यह था कि पुलिस ने उससे पूछा नहीं था । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) ने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया कि शव के पंचनामे (प्रदर्श पी-2) के समय पर वहां लगभग 150 लोगों की भीड़ थी ।

12.4 श्रीमती सुमित्रा बाई (अभि. सा. 6), मृतक की माता ने भी मृतक महेश साहू और अनिता के बीच संबंध के बारे में कथन किया । उसने कथन किया कि अभियुक्त/अपीलार्थी सं. 1 बल्लू चौरसिया मृतक महेश साहू को घटना की तारीख से एक दिन पूर्व धमकी दे रहा था । उसने बताया कि लगभग 11.45 बजे अपराह्न/12.00 बजे पूर्वाह्न में एक लड़का आया था जिसने उसे बताया था कि महेश साहू और बल्लू चौरसिया के बीच लड़ाई हो रही है । जब वह अभियुक्त के मकान पर गई, तो उसने अभियुक्त बल्लू चौरसिया, उसके बड़े भाई, उसके मंझले भाई और अभियुक्त जमुना बाई को उसके पुत्र को घसीटते हुए और उसके पुत्र को बड़े पिता के मकान के सामने छोड़ते हुए देखा । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि इस साक्षी का साक्ष्य भी पूर्णतः सुधार किया हुआ है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि इस साक्षी द्वारा न्यायालय में दिया गया अभिसाक्ष्य दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन किए गए कथन (प्रदर्श डी-2) की तुलना में पूरी तरह बढ़ा-चढ़ाकर किया गया था । परिणामतः, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने इन दोनों साक्षियों अर्थात् मृतक के पिता और माता के साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया ।

12.5 विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों को अंतिम बार मृतक महेश साहू के साथ देखे जाने से संबंधित परिस्थितियों को साबित करने के लिए राजू (अभि. सा. 4), धर्मेंद्र सिंह (अभि. सा. 5) और गोविन्द (अभि. सा. 7) के साक्ष्य का

अवलंब लिया था । बाद में ये सभी तीनों साक्षी पक्षद्रोही हो गए और अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया ।

12.6 विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त बल्लू चौरसिया के दोनों हाथों के नाखूनों को काटने और उक्त नाखूनों में मृतक महेश साहू का रक्त लगे होने से संबंधित परिस्थितियों को भी त्यक्त कर दिया था । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि नाखून घटना की तारीख से छह दिनों की अवधि के पश्चात् काटे गए थे । अभियोजन पक्ष ने रक्तरंजित वस्त्रों और चाकू की बरामदगी की परिस्थितियों का भी अवलंब लिया था । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि उक्त परिस्थितियों से भी अभियोजन के पक्षकथन को कोई सहायता नहीं मिलती है क्योंकि यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि इन वस्तुओं पर पाया गया रक्त एक मानव रक्त था ।

12.7 जहां तक अपीलार्थी सं. 1 की माता जमुना बाई (अपीलार्थी सं. 2) की बाबत परिस्थितियों का संबंध है, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि स्वतंत्र साक्षी पक्षद्रोही हो गए थे और इस संबंध में एकमात्र साक्ष्य एस. के. बनर्जी **उर्फ** एस. के. बेनर्जी **उर्फ** सुकांत बनर्जी/अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 15) का साक्ष्य था ।

12.8 विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि राजेश कुमार (अभि. सा. 14), जो एक पंच साक्षी था, ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया था कि मृतक उसका चचेरा भाई था और उसने दस्तावेजों पर हस्ताक्षर एस. के. बनर्जी/अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 15) के निदेश पर किए थे । इसलिए विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27 के अधीन ज्ञापन और पश्चात्वर्ती बरामदगी के संबंध में परिस्थितियां भी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं होती है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि यद्यपि पंचनामा में यह दर्शाया गया है कि विभिन्न स्थानों पर रक्त पाया गया था, तो भी उसने नमूनों को अभिगृहीत करने का कोई प्रयास नहीं किया था और न

ही उसने इस बारे में स्पष्टीकरण दिया कि उसने क्यों उक्त रक्त के नमूनों को अभिगृहीत नहीं किया था ।

12.9 विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने पाया कि अभियुक्त के ज्ञापन (प्रदर्श पी-14) के आधार पर तारीख 14 जून, 1992 को उसी कमरे से एक खुले स्थान से चाकू अभिगृहीत किया गया था जिसका उल्लेख पंचनामा (प्रदर्श पी-11) में है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि यदि अन्वेषण अधिकारी घटना के अगले दिन तुरंत घटनास्थल पर गया था और कमरे की तलाशी ली थी किंतु उसे चाकू दिखाई नहीं दिया था, फिर उसी कमरे से ही बाद में चाकू की बरामदगी होना गढ़ा गया प्रतीत होता है ।

12.10 विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह भी पाया कि यद्यपि घटना तारीख 7 जून, 1992 को लगभग 12.00 बजे पूर्वाह्न में घटी थी और अन्वेषण अधिकारी को इसकी इत्तिला 12.40 बजे पूर्वाह्न में दी गई थी, फिर भी अभियुक्तों की गिरफ्तारी केवल तारीख 15 जून, 1992 को की गई थी जिससे अभियोजन पक्ष के वृत्तांत पर संदेह उत्पन्न होता है । इससे भी बढ़कर बात यह है कि जब घटनास्थल और पुलिस थाने के बीच की दूरी मुश्किल से एक से डेढ़ किलो मीटर है ।

13. उपरोक्त बिंदुओं से, जो हमने विद्वान् विचारण न्यायाधीश के निर्णय से प्रकटित किए हैं, यह स्पष्ट होता है कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने साक्ष्य की अति विस्तारपूर्वक चर्चा करने की विस्तृत कवायद की थी । इसलिए हम और अधिक ब्यौरे देकर निर्णय को बोझिल करना नहीं चाहेंगे । पूर्वोक्त बिंदु इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पर्याप्त हैं कि अभियोजन पक्ष अपराध में आलिप्त करने वाली किसी भी परिस्थिति को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है और किसी भी दशा में परिस्थितियों की श्रृंखला ऐसी नहीं है जो परस्पर इतनी संबद्ध हो कि अभियुक्त व्यक्तियों की दोषिता के सिवाय कोई अन्य निष्कर्ष निकलता हो । हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश के निष्कर्ष अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री के सही मूल्यांकन पर आधारित हैं ।

14. विद्वान् विचारण न्यायाधीश की इस विस्तृत कवायद को उच्च न्यायालय की विद्वान् खंड न्यायपीठ द्वारा पूरी तरह से सरसरी रीति में ध्वस्त कर दिया गया । जहां तक बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) और सुमित्रा बाई (अभि. सा. 6) के परिसाक्ष्य का संबंध है, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह मत व्यक्त किया :–

> "8. ..... बेनी प्रसाद (अभि. सा. 1) और सुमित्रा बाई (अभि. सा. 6) के संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि न्यायालय में किए गए उनके कथन में सुधार किया गया है और बढ़ा-चढ़ाकर बातें कही गई हैं । किंतु इस आधार पर उनके संपूर्ण परिसाक्ष्य को त्यक्त नहीं किया जा सकता क्योंकि 'एक बात में मिथ्या, तो सब बात में मिथ्या' का सिद्धांत दांडिक विचारण में लागू नहीं होता है । कभी-कभी, साक्षियों को यह भय होता है कि यदि न्यायालय द्वारा उनके परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सका तो मुख्य अपराधी दोषमुक्त हो सकता है । अत: स्वाभाविक रूप से वे अपने कथन में कुछ सीमा तक सुधार कर लेते हैं ।"

15. एस. के. बनर्जी/अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 15) के परिसाक्ष्य पर, जिसे विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा ठोस कारण देते हुए अविश्वसनीय पाया गया था, उच्च न्यायालय की विद्वान् खंड न्यायपीठ द्वारा इसे विश्वसनीय पाया गया था जिसे पैरा 12 में दिया गया है और जो निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "12. हम अन्वेषण अधिकारी के परिसाक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं पाते हैं जिसने निष्पक्ष रूप से और ईमानदारी से अपने कर्तव्य का पालन किया था । उसकी प्रत्यर्थियों से कोई दुश्मनी या मृतक से कोई संबंध नहीं था । अत: हम उसके परिसाक्ष्य का अवलंब लेने के लिए आनत हैं । इसे मात्र अटकलबाजी और अनुमानों के आधार पर प्रत्यर्थियों के पक्ष में अस्वीकार नहीं किया जा सकता ।"

16. हम पाते हैं कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अन्वेषण अधिकारी और अन्य साक्षियों के परिसाक्ष्य को त्यक्त करने के लिए ठोस और तर्कपूर्ण कारण दिए थे । हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त करके पूरी तरह से गलती की है कि विचारण न्यायाधीश ने अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य को मात्र अटकलबाजी और अनुमानों के आधार पर अस्वीकार कर दिया था । बल्कि उच्च न्यायालय का निर्णय ही अटकलबाजी और अनुमानों पर आधारित है ।

17. दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील की व्याप्ति पर स्थिर विधि की चर्चा करते हुए इस न्यायालय के पूर्वोल्लिखित दो निर्णयों को उद्धृत करने के पश्चात् उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह मत व्यक्त किया था :–

> "15. जैसीकि ऊपर चर्चा की गई है, हम पाते हैं कि आक्षेपित निर्णय को उलटने के लिए पर्याप्त आधार है । डा. जे. पी. परसाई (अभि. सा. 8) ने प्रत्यर्थी सं. 1 बल्लू का परीक्षण किया था और उसे प्रत्यर्थी सं. 1 के शरीर पर कुछ क्षतियां पाई थीं जिससे भी यह उपदर्शित होता है कि मृत्यु से पूर्व मृतक ने प्रत्यर्थियों से स्वयं को बचाने के लिए संघर्ष किया था । डा. जे. पी. परसाई ने मृतक के दोनों हाथों के नाखूनों का नमूना लिया था और उन्हें परीक्षण के लिए न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजा था ।"

18. यह चर्चा करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने उल्लेख किया कि जो वस्तुएं एस. के. बनर्जी/अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 15) द्वारा अभिगृहीत की गई थीं, उन पर न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट के अनुसार रक्त के धब्बे थे । उच्च न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि अभियुक्त इन वस्तुओं पर रक्त की मौजूदगी के विषय में कोई स्पष्टीकरण देने में असफल रहे थे । उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :–

"18. ..... प्रत्यर्थी सं. 1 ने इन वस्तुओं पर रक्त की मौजूदगी के विषय में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया था । प्रत्यर्थियों के मकान से उस स्थान तक जहां मृतक का शव पड़ा हुआ था, शव को घसीटने के रास्ते पर पाए गए रक्त के चिह्नों के साथ-साथ यह एक मजबूत कड़ी है । इससे सिद्ध होता है कि प्रत्यर्थियों ने मृतक महेश की हत्या की थी क्योंकि उसका अनिता के साथ प्रेम संबंध था । उसकी मृत्यु के पश्चात्, अनिता के छह प्रेम पत्र मृतक की जेब में पाए गए थे जिससे उपदर्शित होता है कि अनिता भी अपने परिवार के सदस्यों की इच्छा और सहमति के विरुद्ध मृतक के साथ रहना चाहती थी ।"

19. पुनरावृत्ति करते हुए, हम यह कहने के लिए बाध्य हैं कि उच्च न्यायालय के निष्कर्ष पूर्ण रूप से अटकलबाजी और अनुमानों पर आधारित हैं । यद्यपि उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश के विषय में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि का उल्लेख किया है, तो भी उच्च न्यायालय ने इसे गलत रूप से लागू किया और विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य के सही मूल्यांकन पर आधारित एक बहुत ही सकारण निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा केवल अटकलबाजी और अनुमानों के आधार पर उलट दिया गया ।

20. उच्च न्यायालय दांडिक अपील में केवल तब हस्तक्षेप कर सकता था यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता कि विचारण न्यायाधीश के निष्कर्ष या तो अनुचित थे या असंभव । जैसाकि इसमें पहले ही ऊपर चर्चा की गई है, विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में कोई अनुचितता या असंभाव्यता नहीं पाई जा सकती ।

21. किसी मामले में, यदि दो मत संभव हों और विचारण न्यायाधीश ने दूसरे मत को अधिक अधिसंभाव्य पाया हो, तो उच्च न्यायालय द्वारा तब तक हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित नहीं होगा जब तक विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अपनाया गया मत एक अनुचित या असंभव मत न हो ।

22. मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए, हमारा निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया निर्णय पूरी तरह से विधि की दृष्टि से असंधार्य है ।

23. परिणामतः, हम निम्नलिखित आदेश पारित करते हैं :–

(i) यह अपील मंजूर की जाती है ;

(ii) 1995 की दांडिक अपील सं. 261 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर द्वारा तारीख 6 अप्रैल, 2018 को पारित किए गए आक्षेपित निर्णय को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ; और

(iii) अभियुक्तों (इस अपील में अपीलार्थियों) को उन सभी आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है जिनसे उन्हें आरोपित किया गया था । अपीलार्थी पहले ही जमानत पर हैं । अतः उनके जमानत बंधपत्रों को उन्मोचित किया जाएगा ।

24. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 3 उम. नि. प. 50

सुखपाल सिंह

बनाम

राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली

[2015 की दांडिक अपील सं. 55]

7 मई, 2024

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 299 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – हत्या – अभियुक्त द्वारा अपनी पत्नी के व्यभिचारिणी होने पर संदेह करते हुए अलग स्थान पर रहना आरंभ कर देना और कभी-कभार उसके पास आते-जाते रहना – अभियुक्त द्वारा घटना से एक दिन पहले उसके पास आकर रहना और अभिकथित रूप से उसकी गला घोंटकर हत्या किया जाना – अपराध कारित करने के पश्चात् घटनास्थल से फरार हो जाना और लगभग दस वर्षों तक गिरफ्तारी न होना – घटनास्थल से एक संस्वीकृति टिप्पण प्राप्त होना – मृतका के एक निकट पड़ोसी द्वारा घटना की शिकायत किया जाना और पुलिस द्वारा उसका कथन अभिलिखित किया जाना – पुलिस द्वारा अभियुक्त को फरार दर्शित करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त की अनुपस्थिति में साक्षी (शिकायतकर्ता) का शपथ पर कथन अभिलिखित किया जाना – अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् विचारण पुनः आरंभ होने पर शिकायतकर्ता को उसके पते पर न पाया जाना और सभी संभव प्रयासों के बावजूद उसे न्यायालय में अभिसाक्ष्य देने के लिए पेश न किया जा सकना – विचारण न्यायालय द्वारा शिकायतकर्ता के शपथ पर किए गए पूर्ववर्ती कथन के आधार पर अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – शिकायतकर्ता-साक्षी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन

शपथ पर किए गए कथन से अभियुक्त द्वारा मृतका की हत्या करने का हेतु सिद्ध होने, अभियुक्त को अंतिम बार मृतका के साथ देखे जाने, उसके द्वारा अपराध कारित करने के बारे में घटनास्थल पर छोड़े गए संस्वीकृति टिप्पण की लिखावट का उसके हस्तलेख से मिलान होने, अपराध कारित करने के पश्चात् घटनास्थल से फरार हो जाने और लगभग दस वर्षों तक उसकी गिरफ्तारी न होने, शिकायतकर्ता का अभियुक्त को मिथ्या रूप से अपराध में फंसाने के लिए कोई हेतु न होने से संबंधित ऐसी परिस्थितियां हैं जो पारिस्थितिक साक्ष्य की एक पूर्ण श्रृंखला प्रदान करती हैं और जो एक सारभूत साक्ष्य के रूप में ग्रहण करने योग्य हैं तथा इसके अतिरिक्त घटना की रात्रि में मकान में केवल अभियुक्त और उसकी मृतका पत्नी के मौजूद होने पर उसकी मृत्यु हो जाने के संबंध में अभियुक्त द्वारा कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण न दिए जाने से उसकी दोषसिद्धि का निष्कर्ष निकलता है और उसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अभियुक्त-अपीलार्थी का मृतका (उषा) के साथ विवाह हुआ था और इस विवाह बंधन से तीन बालकों का जन्म हुआ । तथापि, पत्नी के व्यभिचारिणी होने का संदेह करते हुए पति-पत्नी के बीच वैवाहिक तनातनी होने लगी और इसलिए पति (अभियुक्त-अपीलार्थी) ने अपनी पत्नी के साथ रहना छोड़ दिया और उत्तर प्रदेश में अपने गांव में रहने लगा । पुलिस थाना भजनपुरा के पदधारियों को पीसीआर से एक घटना के संबंध में एक संदेश प्राप्त हुआ । उक्त सूचना पर कार्य करते हुए पुलिस उस मकान पर पहुंची और अभियुक्त-अपीलार्थी की पत्नी को उक्त मकान के एक कमरे में एक चारपाई पर मृत पड़े हुए पाया । पुलिस पदधारियों ने अपराध स्थल से एक हस्तलिखित टिप्पण भी पाया, जिस पर जो कुछ लिखा था उससे उपदर्शित हो रहा था कि इसे लिखने वाला मृतका का हत्यारा था । पुलिस पदधारियों द्वारा अभियुक्त के मकान के ठीक पास रहने वाले अशोक कुमार पाठक का कथन अभिलिखित किया गया । वह जिस फर्म में सेवारत था, उसने अभियुक्त-अपीलार्थी को भी इसी फर्म में नियोजित कराया था । उसने कथन किया कि अभियुक्त अपनी नौकरी पर जाने के

लिए गांव से आता-जाता था । कभी-कभार, वह मृतका के पास भी आता और ठहरता था । अभिकथित घटना से चार दिन पूर्व वह मृतका के पास आया था और उस दिन मृतका की बहिन भी वहां आई हुई थी । अभियुक्त (सुखपाल) ने मृतका (उषा) के साथ झगड़ा किया और चला गया । अगले दिन उषा की बहिन ने उषा के तीनों बच्चों को लिया और अपने मकान पर चली गई । घटना से पहले दिन सायंकाल में जब अशोक कुमार पाठक ड्यूटी से वापस आया और अपना भोजन करने के पश्चात् लगभग 9.30 बजे अपराह्न में उसने देखा कि सुखपाल अपनी साइकिल पर उषा के पास आया था । पति-पत्नी आंगन में एक चारपाई पर बैठकर बातचीत कर रहे थे । वह सोने के लिए छत पर चला गया और कुछ समय पश्चात् वर्षा होने लगी इसलिए वह नीचे आ गया और देखा कि सुखपाल और उषा भी अपने कमरे के अंदर चले गए थे । अगले दिन प्रात: जब वह अपना रोजमर्रा का कार्य निपटा रहा था तो उसने आंगन में सुखपाल की साइकिल खड़ी देखी और सोचा कि वह और उषा मकान के अंदर हैं । उसे सारा दिन मकान में कोई हलचल दिखाई नहीं दी और यहां तक कि लगभग 5.30 बजे अपराह्न में भी उसने उसी स्थान पर सुखपाल की साइकिल को खड़े हुए देखा किंतु न तो सुखपाल और न ही उषा दिखाई दिए । इसलिए उसने बाहर से पुकारा किंतु किसी ने उत्तर नहीं दिया, इस पर वह कमरे में गया और उषा को एक चारपाई पर मृत पड़े हुए पाया । सुखपाल वहां मौजूद नहीं था । उसने पड़ोसियों को सूचित किया जिन्होंने फिर पुलिस को बुलाया । उसे संदेह हुआ कि सुखपाल (इस अपील में अपीलार्थी) ने रात्रि के दौरान किसी समय उषा को मार दिया होगा और भाग गया होगा । इस कथन को एक शिकायत के रूप में समझा गया और उसके आधार पर पुलिस थाना, भजनपुरा में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । उषा के शव की शव-परीक्षा की गई और मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट इस प्रासंगिक राय के साथ प्राप्त हुई कि मृत्यु का कारण "हाथ से गला घोंटने के परिणामस्वरूप श्वासोवरुद्ध" हो जाना था । अभियुक्त फरार हो गया और उसे एक उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया और उसे फरार दर्शाते हुए उसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 299 के अधीन एक आरोप पत्र फाइल किया गया । शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक और पुलिस पदधारियों की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर परीक्षा की गई । अभियुक्त-अपीलार्थी को घटना के लगभग दस वर्ष पश्चात् गिरफ्तार किया जा सका । अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए एक अनुपूरक आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण, जो अभियुक्त-अपीलार्थी की गिरफ्तारी के पश्चात् पुन: आरंभ हुआ था, के दौरान शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक को अभिसाक्ष्य देने के लिए पेश नहीं किया जा सका था क्योंकि अनेक प्रयास करने के बावजूद उसका पता नहीं लगाया जा सका था । विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक की परीक्षा न कराना अभियोजन पक्ष का एक जानबूझकर किया गया कृत्य नहीं था बल्कि यह अभियोजन पक्ष के नियंत्रण से परे था । विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर परीक्षा की गई थी और उसने उसके द्वारा देखे गए घटनाक्रम का विस्तृत ब्यौरा दिया था । तद्नुसार, उक्त कथन का अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध अपराध में आलिप्त करने वाले साक्ष्य के रूप में अवलंब लिया गया । विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अभियुक्त द्वारा दिल्ली उच्च न्यायालय में फाइल की गई अपील को उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा नामंजूर कर दिया । अभियुक्त द्वारा अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश को चुनौती देते हुए उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – विचारण न्यायाधीश ने शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक का कथन तारीख 17 जुलाई, 1991 को उसे शपथ दिलाने के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन अभि. सा. 1 के रूप में अभिलिखित किया । इस कथन पर न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के साथ-साथ शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक के भी हस्ताक्षर हैं । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर तीन

और साक्षियों अर्थात् हैड कांस्टेबल मोहन लाल और सुरेन्द्र कुमार तथा निरीक्षक बाल किशन की भी परीक्षा की गई थी । इस पृष्ठभूमि में, अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की यह पुरजोर दलील कि अभियोजन पक्ष ने शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक का केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किया गया कथन प्रदर्शित किया था और उसकी कभी भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर परीक्षा नहीं की गई थी, पूर्णतया अनभिज्ञता से और मूल अभिलेख से सही स्थिति का अभिनिश्चय किए बिना की गई प्रतीत होती है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 दो भागों में है, पहले भाग में अभियुक्त व्यक्ति के फरार हो जाने के संबंध में अधिकारिता संबंधी तथ्य के सबूत के लिए उपबंध किया गया है और दूसरे भाग में यह है कि उसके गिरफ्तार किए जाने की कोई संभावना नहीं है । इस स्थिति में, उक्त उपबंध के अधीन कोई आदेश पारित किया जाता है, तो अभियुक्त की अनुपस्थिति में लिए गए किसी साक्षी के अभिसाक्ष्य को उसके विरुद्ध प्रयुक्त किया जा सकता है, यदि अभिसाक्षी मर गया है या साक्ष्य देने के लिए असमर्थ है या मिल नहीं सकता है या उसकी हाजिरी इतने विलंब, व्यय या असुविधा के बिना, जितनी कि मामले की परिस्थितियों में अनुचित होगी, नहीं कराई जा सकती है । (पैरा 26, 27, 28, 29 और 31)

इस प्रकार, हेतु, अंतिम बार देखे जाने, संस्वीकृति और अपराध करने के पश्चात् अपराध स्थल से फरार हो जाने की सभी परिस्थितियों का साक्षी अशोक कुमार पाठक (अभि. सा. 1) द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों के दौरान शपथ पर प्रतिज्ञान करके अभिलिखित किए गए तारीख 17 जुलाई, 1991 के अपने कथन में उल्लेख किया था । यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि अशोक कुमार पाठक का उषा की हत्या के लिए अभियुक्त-अपीलार्थी को मिथ्या रूप से फंसाने का किसी प्रकार का कोई हेतु नहीं था । उषा की मानव वध मृत्यु से संबंधित तथ्य विवादग्रस्त नहीं है । चिकित्सा न्यायविद (अभि. सा. 15) ने इस आशय का स्पष्ट परिसाक्ष्य दिया था कि उषा का हाथ से गला घोंटा गया था और मृत्यु का कारण श्वासोवरुद्ध हो जाना

था । इस प्रकार, हमें चिकित्सा साक्ष्य की विस्तार से चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है । अशोक कुमार पाठक का कथन स्वयमेव अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषिता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त पारिस्थितिक साक्ष्य की पूर्ण श्रृंखला प्रस्तुत करता है । अभियुक्त-अपीलार्थी अपराध स्थल से गायब हो गया था और लगभग दस वर्ष तक फरार रहा था । उसे तारीख 9 अगस्त, 2000 को गिरफ्तार किया जा सका, जिसके पश्चात् नियमित विचारण किया गया था । अभियुक्त-अपीलार्थी के फरार रहने की अवधि के दौरान, यह प्रतीत होता है कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक ने करतार नगर, दिल्ली स्थित अपने मकान को छोड़ दिया था जहां वह पहले रहा करता था । अन्वेषण अभिकरण द्वारा अशोक कुमार पाठक को समन करने और परीक्षा करने के लिए पर्याप्त प्रयास करने के बावजूद उसे ढूंढ़ा और अभियुक्त को गिरफ्तार किए जाने के पश्चात् विचारण के दौरान अभिसाक्ष्य देने के लिए साक्षी कठघरे में पेश नहीं जा सका था । भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 33 के साथ पठित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के उपबंधों पर विचार करते हुए, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके न्यायोचित किया था कि इन कार्यवाहियों में अभिलिखित किए गए अशोक कुमार पाठक के कथन को सारभूत साक्ष्य के रूप में ग्रहण करना उचित है । हम मामले के इस महत्वपूर्ण पहलू पर विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए निष्कर्षों से सहमति व्यक्त करते हैं । मृतका उषा की बहिन, सुधा (अभि. सा. 10) ने भी यह कथन किया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी अपनी पत्नी उषा के साथ उसके व्यभिचारिणी होने पर संदेह करते हुए झगड़ा करता रहता था । इस साक्षी ने यह भी कथन किया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी घटना से लगभग चार दिन पूर्व उसकी मौजूदगी में उषा के मकान पर आया था और उषा के साथ लड़ाई करने के पश्चात् चला गया था । इस प्रकार, इस साक्षी के साक्ष्य से भी हत्या करने के लिए अभियुक्त-अपीलार्थी पर अभ्यारोपित हेतु सिद्ध होता है । उसका परिसाक्ष्य यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त है कि पति-पत्नी के

बीच तनातनी के संबंध होने के बावजूद अभियुक्त-अपीलार्थी गांव खट्टा, उत्तर प्रदेश से उषा के पास आता रहता था, जहां वह अपनी पत्नी और बालकों को छोड़ने के पश्चात् रह रहा था । अभियुक्त-अपीलार्थी के नियोजक, साक्षी संजय जैन (अभि. सा. 8) ने इस आशय का साक्ष्य दिया था कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अन्वेषण के दौरान उससे अभियुक्त की स्वीकृत लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12 और प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/डी) प्राप्त की थीं । संजय जैन (अभि. सा. 8) का किसी प्रकार का कोई हेतु नहीं था जिससे अभियुक्त को इस मामले में मिथ्या रूप से फंसाया जा सके । उसने अभियुक्त को रोजगार दिया था और यह तथ्य विवादग्रस्त नहीं है । संजय जैन (अभि. सा. 8) का इस आशय का वृत्तांत कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अभियुक्त द्वारा उसके स्थापन में कार्य करते हुए लिखे गए मूललेख/दस्तावेज प्राप्त किए थे, इसकी संपुष्टि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में अभिलिखित किए गए अशोक कुमार पाठक के कथन से होती है । अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी की नमूना लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-5/डी, 5/ई और 5/एफ) उसे गिरफ्तार करने के पश्चात् विधिपूर्वक संगृहीत की गई थी और ये सभी दस्तावेज आरोप पत्र के साथ अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए थे । अभियुक्त-अपीलार्थी की इन नमूना लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-5/डी, 5/ई और 5/एफ) और स्वीकृत लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/सी और पीडब्ल्यू-12/डी) के साथ अपराध स्थल से बरामद किए गए संस्वीकृति टिप्पण (पीडब्ल्यू-12/ई) को मिलान के लिए हस्तलेख विशेषज्ञ (अभि. सा. 24) के पास भेजा गया था जहां से इस आशय की एक रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) प्राप्त हुई थी कि इन दस्तावेजों पर के हस्तलेखों का एक-दूसरे से मिलान होता है । जैसाकि विधि के अधीन अपेक्षित है, हस्तलेख विशेषज्ञ दीपा वर्मा की एक साक्षी (अभि. सा. 24) के रूप में परीक्षा की गई थी और उसने रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) को इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए साबित किया था कि अपराध स्थल से बरामद किए गए संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) का नमूना स्वीकृत लिखावट पर

अभियुक्त-अपीलार्थी के हस्तलेख से मेल खाता था । अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अन्वेषण के दौरान साक्ष्य एकत्रित करने के लिए उसके द्वारा किए गए विभिन्न उपायों को साबित करने के लिए अकाट्य साक्ष्य दिया जिससे कि अभियुक्त-अपीलार्थी को उषा की हत्या से संबद्ध किया जा सके । यह अशोक कुमार पाठक के अभिसाक्ष्य से सुदृढ़ रूप से यह तथ्य सिद्ध होता है कि अभियुक्त-अपीलार्थी हत्या से पूर्ववर्ती रात्रि को उषा के साथ मौजूद था । हत्या के पश्चात् वह फरार हो गया था और लगभग 10 वर्षों तक ढूंढ़ा नहीं जा सका था और यह भी उसके दूषित मानसिक अवस्था की ओर इंगित करने वाली एक मजबूत परिस्थिति है । (पैरा 35-40, 44 और 45)

उषा की हत्या से संबंधित परिस्थितियां अपीलार्थी की अनन्य जानकारी में थीं । उसने उस रीति के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया जिसमें उषा का उस कमरे के अंदर गला घोंटकर मृत्यु हुई थी जहां केवल वह और मृतका मौजूद थे । अभियुक्त द्वारा अपराध में गंभीर रूप से आलिप्त करने वाली इस परिस्थिति का एक स्पष्टीकरण के द्वारा प्रत्याख्यान का अस्पष्ट अभिवाक् करना भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के फलस्वरूप उस पर अधिरोपित भार से उसे छुटकारा देने के लिए पर्याप्त नहीं है । परिणामतः, इस न्यायालय को विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी की उषा की हत्या कारित करने के आरोप के लिए दोषसिद्धि और दोषसिद्धि की पुष्टि करते हुए अपनाए गए दृष्टिकोण की पुष्टि करने में कोई संकोच नहीं है । (पैरा 46 और 49)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	(2009) 7 एस. सी. सी. 104 : **जयेन्द्र विष्णु ठाकुर** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** ;	33
[2000]	(2000) 4 एस. सी. सी. 41 : **निर्मल सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य** ।	32

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की दांडिक अपील सं. 55.

2003 की दांडिक अपील सं. 296 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2010 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री अम्बरीश कुमार अग्रवाल

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री राजन कुमार चौरसिया, संजय कुमार त्यागी, (सुश्री) शिक्षा और मुकेश कुमार मरोड़िया

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संदीप मेहता ने दिया ।

न्या. मेहता – यह अपील 2003 की दांडिक अपील सं. 296 में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2010 को पारित किए गए उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, कड़कड़डुमा न्यायालय परिसर, दिल्ली (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्वारा तारीख 6 मार्च, 2003 को पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को नामंजूर कर दिया गया था ।

2. विचारण न्यायालय ने उक्त निर्णय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'भारतीय दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और उसे आजीवन कारावास और 2,000/- रुपए के जुर्माने (जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर छह माह का अतिरिक्त कठोर कारावास) का दंडादेश दिया ।

3. इस न्यायालय द्वारा इस मामले में तारीख 8 जनवरी, 2015 को इजाजत दी गई थी और अभियुक्त-अपीलार्थी को विचारण न्यायालय के समाधानप्रद जमानत बंधपत्र प्रस्तुत करने पर जमानत पर छोड़ दिया गया था ।

संक्षिप्त तथ्य

4. अभियुक्त-अपीलार्थी का उषा के साथ विवाह हुआ था और इस

विवाह बंधन से तीन बालकों का जन्म हुआ था । तथापि, पति-पत्नी के बीच वैवाहिक तनातनी होने लगी और इसलिए अपीलार्थी ने अपनी पत्नी उषा के साथ रहना छोड़ दिया और अपने गांव खट्टा, उत्तर प्रदेश में रहने लगा ।

5. पुलिस थाना भजनपुरा के अधिकारियों को तारीख 20 मई, 1990 को पीसीआर से एक घटना के संबंध में एक बेतार संदेश प्राप्त हुआ, जो रोड़ी और बदरपुर की दुकानों के बाहर घटी थी । उक्त सूचना पर कार्य करते हुए निरीक्षक ईश्वर सिंह हैड कांस्टेबल मोहन लाल, कांस्टेबल जय पाल, भगवान दास और रमेश चंद के साथ मकान सं. जे-387, गली नं. 14, करतार नगर, दिल्ली पहुंचा जहां उषा पत्नी सुखपाल (इस अपील में अपीलार्थी) को उक्त मकान के एक कमरे में एक चारपाई पर मृत पड़े हुए पाया । सरसरी निरीक्षण करने पर मृतका उषा की गर्दन, मुंह, कंधे और गुप्तांगों पर खरोंच, छिलन और अन्य क्षति चिह्नों के साथ-साथ रक्तस्राव देखा गया । घुटने के नीचे दाईं टांग पर घसीटने के चिह्न भी पाए गए । जिस चारपाई पर शव पड़ा हुआ था उसके चारों ओर दवाई की टिकियों के पत्ते बिखरे पाए गए । पुलिस पदधारियों ने अपराध स्थल से एक हस्तलिखित टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) पाए जाने का दावा किया जिस पर जो कुछ लिखा था उससे उपदर्शित हो रहा था कि इसे लिखने वाला उषा का हत्यारा था । अभियोजन पक्ष ने अभिकथन किया कि उक्त टिप्पण अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा लिखा गया था ।

6. पुलिस पदधारियों द्वारा तारीख 20 मई, 1990 को अशोक कुमार पाठक, निवासी मकान सं. जे-386, गली नं. 14, करतार नगर, दिल्ली का कथन (प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/ए) अभिलिखित किया गया जिसमें उसने कथन किया कि वह मकान सं. जे-387, गली सं. 14, करतार नगर, दिल्ली के ठीक निकट रह रहा था, जहां उषा अपने पति सुखपाल (अभियुक्त-अपीलार्थी) और तीन बालकों के साथ पिछले 3-4 वर्षों से रह रही थी । अशोक कुमार पाठक मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स में सेवारत था और उसने सुखपाल को इसी फर्म में नियोजित कराया था । सुखपाल को संदेह था कि उसकी पत्नी व्यभिचारिणी है जिसके कारण प्राय: उन दोनों के बीच झगड़ा होता रहता था और इसलिए सुखपाल ने अपनी

पत्नी और बच्चों को छोड़ दिया तथा गांव खट्टा, उत्तर प्रदेश में रहने लगा । वह अपनी नौकरी पर जाने के लिए गांव से आता-जाता था । कभी-कभार, वह उषा के पास भी आता और ठहरता था । अभिकथित घटना से चार दिन पूर्व सुखपाल उषा के पास गया था और उस दिन उषा की बहिन (सुधा) भी वहां आई हुई थी । सुखपाल ने उषा के साथ झगड़ा किया और चला गया । अगले दिन उषा की बहिन सुधा (अभि. सा. 10) ने उषा के तीनों बच्चों को लिया और अपने मकान पर चली गई । घटना से पहले दिन अर्थात् तारीख 19 मई, 1990 को सायंकाल में जब अशोक कुमार पाठक ड्यूटी से वापस आया और अपना भोजन करने के पश्चात् लगभग 9.30 बजे अपराह्न में उसने देखा कि सुखपाल अपनी साइकिल पर उषा के पास आया था । पति-पत्नी आंगन में एक चारपाई पर बैठकर बातचीत कर रहे थे । वह सोने के लिए छत पर चला गया और कुछ समय पश्चात् वर्षा होने लगी इसलिए वह नीचे आ गया और देखा कि सुखपाल और उषा भी अपने कमरे के अंदर चले गए थे । अगले दिन प्रात: अर्थात् तारीख 20 मई, 1990 को जब वह अपना रोजमर्रा का कार्य निपटा रहा था तो उसने आंगन में सुखपाल की साइकिल खड़ी देखी और सोचा कि वह और उषा मकान के अंदर हैं । उसे सारा दिन मकान में कोई हलचल दिखाई नहीं दी और यहां तक कि लगभग 5.30 बजे अपराह्न में भी उसने उसी स्थान पर सुखपाल की साइकिल को खड़े हुए देखा किंतु न तो सुखपाल और न ही उषा दिखाई दिए । इसलिए उसने बाहर से पुकारा किंतु किसी ने उत्तर नहीं दिया, इस पर वह कमरे में गया और उषा को एक चारपाई पर मृत पड़े हुए पाया । सुखपाल वहां मौजूद नहीं था । उसने पड़ोसियों को सूचित किया जिन्होंने फिर पुलिस को बुलाया । उसे संदेह हुआ कि सुखपाल (इस अपील में अपीलार्थी) ने रात्रि के दौरान किसी समय उषा को मार दिया होगा और भाग गया होगा । इस कथन को एक शिकायत के रूप में समझा गया और उसके आधार पर पुलिस थाना, भजनपुरा में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 1990 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 213 (प्रदर्श पीडब्ल्यू-13/एफ) रजिस्ट्रीकृत की गई ।

7. उषा के शव की शव-परीक्षा की गई और मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट

(प्रदर्श पीडब्ल्यू-15/ए) इस प्रासंगिक राय के साथ प्राप्त हुई कि मृत्यु का कारण "हाथ से गला घोंटने के परिणामस्वरूप श्वासोवरुद्ध" हो जाना था । जिस चारपाई पर शव पड़ा हुआ था उसके नीचे से एक संस्वीकृति पत्र/टिप्पण (प्रदर्श पी-12/ई) पाया गया और इसे ज्ञापन (प्रदर्श पीडब्ल्यू-13/बी) द्वारा अभिगृहीत किया गया और स्थल निरीक्षण ज्ञापन (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/बी) तैयार किया गया ।

8. अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने दो पत्र (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/सी और पीडब्ल्यू-12/डी) संगृहीत किए जो तात्पर्यित रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा नियोजक अर्थात् संजय जैन (अभि. सा. 8) को लिखे गए थे । नियोजक का नमूना लेटरपैड (प्रदर्श पीडब्ल्यू-13/ओ) भी संगृहीत किया गया और इसे ज्ञापन (प्रदर्श पी-13/एन) द्वारा अभिगृहीत किया गया ।

9. अभियोजन पक्ष ने अभिकथन किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी अपराध स्थल से भाग गया था । उसे ढूंढ़ने के प्रयास किए गए किंतु कोई सफलता नहीं मिली और इसलिए उसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'दंड प्रक्रिया संहिता' कहा गया है) की धारा 82 और धारा 83 के अधीन कार्यवाहियां आरंभ की गईं । अभियुक्त-अपीलार्थी को एक उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया और उसे फरार दर्शाते हुए उसके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन एक आरोप पत्र फाइल किया गया । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक, हैड कांस्टेबल मोहन लाल और सुरेन्द्र कुमार तथा निरीक्षक बाल किशन की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर परीक्षा की गई और फाइल को अभिलेख कक्ष के हवाले कर दिया गया ।

10. अभियुक्त-अपीलार्थी को तारीख 9 अगस्त, 2000 अर्थात् घटना के लगभग दस वर्ष पश्चात् गिरफ्तार किया जा सका । उसने घटनास्थल का उल्लेख करते हुए एक प्रकटन कथन किया । जब वह पुलिस अभिरक्षा में था तब उसके नमूना हस्तलेख (प्रदर्श पीडब्ल्यू-5/डी, 5/ई और 5/एफ) अभिप्राप्त किए गए । उसके पश्चात्, संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्ल्यू-12/ई), नमूना हस्तलेख (प्रदर्श पीडब्ल्यू-5/डी, पीडब्ल्यू-

5/ई और पीडब्ल्यू-5/एफ) के साथ-साथ स्वीकृत हस्तलेख (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/सी और पीडब्ल्यू-12/डी) (अभियुक्त-अपीलार्थी के नियोजक से संगृहीत किए गए) को मिलान के लिए न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजा गया । हस्तलेख विशेषज्ञ (अभि. सा. 24) ने एक रिपोर्ट जारी की जिसमें यह राय व्यक्त की गई कि संस्वीकृति पत्र/टिप्पण (अपराध स्थल से बरामद) अभियुक्त-अपीलार्थी के हस्तलेख में है ।

11. अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए एक अनुपूरक आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध उक्त अपराध के लिए आरोप विरचित किया । उसने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन के समर्थन में 24 साक्षियों की परीक्षा की और 48 दस्तावेज प्रदर्शित किए ।

12. यहां यह उल्लेख करना सुसंगत है कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक को विचारण, जो अभियुक्त-अपीलार्थी की गिरफ्तारी के पश्चात् पुन: आरंभ हुआ था, में अभिसाक्ष्य देने के लिए पेश नहीं किया गया था । विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक की परीक्षा न कराना अभियोजन पक्ष का एक जानबूझकर किया गया कृत्य नहीं था बल्कि यह अभियोजन पक्ष के नियंत्रण से परे था । विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में तारीख 17 जुलाई, 1991 को शपथ पर परीक्षा की गई थी । इस शपथ पर किए गए कथन में अशोक कुमार पाठक ने तारीख 20 मई, 1990 को उसके द्वारा पुलिस को किए गए कथन (प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/ए, जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी) पर अपने हस्ताक्षर को साबित किया और उसके द्वारा देखे गए घटनाक्रम का विस्तृत ब्यौरा दिया । अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् विचारण की कार्यवाहियों में शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक की इसलिए परीक्षा नहीं की जा सकी थी क्योंकि उसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में दिए गए पते पर ईमानदारी से किए गए सभी प्रयासों के बावजूद पाया नहीं जा सका था ।

13. विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चूंकि अशोक कुमार का वास्तव में किए गए प्रयासों के बावजूद पता नहीं लगाया जा सका था, इसलिए अभियुक्त-अपीलार्थी की अनुपस्थिति में अभिलिखित किया गया उसका शपथ पर अभिसाक्ष्य दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के उपबंधों के अनुसार साक्ष्य में ग्रहण किए जाने योग्य है । तद्नुसार, उक्त कथन का अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध अपराध में आलिप्त करने वाले साक्ष्य के रूप में अवलंब लिया गया ।

14. विचारण न्यायालय ने संस्वीकृति टिप्पण/पत्र (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) का भी यह अभिनिर्धारित करने के लिए अवलंब लिया कि इसे हस्तलेख विशेषज्ञ (अभि. सा. 24) ने रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी के हस्तलेख में होना पाया था । उक्त संस्वीकृति को अपीलार्थी के विरुद्ध एक स्वीकारोक्ति और अपराध में आलिप्त करने वाले पारिस्थितिक साक्ष्य की एक मजबूत कड़ी होना समझा गया ।

15. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में अभिलिखित किए गए अशोक कुमार पाठक के साक्ष्य और हस्तलेख विशेषज्ञ (अभि. सा. 24) के साक्ष्य का अवलंब लेते हुए विचारण न्यायालय ने संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) को अभियुक्त के भाग्य का फैसला करने के लिए एक अनधिक्षेपणीय साक्ष्य अभिनिर्धारित किया । इसकी संपुष्टि मृतका उषा की बहिन सुधा (अभि. सा. 10) के साक्ष्य से की गई । पारिस्थितिक साक्ष्य की इन अपराध में आलिप्त करने वाली कड़ियों का अवलंब लेते हुए विचारण न्यायालय ने तारीख 6 मार्च, 2003 के निर्णय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को उपरोक्त अनुसार दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करने की कार्यवाही की ।

16. अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा दिल्ली उच्च न्यायालय में फाइल की गई अपील को उच्च न्यायालय की विद्वान् खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2010 के निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए नामंजूर कर दिया कि अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा लिखे गए संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) से उसकी अपराध में आपराधिकता साबित होती है । अभियोजन पक्ष ने यह सिद्ध किया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी

मृतका उषा के साथ उसके मकान में था जहां तारीख 19 और 20 मई, 1990 की मध्यवर्ती रात्रि में उसकी हत्या की गई थी । अभियोजन पक्ष ने यह भी साबित किया है कि उक्त मध्यवर्ती रात्रि में हिंसा करके मृतका की मृत्यु कारित की गई थी और अभियुक्त-अपीलार्थी न्याय से बचने के लिए फरार हो गया था जिससे उसका दूषित आचरण सिद्ध होता है ।

17. अभियुक्त-अपीलार्थी ने विशेष इजाजत लेकर इस अपील के माध्यम से अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि करते हुए उपरोक्त निर्णय को चुनौती दी है ।

अपीलार्थी की ओर से दलीलें

18. अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करने के लिए उच्चतम न्यायालय विधिक सेवाएं समिति (एससीएलएससी) द्वारा नियुक्त किए गए विद्वान् विधिक सहायता कौंसिल ने आक्षेपित निर्णय को चुनौती देने के लिए विस्तृत दलीलें दीं । उन्होंने आग्रह किया कि :–

(i) विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गंभीर तथ्यात्मक गलती की है कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर परीक्षा की गई थी । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, यह निष्कर्ष अभिलेख के पूरी तरह से प्रतिकूल है क्योंकि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिया गया शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक का कथन वास्तव में उक्त साक्षी का थाना अधिकारी, पुलिस थाना भजनपुरा द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किया गया कथन है जिसे अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में साबित किया गया था ।

(ii) संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) एक कूटरचित साक्ष्य है क्योंकि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त-अपीलार्थी के नियोजक अर्थात् संजय जैन (अभि. सा. 8) से संगृहीत दो स्वीकृत

दस्तावेजों (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/सी और पीडब्ल्यू-12/डी) का संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) से मिलान कराने का कोई प्रयास नहीं किया गया था । यह दलील इस अभिवाक् पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना दी गई कि इन दस्तावेजों को संगृहीत करने की प्रक्रिया ही संदेह के घेरे में है क्योंकि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) को कोई अनुमान नहीं हो सकता था कि अभियुक्त ने मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स में काम किया था ।

(iii) हस्तलेख विशेषज्ञ की रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) और हस्तलेख विशेषज्ञ (अभि. सा. 24) का परिसाक्ष्य विश्वसनीय नहीं है । चूंकि विशेषज्ञ ने स्वीकृत लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12)/सी और पीडब्ल्यू-12/डी) (अभियुक्त-अपीलार्थी के नियोजन से अभिगृहीत) का संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) से मिलान करने के पश्चात् कोई राय नहीं दी थी ।

(iv) उपरोक्त पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि संस्वीकृति टिप्पण (पीडब्ल्यू-12/ई) और अभियुक्त के नमूना हस्तलेखों (प्रदर्श पीडब्ल्यू-5/डी, पीडब्ल्यू-5/ई और पीडब्ल्यू-5/एफ) का दृश्य रूप में तुलना से यह स्पष्ट हो जाता है कि दोनों हस्तलेखों में किसी प्रकार की कोई समानता नहीं है जिससे किसी निश्चितता के साथ यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि इन दस्तावेजों को लिखने वाला एक ही व्यक्ति था । इस प्रकार उन्होंने आग्रह किया कि हस्तलेख विशेषज्ञ (अभि. सा. 24) की रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) अविश्वसनीय है और अभियुक्त की दोषिता की अभिपुष्टि करने के लिए प्रयोग नहीं की जा सकती ।

(v) उन्होंने आग्रह किया कि सुधा (अभि. सा. 10) का साक्ष्य पूर्णतया अविश्वसनीय है और भरोसेमंद नहीं है तथा त्यक्त किए जाने योग्य है । अभियोजन पक्ष द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी और उषा ने एक-दूसरे से विवाह-विच्छेद कर लिया था और इस प्रकार यह पूर्णतया

अविश्वसनीय है कि अभियुक्त-अपीलार्थी घटना से कुछ दिन पूर्व आया था और उषा के साथ ठहरा था, जैसाकि सुधा (अभि. सा. 10) द्वारा दावा किया गया है । उन्होंने आग्रह किया कि सुधा (अभि. सा. 10) का साक्ष्य भरोसेमंद नहीं है और त्यक्त किए जाने योग्य है ।

(vi) अभियोजन पक्ष का यह दावा कि अभियुक्त-अपीलार्थी फरार था, पूर्णतया निराधार है क्योंकि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से यह वर्णित है कि अभियुक्त-अपीलार्थी मृतका उषा के साथ विवाह-विच्छेद कर लेने के पश्चात् अपने गांव खट्टा, उत्तर प्रदेश में रहने लगा था । तथापि, अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अभियुक्त-अपीलार्थी को उसके गांव से गिरफ्तार करने के लिए किसी प्रकार का कोई प्रयास नहीं किया था ।

(vii) तात्विक अभियोजन साक्षियों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि मृतका उषा देह व्यापार में संलिप्त थी और संदीप कुमार उसकी सेवाओं के लिए लुभाता था । पुलिस द्वारा उषा की मृत्यु के संदेह के आधार पर संदीप कुमार और राजबीर सिंह (अभि. सा. 14) को गिरफ्तार किया गया था, तथापि, इस पहलू पर उचित अन्वेषण नहीं किया गया था । इनके अनुसार, किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उषा की हत्या किए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता ।

19. विद्वान् काउंसेल ने यह आग्रह करते हुए अपनी दलीलों का समापन किया कि यह मामला पूरी तरह से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों की संपूर्ण श्रृंखला को सिद्ध किया जाना चाहिए जिससे केवल एक निष्कर्ष निकलता हो जो अभियुक्त की दोषिता के संगत और किसी अन्य व्यक्ति की दोषिता के असंगत हो । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, इस श्रृंखला को सटीक और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा निश्चायक रूप से सिद्ध नहीं किया गया था और इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा यथा अभिलिखित और उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि की गई अभियुक्त-

अपीलार्थी की दोषसिद्धि असंधार्य है और इसे अपास्त किया जाना चाहिए ।

प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से दलीलें

20. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों का पुरजोर विरोध किया और दलील दी कि अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों की श्रृंखला हर प्रकार से पूर्ण है जो निश्चायक रूप से अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती है । विद्वान् काउंसेल ने इस अपील को खारिज करने और अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए न्यायालय से याचना करते हुए निम्नलिखित प्रासंगिक दलीलें दीं :–

(i) अशोक कुमार पाठक का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों के दौरान अभि. सा. 1 के रूप में अभिलिखित किए गए कथन का इसे ग्राह्य और विश्वसनीय साक्ष्य होने के रूप में ठीक ही अवलंब लिया गया था । विचारण के दौरान अशोक कुमार पाठक की परीक्षा न कराना अभियोजन पक्ष का एक जानबूझकर किया गया कृत्य नहीं है बल्कि अभियुक्त-अपीलार्थी की गिरफ्तारी के पश्चात् नियमित विचारण के दौरान परीक्षा नहीं की जा सकी थी । अभियोजन अभिकरण द्वारा सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद इस साक्षी का पता नहीं लगाया जा सका था । अभियुक्त का लंबे समय से फरार रहना अशोक कुमार पाठक की परीक्षा न कराने का प्राथमिक कारण है ।

(ii) शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों के दौरान अभि. सा. 1 के रूप में अपने साक्ष्य में अपने कथन (प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/ए, जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी) पर अपने हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की गई थी और उसमें किए गए प्रकथनों के बारे में विस्तार से बताया था जो उसने स्वयं अपनी आंखों से देखा था ।

(iii) अशोक कुमार पाठक के साक्ष्य से तारीख 19/20 मई, 1990 की मध्यवर्ती रात्रि को अभियुक्त-अपीलार्थी की उषा के साथ मौजूदगी स्पष्ट रूप से सिद्ध होती है, जिसके पश्चात् इस महिला की हत्या की गई पाई गई थी और अभियुक्त को अपराध स्थल से एक संस्वीकृति टिप्पण छोड़कर फरार पाया गया था । अशोक कुमार पाठक ने अपीलार्थी के अपराध कारित करने के हेतु के बारे में भी साबित किया है ।

(iv) उषा की बहिन सुधा (अभि. सा. 10) के परिसाक्ष्य से सिद्ध होता है कि अभियुक्त-अपीलार्थी उषा के साथ उसके व्यभिचारिणी होने पर संदेह करते हुए झगड़ा करता रहता था और पति-पत्नी के बीच अनेक बार कहा-सुनी हुई थी । घटना से ठीक चार दिन पूर्व उनके बीच लड़ाई हुई थी । इस बात से भी अपराध कारित करने के लिए अपीलार्थी पर अभ्यारोपित हेतु सिद्ध होता है ।

(v) यह दर्शित करने के लिए कि अभियुक्त-अपीलार्थी और उषा का विवाह-विच्छेद हो गया था संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12 में इस बाबत किए गए एक अस्पष्ट कथन के सिवाय अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं है ।

(vi) हस्तलेख विशेषज्ञ, दीपा वर्मा (अभि. सा. 24) द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) से साबित होता है कि संस्वीकृति टिप्पण जो अपराध स्थल से बरामद हुआ था, पर हस्तलेख का मिलान अभियुक्त-अपीलार्थी के नियोजक से संगृहीत दो स्वीकृत दस्तावेजों (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/सी और पीडब्ल्यू-12/डी) और अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा पुलिस को दिए गए नमूना हस्तलेखों से मिलान होता है जिससे इस तथ्य के बारे में निष्कर्ष निकलता है कि संस्वीकृति टिप्पण अभियुक्त के हस्तलेख में था ।

21. विद्वान् काउंसेल ने आग्रह किया कि अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी के विरुद्ध मामले को अपराध में आलिप्त करने वाले

पारिस्थितिक साक्ष्य की सटीक और विश्वसनीय श्रृंखला प्रस्तुत करके सिद्ध किया है और न्यायालय से इस अपील को खारिज करने की याचना की ।

22. हमने पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर गंभीरता से विचार किया है और विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के निर्णयों के साथ-साथ अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का परिशीलन किया है ।

चर्चा और निष्कर्ष

23. अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् विधिक सहायता काउंसेल श्री अम्बरीश कुमार अग्रवाल द्वारा विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के निष्कर्षों की आलोचना करने के लिए दी गई दलीलों का मुख्य आधार यह था कि दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की थी कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक का कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर अभिलिखित किया गया था । श्री अग्रवाल के अनुसार, अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) द्वारा शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक के केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए कथन को प्रदर्शित किया गया था और वह कभी भी साक्षी कठघरे में नहीं आया ।

24. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की इस पुरजोर दलील का सत्यापन करने के लिए हमने अभिलेख का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया और पाया कि दी गई यह दलील निराधार है । अभियुक्त-अपीलार्थी फरार था और गिरफ्तार नहीं किया जा सका था और इसलिए अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने सभी संभव प्रयास किए थे जिनमें गिरफ्तारी वारंट उपाप्त करना, इसे अपीलार्थी के गांव अर्थात् खट्टा, उत्तर प्रदेश में तामील करने का प्रयास करना सम्मिलित है । उसने अभियुक्त-अपीलार्थी को विभिन्न अवस्थानों पर पता लगाने की कोशिश की थी किंतु कोई सफलता नहीं मिली । अभिलेख पर जो वारंट उपलब्ध

है उस पर स्पष्ट रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी का पता खट्टा, प्रह्लादपुर, बागपत, उत्तर प्रदेश के रूप में अंकित है ।

25. यहां तक कि उद्घोषणा और कुर्की की कार्यवाहियां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 82 और 83 के अधीन की गई थीं किंतु कोई फायदा नहीं हुआ क्योंकि अभियुक्तअपीलार्थी अपराध करने के पश्चात् गायब हो गया था और अपराध स्थल पर या उसके ज्ञात पते अर्थात् गांव खट्टा, उत्तर प्रदेश में नहीं पाया गया था । उसके फरार हो जाने से संबंधित तथ्य को प्रकाशित भी किया गया था । तद्नुसार, अभियुक्त-अपीलार्थी को फरार दर्शित करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन एक आरोप पत्र फाइल किया गया था ।

26. विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी को फरार घोषित करते हुए तारीख 18 मार्च, 1991 को एक आदेश पारित किया और अभियोजन पक्ष को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन प्रक्रिया का आश्रय लेकर विचारण के लिए अग्रसर होने की अनुज्ञा प्रदान की गई थी । इस आदेश को कभी भी किसी न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया गया था ।

27. विचारण न्यायाधीश ने शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक का कथन तारीख 17 जुलाई, 1991 को उसे शपथ दिलाने के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन अभि. सा. 1 के रूप में अभिलिखित किया जो निम्नलिखित रीति में आरंभ होता है :–

> "श्री अशोक कुमार पाठक पुत्र श्री राम पूर्ण, आयु 28 वर्ष, निवासी करतार नगर, गली सं. 14, दिल्ली ने एस. ए. पर (शपथ पर प्रतिज्ञान) .....।"

28. इस कथन पर न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के साथ-साथ शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक के भी हस्ताक्षर हैं । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर तीन और साक्षियों अर्थात् हैड कांस्टेबल मोहन लाल और सुरेन्द्र कुमार तथा निरीक्षक बाल किशन की भी परीक्षा की गई थी ।

29. इस पृष्ठभूमि में, अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की

यह पुरजोर दलील कि अभियोजन पक्ष ने शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक का केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किया गया कथन प्रदर्शित किया था और उसकी कभी भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में शपथ पर परीक्षा नहीं की गई थी, पूर्णतया अनभिज्ञता से और मूल अभिलेख से सही स्थिति का अभिनिश्चय किए बिना की गई प्रतीत होती है ।

30. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 में अभियुक्त की अनुपस्थिति में साक्ष्य अभिलिखित करने की न्यायालय की शक्ति निम्नलिखित शब्दों में अभिव्यक्त रूप से उपबंधित है :–

> "**299. अभियुक्त की अनुपस्थिति में साक्ष्य का अभिलेखन –** (1) यदि यह साबित कर दिया जाता है कि अभियुक्त व्यक्ति फरार हो गया है और उसके तुरंत गिरफ्तार किए जाने की कोई संभावना नहीं है तो उस अपराध के लिए, जिसका परिवाद किया गया है, उस व्यक्ति का विचारण करने के लिए या विचारण के लिए सुपुर्द करने के लिए सक्षम न्यायालय अभियोजन की ओर से पेश किए गए साक्षियों की (यदि कोई हो), इसकी अनुपस्थिति में परीक्षा कर सकता है और उनका अभिसाक्ष्य अभिलिखित कर सकता है और ऐसा कोई अभिसाक्ष्य उस व्यक्ति के गिरफ्तार होने पर, उस अपराध की जांच या विचारण में, जिसका उस पर आरोप है, उसके विरुद्ध साक्ष्य में दिया जा सकता है यदि अभिसाक्षी मर गया है, या साक्ष्य देने के लिए असमर्थ है, या मिल नहीं सकता है या उसकी हाजिरी इतने विलंब, व्यय या असुविधा के बिना, जितनी की मामले की परिस्थितियों में अनुचित होगी, नहीं कराई जा सकती है ।
>
> (2) यदि यह प्रतीत होता है कि मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय कोई अपराध किसी अज्ञात व्यक्ति या किन्हीं अज्ञात व्यक्तियों द्वारा किया गया है, तो उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय निदेश दे सकता है कि कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट जांच करे और किन्हीं साक्षियों की जो अपराध के बारे में साक्ष्य दे सकते हों, परीक्षा करे और ऐसे लिया गया कोई अभिसाक्ष्य, किसी ऐसे

व्यक्ति के विरुद्ध जिस पर अपराध का तत्पश्चात् अभियोग लगाया जा सकता है, साक्ष्य में दिया जा सकता है और अभिसाक्षी मर जाता है या साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो जाता है या भारत की सीमाओं से परे है ।"

31. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 दो भागों में है, पहले भाग में अभियुक्त व्यक्ति के फरार हो जाने के संबंध में अधिकारिता संबंधी तथ्य के सबूत के लिए उपबंध किया गया है और दूसरे भाग में यह है कि उसके गिरफ्तार किए जाने की कोई संभावना नहीं है । इस स्थिति में, उक्त उपबंध के अधीन कोई आदेश पारित किया जाता है, तो अभियुक्त की अनुपस्थिति में लिए गए किसी साक्षी के अभिसाक्ष्य को उसके विरुद्ध प्रयुक्त किया जा सकता है, यदि अभिसाक्षी मर गया है या साक्ष्य देने के लिए असमर्थ है या मिल नहीं सकता है या उसकी हाजिरी इतने विलंब, व्यय या असुविधा के बिना, जितनी कि मामले की परिस्थितियों में अनुचित होगी, नहीं कराई जा सकती है ।

32. **निर्मल सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने इस विवाद्यक पर विचार करते हुए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन किसी साक्षी के कथन को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 33 के अधीन ग्राह्य होने के लिए मामले में किन परिस्थितियों में और किस पद्धति से दिया जा सकता था और क्या उसके आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती थी, निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

"4. ..... दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 दो भागों में है । पहले भाग में उन परिस्थितियों को बताया गया है जिनमें अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए साक्षियों की अभियुक्त की अनुपस्थिति में परीक्षा की जा सकती है और दूसरे भाग में उन परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है जब ऐसे अभिसाक्ष्य को अभियुक्त के विरुद्ध उस अपराध के लिए, जिसके लिए वह आरोपित है, किसी जांच या विचारण में साक्ष्य में दिया जा सकता है । इस प्रकार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन

[1] (2000) 4 एस. सी. सी. 41.

अनुध्यात यह प्रक्रिया साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 में सन्निविष्ट सिद्धांत का अपवाद है क्योंकि धारा 33 के अधीन किसी ऐसे साक्षी का साक्ष्य, जिसका किसी पक्षकार को प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार या अवसर नहीं मिला है, विधिक रूप से ग्राह्य नहीं है । अत: एक अपवाद होने के कारण यह आवश्यक है कि सभी विहित शर्तों का अवश्य कड़ाईपूर्वक पालन किया जाना चाहिए । दूसरे शब्दों में, अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए साक्षियों का कथन अभिलिखित करने से पूर्व न्यायालय का अवश्य यह समाधान हो जाना चाहिए कि अभियुक्त फरार हो गया है या उसे तुरंत गिरफ्तार करने की कोई संभावना नहीं है, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299(1) के पहले भाग में उपबंधित है .....।

..... विधि की इस प्रतिपादना से संभवत: कोई विवाद नहीं हो सकता कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के फायदों को लेने के लिए इसमें दी गई पुरोभाव्य शर्तों को सम्यक् रूप से सिद्ध किया जाना चाहिए और अभियोजन पक्ष को, जो विचारण में साक्ष्य के रूप में उक्त कथन का उपयोग करना चाहता है, साक्ष्य पेश करने से पूर्व पुरोभाव्य शर्तों की विद्यमानता के बारे में साबित करना चाहिए.....।

..... दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 तथा साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के परिशीलन मात्र से हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई संकोच नहीं है कि दोनों धाराओं में की पुरोभाव्य शर्तों को अभियोजन पक्ष द्वारा अवश्य सिद्ध किया जाना चाहिए और केवल तब ही अभियुक्त की गिरफ्तारी से पूर्व दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन अभिलिखित किए गए साक्षियों के कथनों को ऐसे अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् विचारण में केवल तभी साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जा सकता है यदि ऐसे व्यक्ति मर गए हैं या उपलब्ध नहीं हो सकेंगे या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299(1) के दूसरे भाग में प्रगणित किसी अन्य शर्त को सिद्ध किया जाता है .....।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

33. इसके अतिरिक्त, **जयेन्द्र विष्णु ठाकुर** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "25. यह भी किसी नुकताचीनी से परे है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के उपबंधों का कठोर निर्वचन किया जाना चाहिए और इस प्रकार इसका सावधानीपूर्वक अनुपालन करना अत्यावश्यक है । कानून के निर्वचन का यह एक सुविख्यात सिद्धांत है कि कानूनी उपबंध में परिभाषित किसी शब्द का इसके अन्य उपबंधों का अर्थान्वयन करते समय मामूली तौर पर वही अर्थ लगाया जाना चाहिए जहां उसी शब्द को प्रयुक्त किया गया है । साक्ष्य अधिनियम की धारा 3 के अधीन किसी अन्य तथ्य की भांति अभियोजन पक्ष को साक्ष्य प्रस्तुत करके अवश्य साबित करना चाहिए और कानून द्वारा साबित किए जाने के लिए अपेक्षित तथ्य के संबंध में न्यायालय द्वारा एक निश्चित स्पष्ट निष्कर्ष निकालना चाहिए । साक्ष्य का अस्तित्व में होना पर्याप्त नहीं है अपितु उस पर न्यायालय द्वारा विवेक का प्रयोग करने के साथ-साथ साक्ष्य के उस भाग पर अवलंब लेने के प्रयोजन के लिए सामग्री का विश्लेषण करना और/या उसका मूल्यांकन करना अत्यावश्यक है ।
>
> 29. निर्विवाद रूप से, संहिता की धारा 299 के पहले भाग में अंतर्विष्ट दोनों शर्तों को संयुक्त रूप से पढ़ा जाना चाहिए न कि अलग-अलग । एक ही अपेक्षा का समाधान पर्याप्त नहीं होना चाहिए ..... ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

34. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में तारीख 17 जुलाई, 1991 को अभिलिखित किया गया अशोक कुमार पाठक का कथन निम्नलिखित है :–

> "मैं मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स, भागीरथ पैलेस में औषधियों की एक दुकान में पिछले लगभग सात वर्षों से सेल्समैन/सप्लाई

[1] (2009) 7 एस. सी. सी. 104.

मैन के रूप में कार्य कर रहा हूं । मेरे पड़ोस में अभियुक्त सुखपाल अपनी पत्नी उषा और बालकों के साथ मकान सं. 387, गली सं. 14, करतार नगर में इस मामले से पूर्व पिछले 3/4 वर्षों से रहता था । उसकी दो पुत्रियां और एक पुत्र हैं । बाद में वह भी मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स, भागीरथ पैलेस में मेरी सहायता से नौकरी करने लगा । अभियुक्त अपनी पत्नी श्रीमती उषा के व्यभिचारिणी होने पर संदेह करता था और इस कारण से उनके अच्छे संबंध नहीं थे और वे आपस में झगड़ा करते रहते थे । इस मामले के घटित होने से पूर्व अभियुक्त अपनी पत्नी श्रीमती उषा और तीन बालकों को उपरोक्त उक्त मकान पर छोड़कर उत्तर प्रदेश में अपने गांव खट्टा चला गया और वहीं से अपनी दुकान पर आता था । कभी-कभार वे उसके मकान पर उसकी पत्नी उषा के पास जाते रहते थे । इस घटना से लगभग चार दिन पहले अभियुक्त सुखपाल अपने मकान पर आया था जहां उषा की बहिन को भी अपने मकान पर उषा के साथ मौजूद पाया और उस दिन सुखपाल ने अपनी पत्नी से झगड़ा किया और फिर वापस चला गया । अगले दिन उषा की बहिन भी उषा के तीनों बालकों के साथ अपनी बहिन को उसके मकान पर अकेला छोड़कर अपने मकान पर चली गई ।

तारीख 19 मई, 1990 को लगभग 10.30 बजे अपराह्न में मैंने अभियुक्त सुखपाल को, जो एक साइकिल पर अपने मकान पर आया था, अपनी पत्नी के साथ अपने मकान के आंगन में एक चारपाई पर बातचीत करते हुए देखा और मैं अपने मकान की छत पर चला गया और सो गया । रात्रि में जब वर्षा होने लगी तो मैं छत से नीचे आया और मैंने अभियुक्त सुखपाल को अपनी पत्नी के साथ उनके कमरे के अंदर जाते हुए देखा । वे दोनों अपने कमरे के अंदर गए । अगले दिन सुबह छुट्टी के कारण (रविवार होने के कारण छुट्टी) मैं कुछ देर से जागा और अपने दैनिक नित्य कार्य करने लगा । मैंने सुखपाल की साइकिल को उसके मकान के आंगन में खड़ा हुआ पाया । मैंने सोचा कि वे दोनों अपने कमरे में होंगे । दोपहर में मैंने पुन: सुखपाल की साइकिल को मकान के

आंगन में खड़ा पाया किंतु उनमें से कोई उनके कमरे के बाहर दिखाई नहीं दिया । सायंकाल में लगभग 5.30 बजे जब मैंने उन्हें पुकारा तो उनके मकान से कोई उत्तर नहीं आया किंतु कमरे का दरवाजा खुला हुआ था । जब मैंने उषा के कमरे में प्रवेश किया तो मैंने श्रीमती उषा को चारपाई पर मृत पड़े हुए पाया और अभियुक्त सुखपाल को वहां से गायब पाया । मैंने निकटवर्ती निवासियों को सूचित किया जिन्होंने पुलिस को बुलाया । अभियुक्त सुखपाल रात्रि में अपनी पत्नी उषा की हत्या करने के पश्चात् अपने मकान से भाग गया था । पुलिस वहां आई और कार्यवाहियां पूर्ण कीं । मैंने पुलिस को अपना कथन किया और मैंने अपने कथन पर हस्ताक्षर किए जो प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/ए है और सही है । मोहल्ले के अन्य लोग भी वहां एकत्रित थे ।

श्रीमती उषा के गले और कंधे, गर्दन पर बहुत सारी क्षतियां थीं । चादर पर रक्त लगा था जिस पर औषधियां बिखरी हुई पाई थीं और अभियुक्त सुखपाल द्वारा अपनी पत्नी उषा की हत्या के संबंध में हिंदी में लिखा गया पत्र भी चारपाई के नीचे पाया था ।

मैंने उस पत्र पर सुखपाल के हस्तलेख की शनाख्त की । क्योंकि वह पूर्वोक्त औषधि की दुकान पर मेरे साथ काम करता था जहां हम दस्तावेज तैयार करते थे और लिखते थे । मैंने उपरोक्त उक्त दुकान पर उसे मेरे साथ हस्ताक्षर और दस्तावेज लिखते हुए देखा था । पुलिस ने ज्ञापन प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/बी द्वारा उस पत्र को अभिगृहीत किया और मैंने उस पर हस्ताक्षर किए ।

अभियुक्त सुखपाल की एक एवन पुरानी साइकिल को एक ज्ञापन द्वारा अभिगृहीत किया गया था जो प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/डी है । मैंने उस पर हस्ताक्षर किए थे । मैंने पहले भी अभियुक्त को वह साइकिल प्रयोग करते हुए देखा था और इसलिए मैंने इसे अभियुक्त सुखपाल की होने के रूप में शनाख्त की थी । सुरेन्द्र कुमार ने भी ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए थे जो वहां मौजूद था ।

तारीख 22 मई, 1990 को मैं मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स की

दुकान, 1696/8 प्रथम तल, मोहन बिल्डिंग भागीरथ पैलेस पर ड्यूटी पर उपस्थित था जहां अभियुक्त सुखपाल भी काम करता था । उस दिन पुलिस पदधारी दुकान पर आए जहां उपरोक्त उक्त दुकान के स्वामी, संजीव कुमार ने पुलिस को दो पत्र दिए । एक पत्र सुखपाल द्वारा मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स को लिखा गया सेवा से त्यागपत्र के लिए आवेदन था और 12.06.89 का दूसरा पत्र आर. पी. एसोसिएट्स को संबोधित था जिसमें उसे सेवा में लेने का अनुरोध किया गया था । ये दोनों पत्र अभियुक्त सुखपाल द्वारा लिखे गए थे और इन पर हस्ताक्षर किए गए थे । मैंने उन पर उसके हस्तलेख और हस्ताक्षर की शनाख्त की । ये पत्र प्रदर्श पीडब्ल्यू/ई और प्रदर्श पीडब्ल्यू/एफ हैं । ये पत्र ज्ञापन प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/जी द्वारा अभिगृहीत किए गए थे और मैंने इन पर हस्ताक्षर किए थे । सुखपाल द्वारा लिखित पुलिस अधिकारी को संबोधित पत्र प्रदर्श पी-1 है जिसे पुलिस द्वारा घटनास्थल से अभिगृहीत किया गया था और जिसे ज्ञापन प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/बी द्वारा कब्जे में लिया गया था । उपरोक्त उक्त दुकान के स्वामी संजय जैन ने पुलिस को लैटरपैड का एक पन्ना दिया था जिसने इसे ज्ञापन प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/एच द्वारा अभिगृहीत किया था और मैंने इस पर हस्ताक्षर किए थे ।"

35. अशोक कुमार पाठक का कथन (ऊपर उद्धृत) निम्नलिखित परिस्थितियों का सकारात्मक और अविचल सबूत देता है :–

(i) अभियुक्त-अपीलार्थी सुखपाल का विवाह उषा (मृतका) के साथ हुआ था ।

(ii) उषा की संदेहास्पद व्यभिचारिता को लेकर पति-पत्नी के बीच दांपत्तिक तनातनी चल रही थी और इस आधार पर वे आपस में झगड़ते रहते थे । अभियुक्त-अपीलार्थी ने अपनी पत्नी उषा और अपने तीन बालकों को छोड़ दिया और गांव खट्टा, उत्तर प्रदेश में रहने लगा । अभियुक्त की उषा की संदेहास्पद व्यभिचारिता को लेकर उसकी हत्या के लिए अभियुक्त पर एक प्रबल हेतु लगाया गया है ।

(iii) अशोक कुमार पाठक ने अभियुक्त-अपीलार्थी के लिए मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स में एक नौकरी को सुकर बनाया था ।

(iv) अनबन और अप्रिय संबंध के बावजूद अभियुक्त-अपीलार्थी प्राय: अपनी पत्नी के पास आता रहता था और उसके पास ठहरता था । घटना से चार दिन पूर्व वह आया था और उषा के पास ठहरा था और उस समय पर उषा की बहिन, सुधा भी मौजूद थी । सुखपाल ने उषा के साथ उसकी बहिन की मौजूदगी में झगड़ा किया और फिर चला गया ।

(v) घटना से एक दिन पूर्व भी अभियुक्त-अपीलार्थी मकान सं. जे-387, गली सं. 4, करतार नगर, दिल्ली आया था जहां अभिकथित घटना घटी थी और उषा के पास ठहरा था ।

(vi) साक्षी अशोक कुमार पाठक ने अभियुक्त-अपीलार्थी को अपनी साइकिल मकान के आंगन में खड़ा करते हुए देखा । उसने अभियुक्त-अपीलार्थी (सुखपाल) और पत्नी (उषा) को आंगन में एक चारपाई पर बैठे हुए आपस में बात करते हुए भी देखा । फिर वर्षा होने लगी जिस पर दोनों आंगन से मकान के अंदर जाते हुए देखे गए । अगले दिन प्रात:, न तो अभियुक्त-अपीलार्थी और न ही उषा को कहीं देखा गया ।

(vii) साक्षी सायंकाल में उषा के मकान पर गया और उसके शव को बहुत सारी क्षतियों के साथ चारपाई पर पड़े हुए देखा जबकि अभियुक्त-अपीलार्थी गायब था । अभियुक्त-अपीलार्थी की साइकिल अभी भी मकान के आंगन में खड़ी थी ।

(viii) हत्या की संस्वीकृति करते हुए एक हस्तलिखित टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) उस चारपाई के नीचे पड़ा हुआ पाया जिस पर शव पड़ा हुआ था । साक्षी ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया कि यह टिप्पण अभियुक्त-अपीलार्थी के हस्तलेख में लिखा हुआ था जिसको यह साक्षी दोनों के एक ही प्रतिष्ठान (मैसर्स आर. पी. एसोसिएट्स) में पर्याप्त समय तक एक साथ काम करने के कारण शनाख्त कर सका था ।

36. इस प्रकार, हेतु, अंतिम बार देखे जाने, संस्वीकृति और अपराध करने के पश्चात् अपराध स्थल से फरार हो जाने की सभी परिस्थितियों का साक्षी अशोक कुमार पाठक (अभि. सा. 1) द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों के दौरान शपथ पर प्रतिज्ञान करके अभिलिखित किए गए तारीख 17 जुलाई, 1991 के अपने कथन में (ऊपर उद्धृत) उल्लेख किया था । यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि अशोक कुमार पाठक का उषा की हत्या के लिए अभियुक्त-अपीलार्थी को मिथ्या रूप से फंसाने का किसी प्रकार का कोई हेतु नहीं था ।

37. उषा की मानव वध मृत्यु से संबंधित तथ्य विवादग्रस्त नहीं है । चिकित्सा न्यायविद (अभि. सा. 15) ने इस आशय का स्पष्ट परिसाक्ष्य दिया था कि उषा का हाथ से गला घोंटा गया था और मृत्यु का कारण श्वासोवरुद्ध हो जाना था । इस प्रकार, हमें चिकित्सा साक्ष्य की विस्तार से चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है ।

38. अशोक कुमार पाठक का कथन स्वयमेव अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषिता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त पारिस्थितिक साक्ष्य की पूर्ण श्रृंखला प्रस्तुत करता है । अभियुक्त-अपीलार्थी अपराध स्थल से गायब हो गया था और लगभग दस वर्ष तक फरार रहा था । उसे तारीख 9 अगस्त, 2000 को गिरफ्तार किया जा सका, जिसके पश्चात् नियमित विचारण किया गया था । अभियुक्त-अपीलार्थी के फरार रहने की अवधि के दौरान, यह प्रतीत होता है कि शिकायतकर्ता अशोक कुमार पाठक ने करतार नगर, दिल्ली स्थित अपने मकान को छोड़ दिया था जहां वह पहले रहा करता था । अन्वेषण अभिकरण द्वारा अशोक कुमार पाठक को समन करने और परीक्षा करने के लिए पर्याप्त प्रयास करने के बावजूद उसे ढूंढ़ा और अभियुक्त को गिरफ्तार किए जाने के पश्चात् विचारण के दौरान अभिसाक्ष्य देने के लिए साक्षी कठघरे में पेश नहीं किया जा सका था ।

39. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 33 के साथ पठित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के उपबंधों पर **निर्मल सिंह** (उपर्युक्त) और **जयेन्द्र विष्णु ठाकुर** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा किए गए निर्वचन के आलोक में विचार करते हुए, विचारण न्यायालय ने

यह अभिनिर्धारित करके न्यायोचित किया था कि इन कार्यवाहियों में अभिलिखित किए गए अशोक कुमार पाठक के कथन को सारभूत साक्ष्य के रूप में ग्रहण करना उचित है । हम मामले के इस महत्वपूर्ण पहलू पर विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए निष्कर्षों से सहमति व्यक्त करते हैं ।

40. मृतका उषा की बहिन, सुधा (अभि. सा. 10) ने भी यह कथन किया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी अपनी पत्नी उषा के साथ उसके व्यभिचारिणी होने पर संदेह करते हुए झगड़ा करता रहता था । इस साक्षी ने यह भी कथन किया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी घटना से लगभग चार दिन पूर्व उसकी मौजूदगी में उषा के मकान पर आया था और उषा के साथ लड़ाई करने के पश्चात् चला गया था । इस प्रकार, इस साक्षी के साक्ष्य से भी हत्या करने के लिए अभियुक्त-अपीलार्थी पर अभ्यारोपित हेतु सिद्ध होता है । उसका परिसाक्ष्य यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त है कि पति-पत्नी के बीच तनातनी के संबंध होने के बावजूद अभियुक्त-अपीलार्थी गांव खट्टा, उत्तर प्रदेश से उषा के पास आता रहता था, जहां वह अपनी पत्नी और बालकों को छोड़ने के पश्चात् रह रहा था ।

41. अभियुक्त-अपीलार्थी के नियोजक, साक्षी संजय जैन (अभि. सा. 8) ने इस आशय का साक्ष्य दिया था कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अन्वेषण के दौरान उससे अभियुक्त की स्वीकृत लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12 और प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/डी) प्राप्त की थीं । संजय जैन (अभि. सा. 8) का किसी प्रकार का कोई हेतु नहीं था जिससे अभियुक्त को इस मामले में मिथ्या रूप से फंसाया जा सके । उसने अभियुक्त को रोजगार दिया था और यह तथ्य विवादग्रस्त नहीं है । संजय जैन (अभि. सा. 8) का इस आशय का वृत्तांत कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अभियुक्त द्वारा उसके स्थापन में कार्य करते हुए लिखे गए मूल लेख/दस्तावेज प्राप्त किए थे, इसकी संपुष्टि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन कार्यवाहियों में अभिलिखित किए गए अशोक कुमार पाठक के कथन से होती है ।

42. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की यह दलील कि दो

व्यक्ति अर्थात् संदीप कुमार और राजबीर सिंह (अभि. सा. 14) के उषा के साथ अयुक्त संबंध थे और हो सकता है उन्होंने इस महिला की हत्या की हो, निराधार है क्योंकि अशोक कुमार पाठक द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 299 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने परिसाक्ष्य में जो कुछ कहा था, उसको देखते हुए यह स्पष्ट है कि जिस रात्रि को उषा की हत्या की गई थी, उस रात्रि को उषा के साथ अभियुक्त-अपीलार्थी के सिवाय मकान में कोई मौजूद नहीं था ।

43. अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अभियुक्त की तारीख 9 अगस्त, 2000 को अर्थात् घटना के दस वर्षों से अधिक के पश्चात् गिरफ्तारी की प्रक्रिया सम्यक् रूप से साबित किया है ।

44. अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी की नमूना लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-5/डी, 5/ई और 5/एफ) उसे गिरफ्तार करने के पश्चात् विधिपूर्वक संगृहीत की गई थी और ये सभी दस्तावेज आरोप पत्र के साथ अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए थे । अभियुक्त-अपीलार्थी की इन नमूना लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-5/डी, 5/ई और 5/एफ) और स्वीकृत लिखावट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/सी और पीडब्ल्यू-12/डी) के साथ अपराध स्थल से बरामद किए गए संस्वीकृति टिप्पण (पीडब्ल्यू-12/ई) को मिलान के लिए हस्तलेख विशेषज्ञ (अभि. सा. 24) के पास भेजा गया था जहां से इस आशय की एक रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) प्राप्त हुई थी कि इन दस्तावेजों पर के हस्तलेखों का एक-दूसरे से मिलान होता है । जैसा कि विधि के अधीन अपेक्षित है, हस्तलेख विशेषज्ञ दीपा वर्मा की एक साक्षी (अभि. सा. 24) के रूप में परीक्षा की गई थी और उसने रिपोर्ट (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/एफ) को इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए साबित किया था कि अपराध स्थल से बरामद किए गए संस्वीकृति टिप्पण (प्रदर्श पीडब्ल्यू-12/ई) का नमूना स्वीकृत लिखावट पर अभियुक्त-अपीलार्थी के हस्तलेख से मेल खाता था ।

45. अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने अन्वेषण के दौरान साक्ष्य एकत्रित करने के लिए उसके द्वारा किए गए विभिन्न उपायों को साबित करने के लिए अकाटय साक्ष्य दिया जिससे कि अभियुक्त-

अपीलार्थी को उषा की हत्या से संबद्ध किया जा सके । यह अशोक कुमार पाठक के अभिसाक्ष्य से सुदृढ़ रूप से यह तथ्य सिद्ध होता है कि अभियुक्त-अपीलार्थी हत्या से पूर्ववर्ती रात्रि को उषा के साथ मौजूद था । हत्या के पश्चात् वह फरार हो गया था और लगभग 10 वर्षों तक ढूंढ़ा नहीं जा सका था और यह भी उसके दूषित मानसिक अवस्था की ओर इंगित करने वाली एक मजबूत परिस्थिति है ।

46. उषा की हत्या से संबंधित परिस्थितियां अपीलार्थी की अनन्य जानकारी में थीं । उसने उस रीति के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया जिसमें उषा का उस कमरे के अंदर गला घोंटकर मृत्यु हुई थी जहां केवल वह और मृतका मौजूद थे । अभियुक्त द्वारा अपराध में गंभीर रूप से आलिप्त करने वाली इस परिस्थिति का एक स्पष्टीकरण के द्वारा प्रत्याख्यान का अस्पष्ट अभिवाक् करना भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के फलस्वरूप उस पर अधिरोपित भार से उसे छुटकारा देने के लिए पर्याप्त नहीं है ।

47. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, हमारा दृढ़ मत है कि अभियोजन पक्ष ने अपराध में आलिप्त करने वाले पारिस्थितिक साक्ष्य की श्रृंखला की निम्नलिखित कड़ियों को सिद्ध किया है :–

(i) हेतु ;

(ii) अंतिम बार एक साथ देखा जाना ;

(iii) यह सिद्ध करते हुए चिकित्सा साक्ष्य कि मृतक की मृत्यु का कारण मानववध था ;

(iv) संस्वीकृति टिप्पण ;

(v) लगभग 10 वर्षों तक फरार रहना ;

(vi) अभियुक्त द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने कथन में दिया गया गलत स्पष्टीकरण ;

(vii) अभियुक्त द्वारा रात्रि के समय में उस समय अपनी पत्नी की मानव वध मृत्यु के लिए स्पष्टीकरण देने में असफल रहना

जब केवल अभियुक्त और मृतका मकान में मौजूद थे जिसके परिणामस्वरूप भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के फलस्वरूप दोषिता का निष्कर्ष निकलता है ।

48. इन सभी तथ्यों को एक साथ संबद्ध करने पर अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों की एक ऐसी पूर्ण श्रृंखला का गठन होता है जो अनन्य रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषिता को इंगित करती है और उसकी निर्दोषिता से या अपराध में किसी अन्य व्यक्ति की अंतर्ग्रस्तता से पूर्णत: असंगत है ।

49. परिणामत:, हमें विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी की उषा की हत्या कारित करने के आरोप के लिए दोषसिद्धि और दोषसिद्धि की पुष्टि करते हुए अपनाए गए दृष्टिकोण की पुष्टि करने में कोई संकोच नहीं है ।

50. आक्षेपित निर्णय किसी खामी से ग्रस्त नहीं है जिससे किसी प्रकार का हस्तक्षेप करने की आवश्यकता हो ।

51. अत: यह अपील असफल रहती है और तद्द्वारा खारिज की जाती है ।

52. अपीलार्थी जमानत पर है । उसके जमानत बंधपत्र रद्द किए जाते हैं । वह शेष दंडादेश भुगतने के लिए अगले 60 दिन के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करेगा । यदि अपीलार्थी पूर्वोक्त अवधि के भीतर अभ्यर्पण करने में असफल रहता है, तो विचारण न्यायालय उसे गिरफ्तार करने के लिए उपाय करेगा और उसे दंडादेश भुगतवाएगा ।

53. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

———————

[2024] 3 उम. नि. प. 84

राजेन्द्र पुत्र रामदास कोल्हे

बनाम

महाराष्ट्र राज्य

[2011 की दांडिक अपील सं. 2281]

15 मई, 2024

न्यायमूर्ति अभय एस. ओका और न्यायमूर्ति उज्जल भुयन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32] – हत्या – मृत्युकालिक कथन – विश्वसनीयता – पति द्वारा अपनी पत्नी पर मिट्टी का तेल छिड़कने के पश्चात् आग लगाया जाना – पत्नी को गंभीर दाह-क्षतियां पहुंचना और उपचार के दौरान कुछ दिनों के पश्चात् अस्पताल में मृत्यु हो जाना – मृतका का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि को कायम रखा जाना – अपील – जहां मृतका द्वारा अपने मृत्युकालिक कथन में अभियुक्त (पति) द्वारा उसे दाह-क्षतियां कारित करने के लिए निभाई गई भूमिका के बारे में स्पष्ट रूप से कथन किया गया हो और मृतका का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने से पूर्व उसका उपचार करने वाले डाक्टर द्वारा प्रमाणित किया गया हो कि वह अपना कथन करने योग्य है और अन्य साक्षियों के साक्ष्य द्वारा भी मृत्युकालिक कथन की अंतर्वस्तुओं को साबित किया गया हो भले ही उनके साक्ष्य में कतिपय विसंगतियां पाई गई हों जो तात्विक न हों और मृतका के मृत्युकालिक कथन के सारभाग को प्रभावित न करती हों, वहां ऐसे मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता पर संदेह न करते हुए अभियुक्त की दोषिता युक्तियुक्ति संदेह के परे साबित होने पर उसकी दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 32 – मृत्युकालिक

कथन – दोषसिद्धि के लिए एक मात्र आधार – संधार्यता – जब कोई मृत्युकालिक कथन प्रामाणिक पाया जाता है और न्यायालय का विश्वास प्रेरित होता है तो किसी संपुष्टि के बिना मात्र ऐसे कथन के आधार पर अभियुक्त की दोषसिद्धि की जा सकती है, तथापि, किसी मृत्युकालिक कथन को स्वीकार करने से पूर्व न्यायालय का अवश्य यह समाधान हो जाना चाहिए कि वह कथन स्वेच्छापूर्वक किया गया, संगत और विश्वसनीय है और किसी के सिखाने-पढ़ाने से रहित है ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी की पत्नी एक पुलिस कांस्टेबल थी और पुलिस कालोनी में रहती थी । उसका पति अर्थात् अपीलार्थी सेना में सेवारत था और वह छुट्टी पर घर आया था । तारीख 22 जुलाई, 2002 को लगभग 8.30 बजे अपराह्न में रेखा को उस क्वार्टर में दाह क्षतियां कारित हुई, जिसमें वह रह रही थी । उसके साथ उसके पति और देवर द्वारा क्रूरता की गई थी । उसके अन्य ससुराल वालों के हाथों भी उसके साथ क्रूरता की गई थी जिनमें ससुर, सास और ननद सम्मिलित थे । दुर्भाग्यपूर्ण दिन, अभिकथित रूप से रेखा की उसके पति और देवर द्वारा पिटाई की गई और उन्होंने उसके हाथ और पैर बांधे और फिर पति ने उसका मुंह दबा लिया । पति ने उसके शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़का और दियासलाई से आग लगा दी । इस प्रक्रिया में वह पूरी तरह से जल गई । उसे पड़ोसियों द्वारा अस्पताल ले जाया गया जहां उसका मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया गया और उसके आधार पर पुलिस थाने में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 307, 498क, 342, 323 और 504 के अधीन अपराध मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । अपराध के अन्वेषण के दौरान पुलिस द्वारा महिला के आंशिक रूप से जले वस्त्रों, मिट्टी के तेल वाली एक बोतल, टूटा हुआ मंगलसूत्र आदि को अभिगृहीत किया किया । बाद में, विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा विपदग्रस्त का एक अन्य मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया गया । बाद में उपचार के दौरान मृतका का दाह क्षतियों के कारण देहांत हो गया । पुलिस द्वारा अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया । अपीलार्थी के साथ-साथ मृतका के ससुर, सास और ननद को अभियुक्तों के रूप में क्रमबद्ध

किया गया । जहां तक देवर सुरेश का संबंध है, उसे एक किशोर होना पाया गया था । अत: उसके मामले को अलग किया गया और किशोर न्याय बोर्ड को भेजा गया । विचारण न्यायालय अभिलेख पर के साक्ष्य और परस्पर-विरोधी दलीलों पर विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अभियोजन पक्ष यह साबित नहीं कर सका कि अभियुक्त व्यक्तियों ने मृतका को अपने सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए तंग किया था और उसके साथ क्रूरता की थी तथा तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित इसकी धारा 498क के अधीन दंडनीय अपराध कारित किया था । विचारण न्यायालय ने मृतका की हत्या कारित करने के लिए ससुर, सास और ननद के विरुद्ध भी कोई सामग्री नहीं पाई और उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया । तथापि, विचारण न्यायालय ने दोनों मृत्युकालिक कथनों की अंतर्वस्तुओं के साथ-साथ अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य को स्वीकार किया और अभिनिर्धारित किया कि रेखा की मृत्यु मानव वध थी न कि दुर्घटनावश । अत: विचारण न्यायालय ने पति-अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी अभिनिर्धारित किया और दंडादिष्ट किया । उसके द्वारा दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए अपील खारिज कर दी गई कि विचारण न्यायालय के निर्णय में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । अभियुक्त द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – रेखा ने अपने मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श-59) में जिस घटना में उसे दाह-क्षतियां पहुंची थीं, उसमें पति (अपीलार्थी) और देवर द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में स्पष्ट रूप से कथन किया था । मृत्युकालिक कथन की अंतर्वस्तुओं को अभि. सा. 6, अभि. सा. 12 और अभि. सा. 13 द्वारा साबित किया गया है । यद्यपि उनके साक्ष्य में कतिपय असंगतियां हैं, तो भी ऐसी असंगतियां हो जाना पूरी तरह स्वाभाविक है । इसके अलावा, वे तात्विक नहीं हैं और उसके कथन के सारभूत भाग को प्रभावित नहीं करती हैं । घटना तारीख 22 जुलाई,

2002 को घटी थी और मृत्युकालिक कथन उसी दिन कुछ ही घंटों के भीतर अभिलिखित किया गया था, जबकि उपरोक्त साक्षियों द्वारा न्यायालय में साक्ष्य पांच वर्षों के पश्चात् दिया गया था । ऐसी असंगतियां हो जाना लाजिमी है । वास्तव में, तात्विक साक्षियों द्वारा एक समान कथन करने से ऐसे साक्ष्य की विश्वसनीयता के बारे में न्यायालय के मस्तिष्क में सिखाने-पढ़ाने के रूप में संदेह उत्पन्न हो सकता है । इस स्थिति में, हम मृतका के मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श-59) को एक विधिमान्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार हैं । इस न्यायालय के लिए मृतका के मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श-59) की सत्यता के बारे में संदेह करने का कोई कारण नहीं है, जिसे साक्ष्य में साबित किया गया है । परिचर्या करने वाले डाक्टर ने यह प्रमाणित किया है कि मृतका अपना कथन करने के लिए समर्थ थी । मृत्युकालिक कथन का सार डाक्टर द्वारा अभिलिखित किए गए रोगी के चिकित्सा इतिवृत्त से भी प्रकट होता है और उसे भी साक्ष्य में साबित किया गया है । इसके अतिरिक्त, यद्यपि अभियोजन साक्षियों के वृत्तांत में असंगतियां और सुधार हैं, तथापि, मृतका द्वारा मृत्युकालिक कथन में किए गए वर्णन और डाक्टर द्वारा अभिलिखित किए गए चिकित्सा इतिवृत्त के सारभाग में समरूपता है । इस स्थिति में, अभिलेख पर के साक्ष्य, विशिष्ट रूप से प्रदर्श 59 से, स्पष्ट रूप से अभियुक्त की दोषिता सभी युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध होती है । (पैरा 24 और 35)

मृत्युकालिक कथन से संबंधित विधि अब भली-भांति स्थिर है । जब एक बार कोई मृत्युकालिक कथन प्रामाणिक और न्यायालय का विश्वास प्रेरित करने वाला पाया जाता है, तब इसका अवलंब लिया जा सकता है और किसी संपुष्टि के बिना दोषसिद्धि के लिए एकमात्र आधार हो सकता है । तथापि, ऐसे किसी मृत्युकालिक कथन को स्वीकार करने से पूर्व न्यायालय का अवश्य यह समाधान हो जाना चाहिए कि यह स्वेच्छापूर्वक किया गया था, यह संगत और विश्वसनीय है तथा यह किसी प्रकार के सिखाने-पढ़ाने से रहित है । जब एक बार ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है तो मृत्युकालिक कथन की अत्यधिक प्रामाणिकता हो जाती है और जैसा कि पहले कहा गया है, यह दोषसिद्धि के लिए एकमात्र आधार बन सकता है । (पैरा 25)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2013]	(2013) 2 एस. सी. सी. 224 : **आशाबाई** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	34
[2012]	(2012) 7 एस. सी. सी. 569 : **सुधाकर** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	31
[2010]	(2010) 8 एस. सी. सी. 514 : **लखन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	33
[2008]	(2008) 5 एस. सी. सी. 468 : **अमोल सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	32
[2008]	(2008) 4 एस. सी. सी. 265 : **शेर सिंह और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य** ;	30
[1993]	(1993) 2 एस. सी. सी. 684 : **कुंदुला बाला सुब्रह्मण्यम और एक अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	29
[1992]	(1992) 2 एस. सी. सी. 474 : **पानीबेन (श्रीमती)** बनाम **गुजरात राज्य** ;	28
[1958]	ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 22 : **खुशाल राव** बनाम **बम्बई राज्य** ।	27

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 2281.

2008 की दांडिक अपील सं. 635 में बंबई उच्च न्यायालय, औरंगाबाद न्यायपीठ द्वारा तारीख 15 नवंबर, 2010 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री सुधांशु एस. चौधरी, ज्येष्ठ अधिवक्ता, (सुश्री) रुचा ए. पांडेय और वात्सल्य विज्ञ

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री आदित्य अनिरुद्ध पांडेय, सिद्धार्थ धर्माधिकारी, भरत बाग्ला, सौरव सिंह, आदित्य कृष्णा और (सुश्री) रावि शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति उज्जल भुयन ने दिया ।

न्या. भुयन – पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुना ।

2. यह अपील बंबई उच्च न्यायालय, औरंगाबाद न्यायपीठ (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'उच्च न्यायालय' कहा गया है) द्वारा अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई 2008 की दांडिक अपील सं. 635, राजेन्द्र रामदास कोल्हे बनाम महाराष्ट्र राज्य, को खारिज करते हुए और तद्द्वारा 2006 के सेशन मामला सं. 60 में तृतीय तदर्थ अपर सेशन न्यायाधीश, अंबाजोगई (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्वारा तारीख 23 जुलाई, 2008 को पारित किए गए निर्णय और आदेश की पुष्टि करते हुए तारीख 15 नवंबर, 2010 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है –

2.1 यह उल्लेखनीय है कि विचारण न्यायालय ने तारीख 23 जुलाई, 2008 के निर्णय और आदेश द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'भारतीय दंड संहिता') की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने के लिए दोषसिद्ध किया था और आजीवन कारावास भुगतने तथा 25,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया था और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर दंड का भी उल्लेख किया गया था । पूर्वोक्त दोषसिद्धि और दंडादेश के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था ।

3. अभियोजन का पक्षकथन संक्षेप में यह है कि अपीलार्थी की पत्नी रेखा एक पुलिस कांस्टेबल थी और अंबाजोगई स्थित पुलिस कालोनी में रहती थी । उसका पति अर्थात् अपीलार्थी सेना में सेवारत था । वह छुट्टी पर घर आया था ।

3.1 तारीख 22 जुलाई, 2002 को लगभग 8.30 बजे अपराह्न में रेखा को उस क्वार्टर में दाह क्षतियां कारित हुई थीं, जिसमें वह रह रही थी । अभियोजन पक्ष के अनुसार, उसके साथ उसके पति राजेन्द्र और देवर सुरेश द्वारा क्रूरता की गई थी । उसके अन्य ससुराल वालों के हाथों भी उसके साथ क्रूरता की गई थी जिनमें ससुर, सास और ननद

सम्मिलित थे । दुर्भाग्यपूर्ण दिन, रेखा की उसके पति राजेन्द्र और देवर सुरेश द्वारा पिटाई की गई थी । उन्होंने एक गमछे से उसके हाथों को और एक तोलिए से उसके पैर बांधे । फिर पति ने उसका मुंह दबा लिया । देवर एक दियासलाई और मिट्टी के तेल की एक बोतल लाया । पति ने उसके शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़का और दियासलाई से आग लगा दी । इस प्रक्रिया में वह पूरी तरह से जल गई । उसे पड़ोसियों द्वारा अस्पताल ले जाया गया जहां अभि. सा. 6 द्वारा उसका मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 59 अभिलिखित किया गया और उसके आधार पर अंबाजोगई पुलिस थाने में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 307, 498क, 342, 323 और 504 के अधीन 2002 का अपराध मामला सं. 182 रजिस्ट्रीकृत किया गया ।

3.2 अपराध का अन्वेषण अभि. सा. 10 द्वारा किया गया था । उसने उस तालाबंद कमरे को तोड़ कर खोला जहां घटना घटी थी और महिला के आंशिक रूप से जले वस्त्रों, मिट्टी के तेल वाली एक बोतल, टूटा हुआ मंगलसूत्र आदि को अभिगृहीत किया । बाद में, विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा विपदग्रस्त का एक अन्य मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 65 अभिलिखित किया गया । तारीख 24 जुलाई, 2002 को लगभग 11.00 बजे अपराह्न में रेखा का दाह क्षतियों के कारण देहांत हो गया ।

3.3 पुलिस द्वारा अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया । अपीलार्थी के साथ-साथ मृतका के ससुर, सास और ननद को अभियुक्तों के रूप में क्रमबद्ध किया गया । जहां तक देवर सुरेश का संबंध है, उसे एक किशोर होना पाया गया था । अत: उसके मामले को अलग किया गया और किशोर न्याय बोर्ड को भेजा गया ।

3.4 अपीलार्थी और तीन अन्य व्यक्तियों के विचारण में अभियोजन पक्ष ने कुल 13 साक्षियों की परीक्षा की । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में दंड प्रक्रिया संहिता) की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी सहित अभियुक्तों के कथन अभिलिखित किए गए । प्रतिरक्षा पक्ष का आधार यह था कि यह मानव वध का मामला नहीं था अपितु एक आत्महत्या का मामला था । उपरोक्त के अतिरिक्त, अपीलार्थी ने भी एक डाक्टर का साक्ष्य प्रस्तुत किया ।

3.5 विचारण न्यायालय अभिलेख पर के साक्ष्य और परस्पर-विरोधी दलीलों पर विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अभियोजन पक्ष यह साबित नहीं कर सका कि अभियुक्त व्यक्तियों ने मृतका को अपने सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए तंग किया था और उसके साथ क्रूरता की थी तथा तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित इसकी धारा 498क के अधीन दंडनीय अपराध कारित किया था । विचारण न्यायालय ने रेखा की हत्या कारित करने के लिए ससुर, सास और ननद के विरुद्ध भी कोई सामग्री नहीं पाई । तथापि, विचारण न्यायालय ने दोनों मृत्युकालिक कथनों, प्रदर्श-59 और प्रदर्श-65 की अंतर्वस्तुओं के साथ-साथ अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य को स्वीकार किया और अभिनिर्धारित किया कि रेखा की मृत्यु मानव वध थी न कि दुर्घटनावश । विचारण न्यायालय ने ससुर, सास और ननद को दोषमुक्त करते हुए अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है कि अभियुक्त सं 4 अर्थात् अपीलार्थी के साथ-साथ उसके अप्राप्तवय भाई सुरेश ने अपने सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए रेखा की हत्या की थी । अतः विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी अभिनिर्धारित किया । एक अलग सुनवाई के पश्चात् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को उपरोक्त अनुसार दंडादिष्ट किया ।

4. अपीलार्थी ने दोषसिद्धि और दंडादेश के पूर्वोक्त आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने अभि. सा. 6 द्वारा अभिलिखित किए गए मृतका के लिखित मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 59 के साथ-साथ मृतका द्वारा अभि. सा. 2, अभि. सा. 3, अभि. सा. 4, अभि. सा. 7 और अभि. सा. 8 के समक्ष किए गए मौखिक मृत्युकालिक कथनों का भी अवलंब लिया और उसके पश्चात् तारीख 15 नवंबर, 2010 के निर्णय और आदेश द्वारा विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि के निर्णय को कायम रखा । यह अभिनिर्धारित करते हुए अपील को खारिज कर दिया कि विचारण न्यायालय के निर्णय में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

5. इस न्यायालय ने तारीख 16 अगस्त, 2011 के आदेश द्वारा सूचना जारी की थी । इसके पश्चात् तारीख 2 अक्तूबर, 2011 के आदेश द्वारा इजाजत दी गई । तथापि, जमानत के लिए प्रार्थना को उस प्रक्रम पर नामंजूर कर दिया गया था ।

6. इस न्यायालय ने तारीख 30 जून, 2016 के आदेश द्वारा उल्लेख किया कि अपीलार्थी ने पहले ही लगभग नौ वर्ष का दंडादेश भुगत लिया है । इसलिए दंडादेश को निलंबित किया गया और अपीलार्थी को जमानत दे दी गई ।

7. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से दलील दी कि अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में तात्विक विरोधाभास हैं । इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने प्रदर्श-65 अर्थात् विशेष कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन का ठीक ही अवलंब नहीं लिया था क्योंकि उसे साबित नहीं किया गया था । जहां तक मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श-59 का संबंध है, उन्होंने दलील दी कि अभि. सा. 12, डाक्टर ने मृत्युकालिक कथन को लेखबद्ध करना आरंभ करने तथा इसे समाप्त करने दोनों का समय 11.45 बजे अपराह्न बताया था जो कि एक महत्वपूर्ण खामी है । इससे कथन की विश्वसनीयता के बारे में गंभीर संदेह पैदा होता है । उन्होंने दलील दी कि चूंकि निचले न्यायालयों ने घरेलू हिंसा की कहानी को त्यक्त कर दिया था इसलिए अपीलार्थी के लिए अपनी पत्नी की हत्या करने का कोई अन्य कारण नहीं हो सकता था । वस्तुतः, अभिलेख पर यह आया है कि अपीलार्थी ने मृतका को बचाने की कोशिश की थी और इस प्रक्रिया में उसका दायां हाथ जल गया था । वह मृतका को अपने भाई के साथ अस्पताल लेकर गया था । इस स्थिति में, दोषसिद्धि और दंडादेश में हस्तक्षेप किया जाना चाहिए ।

7.1 दूसरी ओर, प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश का समर्थन किया । उन्होंने दलील दी कि अभिलेख पर के साक्ष्य से किसी युक्तियुक्त संदेह के परे अपीलार्थी की दोषिता स्पष्ट रूप से सिद्ध होती है । अभियोजन पक्ष अपीलार्थी की दोषिता को किसी युक्तियुक्त संदेह के परे सफलतापूर्वक साबित कर

सका था । मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श-59 इतना महत्वपूर्ण है कि इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता । यहां-वहां छुट-पुट विसंगतियों से अभियोजन के पक्षकथन को अधिक्षिप्त नहीं किया जा सकता । अत: उच्च न्यायालय द्वारा यथा अभिपुष्टिकृत दोषसिद्धि के निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है । इस अपील को खारिज किया जाना चाहिए ।

8. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर इस न्यायालय द्वारा सम्यक् विचार किया गया है ।

9. आरंभ में, इससे पूर्व कि हम लिखित मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श-59 पर विचार करने के लिए अग्रसर हों, तात्विक अभियोजन साक्षियों द्वारा दिए गए साक्ष्य का विस्तारपूर्वक उल्लेख करना उपयुक्त होगा ।

10. अभि. सा. 2 राजेन्द्र, एक पुलिस कांस्टेबल है । उसने अपनी मुख्य परीक्षा में यह कथन किया कि मृतका अंबाजोगई पुलिस थाने में एक महिला पुलिस कांस्टेबल के रूप में सेवारत थी । वह पुलिस कालोनी में उसके क्वार्टर के सामने के एक क्वार्टर में रह रही थी । घटना की तारीख और समय पर उसने पुलिस कालोनी में रह रही बहुत सारी महिलाओं को कुछ पुलिस कांस्टेबलों के साथ मृतका के क्वार्टर के निकट खड़े देखा । अभि. सा. 2 वहां गया और पूछताछ की । एक कांस्टेबल राजगिरे ने, जो उसका पड़ोसी था, उसे बताया कि रेखा के पति और देवर ने उस पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा दी थी । उसे उपचार के लिए अंबाजोगई स्थित एस. आर. टी. आर. अस्पताल ले जाया गया है । उसके पश्चात् सय्यद आलम नामक व्यक्ति के साथ अभि. सा. 2 अस्पताल गया और रेखा को ओपीडी में उपचार लेते हुए देखा । पुलिस कांस्टेबल सईद चंद ओपीडी में मौजूद था । उसने अभि. सा. 2 और उसके मित्र की मौजूदगी में रेखा से पूछा कि उसे कैसे दाह-क्षतियां पहुंची थीं । रेखा ने बताया कि उसके पति और देवर ने मिट्टी का तेल छिड़ककर उसे आग लगा दी थी । उसके अनुसार, उसका विवाह लगभग दो वर्ष पूर्व हुआ था । लगभग 15 दिनों तक उसके साथ उचित रूप से बर्ताव किया गया । उसके पश्चात्, जब कभी उसका पति सेना से छुट्टी पर घर आता था तो उसका ससुर, सास, ननद और देवर उसे उकसाते

रहते थे । वे उसे कहते थे कि वह अपना सारा वेतन अपने ससुराल वालों को सौंपने की बजाय अपने पास रख लेती है । वे उसके चरित्र पर भी प्रश्न उठाते थे और इसका कारण अपना वेतन उन्हें न सौंपना था । ऐसी उकसाहट पर उसका पति उसे भला-बुरा कहता था और हमला करता था ।

10.1 यद्यपि उसका तारीख 14 जुलाई, 2002 को बीड़ में पुलिस खेलकूद प्रतियोगिता में चयन हो गया था, तो भी उसके पति ने उसे खेलकूद प्रतियोगिता में भाग लेने की अनुज्ञा नहीं दी । घटना के दिन, उसे सारा दिन मकान से बाहर आने नहीं दिया । उसके पति और देवर ने 8.30 बजे अपराह्न से 9.00 बजे अपराह्न के बीच एक गमछे से उसके हाथ बांध दिए ; उन्होंने एक तोलिए से उसकी टांगें भी बांध दीं । देवर मिट्टी के तेल की एक बोतल लाया और उसके पति को दी । उसके पश्चात्, उसके पति ने एक हाथ से उसका मुंह दबाया और दूसरे हाथ से उसके शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़क दिया । पति ने फिर दियासलाई से तिल्ली जलाई और उसे आग लगा दी ।

10.2 अभि. सा. 2 ने कथन किया कि जब वह अस्पताल गया था, तब रेखा का पति और देवर वहां मौजूद नहीं थे ।

10.3 अभि. सा. 2 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि पुलिस के समक्ष किए गए उसके कथन में यह अभिलिखित नहीं किया गया था कि रेखा के ससुराल वालों ने उसके पति को बताया था कि वह उन्हें वेतन नहीं देती है जिसको लेकर रेखा को भला-बुरा कहा गया था और उस पर हमला किया गया था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन कथन में यह अभिलिखित नहीं किया गया था कि रेखा का तारीख 14 जुलाई, 2022 को पुलिस खेलकूद प्रतियोगिता के लिए चयन हो गया था । रेखा के पति अर्थात् अपीलार्थी ने एक हाथ से उसका मुंह दबा लिया था और दूसरे हाथ से मिट्टी का तेल छिड़का था, उसके द्वारा किए गए इस कथन का भी धारा 161 के अधीन कथन में उल्लेख किया गया नहीं पाया गया था । तथापि, उसने कथन किया कि अभि. सा. 6 सहायक उप निरीक्षक, डाके ने जब अस्पताल में रेखा का विस्तार से कथन अभिलिखित किया था तब वह (अभि. सा. 2) मौजूद था ।

11. अभि. सा. 3 कौशल्याबाई मृतका रेखा की माता है । उसने कथन किया कि विवाह के पश्चात् रेखा के साथ लगभग 15 दिनों तक उसके पति और अन्य ससुराल वालों द्वारा उचित रूप से बर्ताव किया गया था । उसके पश्चात्, उन्होंने उसके साथ इस आधार पर दुर्व्यवहार करना आरंभ कर दिया कि वह उन्हें अपना वेतन नहीं देती है । इस साक्षी की बड़ी पुत्री श्यामला ने उसे फोन किया और उसे बताया कि रेखा को उसके पति राजेन्द्र और उसके देवर सुरेश ने आग लगा दी है । वह अपने पुत्र और पुत्रवधु के साथ अंबाजोगई अस्पताल आई और रेखा से मिली । रेखा ने अभि. सा. 3 को बताया कि उसके पति और देवर ने मिट्टी का तेल छिड़का था और उसे आग लगा दी थी । उस समय उसकी सास, ससुर और ननद मौजूद थे । रेखा ने उसे बताया था कि उसके पड़ोसी उसे अस्पताल लाए थे जबकि उसका पति और ससुराल वाले भाग गए थे ।

11.1 इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि पुलिस ने रेखा की मृत्यु के पश्चात् उसका कथन अभिलिखित किया था । उसने अभिस्वीकृति की कि पुलिस ने उसके धारा 161 के अधीन कथन में यह अभिलिखित नहीं किया था कि उसकी पुत्री रेखा के साथ उसके पति और ससुराल वालों द्वारा क्रूरता की गई थी ; और घटना के दिन उसे मकान में परिरुद्ध कर दिया गया था । यह भी अभिलिखित नहीं किया गया था कि अभियुक्त राजेन्द्र और सुरेश ने मिट्टी का तेल छिड़ककर उसे आग लगा दी थी । उसने पुलिस को यह नहीं कहा था कि जब रेखा के पति और देवर ने उसको आग लगाई थी, ससुर और ननद भी मौजूद थे और वे सभी भाग गए थे । इस साक्षी के अनुसार, यद्यपि उसने पुलिस के समक्ष यह कथन किया था कि सभी अभियुक्त मकान में मौजूद थे और रेखा को आग लगाने के पश्चात् वे सभी मकान से भाग गए थे, तो भी इस बात को अभिलिखित नहीं किया गया था ।

12. मृतका का भाई मिलिंद अभि. सा. 4 है । उसने अपनी मुख्य परीक्षा में यह कथन किया था कि मृतका रेखा के सास-ससुर, देवर और ननद उसके चरित्र पर संदेह करते थे । वे मृतका के चरित्र के बारे में और उन्हें अपना वेतन न देने के बारे में अपीलार्थी को उकसाते रहते

थे । उसने कथन किया कि रेखा के पति और देवर ने उसको आग लगाकर उसकी हत्या की थी । जब उसे घटना के बारे में पता चला, तो वह अपनी पत्नी, बालकों और माता के साथ उसी रात अर्थात् 22 जुलाई, 2002 को अंबाजोगई आया और अस्पताल में रेखा से मिला । जब उसने उससे पूछताछ की, तो उसे बताया कि उसके पति और देवर ने उसे आग लगा दी थी । अस्पताल में उसकी ससुराल वालों में से कोई भी मौजूद नहीं था । अस्पताल पहुंचने पर अभि. सा. 4 ने अपनी बहिन श्यामला को रेखा के पास पाया । उपचार के दौरान तारीख 24 जुलाई, 2002 को रेखा की मृत्यु हो गई ।

12.1 उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि जब वह अस्पताल गया था, तो उसकी बहिन (मृतका) पूरी तरह जली हुई थी और कराह रही थी । उसने कथन किया कि पुलिस ने उसके बताए अनुसार उसका कथन अभिलिखित किया था । यद्यपि उसने पुलिस के समक्ष यह कथन किया था कि अस्पताल में उसकी बहिन रेखा ने उसे बताया था कि उसके पति और देवर ने उसे आग लगा दी थी किंतु कोई कारण नहीं बता सकता कि क्यों पुलिस ने इसे अभिलिखित नहीं किया था ।

13. अब हम अभि. सा. 7, सईद चंद के साक्ष्य पर आते हैं, जो अंबाजोगई पुलिस थाने में सेवारत एक पुलिसकर्मी है और पुलिस कालोनी में रह रहा था । उसने अपनी मुख्य परीक्षा में यह कथन किया कि लगभग 9.00 बजे अपराह्न में उसे कालोनी में शोर-शराबा सुनाई दिया । जब वह अपने मकान से बाहर आया, तो उसने महिला पुलिस कांस्टेबल धोकनी अर्थात् मृतका के क्वार्टर के निकट लोगों को इकट्ठा हुए देखा । भीड़ में खड़े पुलिस हैड कांस्टेबल राजगिरे और महिलाओं ने उसे बताया कि महिला पुलिस कांस्टेबल धोकनी को उसके पति और देवर ने आग लगा दी है । वह और राजगिरे धोकनी के मकान में गए और आग बुझाई । रेखा के दोनों हाथ एक तोलिए से बंधे हुए थे । राजगिरे ने हाथों को खोला । उस समय पति और देवर मकान में मौजूद थे । कोई व्यक्ति एक आटो रिक्शा लाया जिसमें धोकनी, उसका पति और देवर अस्पताल गए । वह एक अन्य व्यक्ति के साथ मोटरसाइकिल पर अस्पताल गया जिसका नाम उसे ज्ञात नहीं है । किंतु जब वह अस्पताल

पहुंचा, तब पति और देवर मौजूद नहीं थे । उसने धोकनी (रेखा) को अस्पताल में भर्ती कराया । जब उसने धोकनी (रेखा) से पूछताछ की, तो उसने उसे बताया कि उसकी सास और ससुर ने उसके पति को बताया था कि वह उचित प्रकार से व्यवहार नहीं कर रही है और उनको अपना वेतन नहीं देती है, इसलिए उसके पति और देवर ने उसे आग लगा दी ।

13.1 अभि. सा. 7 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि पुलिस ने उसका कथन तारीख 23 जुलाई, 2002 को सवेरे पुलिस थाने में अभिलिखित किया था । उसके अनुसार, यद्यपि उसने पुलिस के समक्ष यह कहा था कि वह और राजगिरे धोकनी के मकान में गए जहां उन्होंने एक तोलिए से उसके हाथों और टांगों को बंधे हुए पाया, जिसके पश्चात् उन्होंने आग बुझाई जबकि राजगिरे ने रेखा के हाथों और टांगों को खोला, किंतु पुलिस द्वारा इस बात को अभिलिखित नहीं किया गया था । उसने यह भी कथन किया कि उस समय रेखा का पति और देवर मकान में मौजूद थे किंतु इस बात को भी पुलिस द्वारा अभिलिखित नहीं किया गया था । उसके इस कथन को भी पुलिस द्वारा अभिलिखित नहीं किया गया था कि रेखा की सास और ससुर उसके पति को बताते थे कि वह उचित रूप से व्यवहार नहीं कर रही है ।

14. पुलिस हैड कांस्टेबल राजगिरे अभि. सा. 8 है । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि चूंकि वह अंबाजोगई पुलिस थाने में सेवारत था इसलिए वह पुलिस कालोनी में रहता था । तारीख 22 जुलाई, 2002 को उसका साप्ताहिक अवकाश था । इसलिए वह घर पर था । महिला पुलिस कांस्टेबल रेखा (धोकनी) का क्वार्टर पुलिस कालोनी में उसके क्वार्टर के सामने था । तारीख 22 जुलाई, 2002 को 8.30 बजे अपराह्न से 9.00 बजे अपराह्न के बीच उसे धोकनी के मकान से किसी महिला के चिल्लाने की आवाज सुनी । चिल्लाने की आवाज सुनकर वह और उसकी पत्नी अपने मकान से बाहर आए और धोकनी के मकान में गए । उस समय धोकनी पूरी तरह से जली हुई थी । उसने और उसकी पत्नी ने उसके शरीर पर पानी डाला और आग बुझाई । उस समय रेखा धोकनी का पति और देवर मकान के दरवाजे के निकट खड़े थे । रेखा जोर-जोर से कह रही थी कि उसके पति और देवर ने उसे आग लगाई

थी । जब कोई व्यक्ति आटो-रिक्शा लाया तो उसका पति और देवर उसे आटो-रिक्शा में एस. आर. टी. आर. अस्पताल लेकर गए । तारीख 24 जुलाई, 2002 को रेखा धोकनी की अस्पताल में उपचार लेते हुए मृत्यु हो गई । पुलिस द्वारा उसका अनुपूरक कथन तारीख 25 जुलाई, 2002 को अभिलिखित किया गया था । उसके अनुसार, उसे पता चला था कि रेखा के ससुराल वाले मांग कर रहे थे कि वह अपना वेतन उन्हें दे । चूंकि वह ऐसा करने के लिए अनिच्छुक थी इसलिए उसे आग लगा दी गई थी ।

14.1 अभि. सा. 8 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि यद्यपि उसने पुलिस को बताया था कि जब उसने और उसकी पत्नी ने आग बुझाई थी, रेखा का पति और देवर मकान के दरवाजे के निकट मौजूद थे, फिर भी यह बात उसके पुलिस को किए गए कथन में दिखाई नहीं पड़ती है । तथापि, उसके इस कथन को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन किए गए उसके कथन में अभिलिखित किया गया था कि जब उसकी पत्नी धोकनी के शरीर पर पानी डाल रही थी, तब पति राजेन्द्र और देवर सुरेश पास में खड़े हुए थे ।

15. अभि. सा. 10 उत्तम, पुलिस निरीक्षक है जिसने मामले का अन्वेषण किया था । उसने कथन किया कि वह दो पंचों के साथ अपराध स्थल पर गया था । उसने अध-जला पार्कर का पेटीकोट, गाउन, पानी की एक बोतल जिसमें से मिट्टी के तेल की गंध आ रही थी, एक अध-जली तिल्ली, टूटा हुआ मंगलसूत्र ताला इत्यादि को अभिगृहीत किया था ।

15.1 उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि अस्पताल के चिकित्सा अधिकारी से यह सूचना प्राप्त होने पर कि रेखा धोकनी को दाह-क्षतियां पहुंची हैं, उसने अभि. सा. 6 को उसका मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने का निदेश दिया, जिसकी प्रविष्टि थाना डायरी में की गई थी । जहां तक अभि. सा. 2 के धारा 161 के अधीन कथन का संबंध है, उसने कथन किया कि अभि. सा. 2 ने उसके समक्ष यह नहीं कहा था कि रेखा ने उसे बताया था कि उसके पति ने एक हाथ से उसका मुंह दबा दिया था और दूसरे हाथ से उसके शरीर पर मिट्टी का

तेल छिड़का था । अभि. सा. 3 के धारा 161 के अधीन कथन के संबंध में उसने कहा कि अभि. सा. 3 ने यह नहीं कहा था कि अभियुक्त रेखा से धन की मांग कर रहे थे और वे उसे भोजन न देकर उसे मकान में परिरुद्ध करके उसके साथ क्रूरता कर रहे थे और घटना के दिन अभियुक्त राजेन्द्र और सुरेश ने मिट्टी का तेल छिड़ककर उसे आग लगा दी थी । उसने यह भी कथन किया कि अभि. सा. 3 कौशल्याबाई ने धारा 167 के अधीन अपने कथन में यह नहीं कहा था कि श्यामला ने उसे सूचित किया था कि अभियुक्त राजेन्द्र और उसके भाई सुरेश ने रेखा को उसे आग लगाकर मार दिया है । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 3 ने उसके समक्ष यह नहीं कहा था कि रेखा को आग लगाने के पश्चात् सभी अभियुक्त मकान से भाग गए थे । अभि. सा. 4 के संबंध में उसने कहा कि अभि. सा. 4 ने धारा 161 के अधीन अपने कथन में यह उल्लेख नहीं किया था कि उसकी बहिन रेखा ने उसे बताया था कि उसके पति और देवर ने उसे आग लगा दी थी । अभि. सा. 7 सईद चंद के संबंध में अभि. सा. 10 ने कहा कि अभि. सा. 7 ने धारा 161 के अधीन अपने कथन में यह नहीं कहा था कि वह और राजगिरे धोकनी के मकान में गए थे, उसकी टांगे और हाथ दोनों एक तोलिए से बंधे हुए थे और उन्होंने आग बुझाई थी । अभि. सा. 7 ने यह नहीं कहा था कि राजगिरे ने रेखा की बंधी हुई टांगों और हाथों को खोला था और उस समय उसका पति और देवर मौजूद थे । अभि. सा. 7 ने यह भी नहीं कहा था कि राजगिरे और भीड़ में महिला सदस्यों ने उसे सूचित किया था कि रेखा के पति और देवर ने उसे आग लगा दी है । अभि. सा. 8 ने धारा 161 के अधीन अपने कथन में यह भी नहीं कहा था कि जब रेखा जल रही थी तब उसका पति और देवर मौजूद थे ।

16. डा. प्रशांत मोहन केदारी अभि. सा. 12 है । तारीख 22 जुलाई, 2002 को वह अपनी एम.बी.बी.एस. और एक वर्ष की इंटर्नशिप पूर्ण करने के पश्चात् एस. आर. टी. आर. चिकित्सा महाविद्यालय और अस्पताल, अंबाजोगई में एक स्थानीय चिकित्सा अधिकारी के रूप में ड्यूटी पर था । वह उस दिन दाह-क्षति वार्ड सं. 14 का भारसाधक था । अभि. सा. 9 बिल्किस काछी, विशेष कार्यपालक मजिस्ट्रेट रोगी रेखा, जिसका वहां

उपचार चल रहा था, का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने के लिए अस्पताल आई । उसके पूछताछ करने पर अभि. सा. 12 ने रोगी का परीक्षण किया और पाया कि वह होश में थी और कथन करने योग्य थी । अभि. सा. 9 द्वारा प्रदर्श 65 में रोगी का कथन अभिलिखित किया गया था (तथापि, हमें मामले के इस पहलू पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उच्च न्यायालय ने प्रदर्श 65 को एक विधिमान्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया था) । उसके पश्चात् उसे प्रदर्श-59 दिखाया गया था जोकि मृतक का एक अन्य मृत्युकालिक कथन है । उसने कथन किया कि प्रदर्श-59 में दो पृष्ठांकन और हस्ताक्षर हैं । दोनों स्थानों पर पृष्ठांकनों के नीचे हस्ताक्षर डा. किरन कुरकुरे अर्थात् अभि. सा. 13 के थे ।

16.1 उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि उसने तारीख 22 जुलाई, 2002 को किसी दस्तावेज में रोगी का उसके द्वारा परीक्षण करने के संबंध में कोई पृष्ठांकन नहीं किया था । लगभग 11.30 बजे अपराह्न में उसने रोगी का नैदानिक परीक्षण करना आरंभ किया था जो लगभग 10 मिनट तक चला था ।

17. डा. किरन कुरकुरे अभि. सा. 13 है । सुसंगत समय पर वह एस. आर. टी. आर. चिकित्सा महाविद्यालय अस्पताल, अंबाजोगई में चिकित्सा अधिकारी के रूप में सेवारत था । तारीख 22 जुलाई, 2002 को लगभग 10.15 बजे अपराह्न में एक रोगी को जिसका नाम रेखा पत्नी राजेन्द्र कोल्हे था, पुलिस द्वारा अस्पताल लाया गया था । यद्यपि वह 99 प्रतिशत जली हुई थी, तो भी वह होश में थी । उसका कथन 11.45 बजे अपराह्न में अभिलिखित किया गया था । उस समय वह मौजूद था । उसने कथन किया कि उसका कथन अभिलिखित करने के समय रोगी रेखा होश में थी और कथन करने की स्थिति में थी । उसने यह भी कथन किया कि उसने कथन (प्रदर्श-59) पर एक पृष्ठांकन किया था । उस पर उसका इस आशय का भी पृष्ठांकन है कि रोगी फिलहाल कथन करने की स्थिति में है और जिस पर उसके द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे । उसने कथन किया कि प्रदर्श-59 की अंतर्वस्तुएं सही हैं । उसने यह भी कथन किया कि उसने कथन अभिलिखित करने से पूर्व एक

पृष्ठांकन किया था और एक अन्य पृष्ठांकन कथन अभिलिखित करने के पश्चात् किया था ; पृष्ठांकन पर तारीख और समय उसके हस्तलेख में था । कथन अभिलिखित करने के पश्चात् किए गए दूसरे पृष्ठांकन के संबंध में उसने कथन किया कि पृष्ठांकन उसके द्वारा किया गया था किंतु उसने गलती से समय 11.45 बजे अपराह्न लिख दिया था । उसने यह भी कथन किया कि रोगी को भर्ती करने के समय उसने रोगी द्वारा बताए गए पूर्ववृत्त को अभिलिखित किया था । रोगी ने उसे बताया था कि उसके पति ने उसे आग लगा दी थी । इस साक्षी ने प्रकथन किया कि उसने रोगी द्वारा बताए अनुसार इतिवृत्त को सही रूप में अभिलिखित किया था । यह उसके अपने हस्तलेख में था, जिसकी अंतर्वस्तुओं को उसके द्वारा साबित किया गया था (प्रदर्श-117) ।

17.1 यद्यपि अभि. सा. 13 की विस्तारपूर्वक प्रतिपरीक्षा की गई थी किंतु उसने अपनी मुख्य परीक्षा में जो कुछ कहा था, उसके असंगत या विरोधाभासी कुछ भी नहीं निकाला जा सका ।

18. हम अभि. सा. 12 और अभि. सा. 13 के साक्ष्य का विश्लेषण प्रदर्श-59 की परीक्षा के समय पर करेंगे । प्रदर्श-59 की ओर अग्रसर होने से पूर्व अब तक चर्चा किए गए अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य का संक्षेप में विश्लेषण करते हैं ।

19. अभि. सा. 2 ने अपने मुख्य साक्ष्य में कथन किया था कि कांस्टेबल राजगिरे रेखा के निवास के सामने एकत्रित भीड़ में था और उसने उसे बताया था कि रेखा के पति और देवर ने उसके शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा दी थी । जब अस्पताल में रेखा उपचाराधीन थी, कांस्टेबल सईद चंद ने अभि. सा. 2 की मौजूदगी में उससे पूछा था कि उसे कैसे दाह-क्षतियां पहुंची थीं । रेखा ने उत्तर में कहा था कि उसके पति और देवर ने मिट्टी का तेल छिड़ककर उसे आग लगा दी थी । उसने यह भी कहा था कि जब कभी उसका पति सेना से छुट्टी पर घर आता था, तो उसके ससुराल वाले उसके चरित्र पर सवाल उठाते हुए और अपना वेतन न देने का कारण बताते हुए उसके पति को उकसाते रहते थे । पति के लिए उसके साथ दुर्व्यवहार और हमला करने के लिए यह पर्याप्त था जिसके कारण अंततोगत्वा प्रश्नगत घटना घटी ।

तथापि, अभि. सा. 2 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया था कि पुलिस ने धारा 161 के अधीन उसके कथन में यह बात सम्मिलित नहीं की थी कि रेखा के ससुराल वालों ने उसके पति को बताया था कि वह उन्हें अपना वेतन नहीं देती है जिसको लेकर रेखा के साथ दुर्व्यवहार किया गया था और हमला किया गया था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन कथन में इस बात का भी उल्लेख नहीं किया गया था कि अपीलार्थी ने एक हाथ से रेखा का मुंह दबा लिया था और दूसरे हाथ से उसके शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़क दिया था । तथापि, इस साक्षी ने यह कथन किया कि वह उस समय अस्पताल में मौजूद था जब अभि. सा. 6 ने रेखा का विस्तार से कथन (प्रदर्श-59) अभिलिखित किया था ।

19.1 इसी तरह, अभि. सा. 3 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन में इस बात का उल्लेख नहीं किया गया था कि उसकी पुत्री रेखा के साथ उसके पति और ससुराल वालों द्वारा क्रूरता की गई थी । यह भी अभिलिखित नहीं किया गया था कि घटना के दिन रेखा को मकान में परिरुद्ध कर दिया गया था । उसने पुलिस के समक्ष यह भी उल्लेख नहीं किया था कि रेखा के पति और देवर ने उसे आग लगा दी थी ।

19.2 इसी प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए अभि. सा. 4 के कथन में यह उल्लेख नहीं किया गया था कि रेखा ने उसे बताया था कि उसके पति और देवर ने उसे आग लगा दी थी ।

19.3 अभि. सा. 7 के पुलिस के समक्ष किए गए कथन में भी यह उल्लेख नहीं था कि वह और राजगिरे रेखा के मकान में गए थे जहां उन्होंने उसकी टांगों और हाथों को एक तौलिए से बंधे हुए पाया था जिसके पश्चात् उन्होंने आग बुझाई और उसकी टांगों और हाथों को खोला था । उक्त कथन में यह भी अंतर्विष्ट नहीं है कि जब रेखा जल रही थी तब रेखा का पति और देवर मकान में मौजूद थे । यह भी अभिलिखित नहीं किया गया था कि सास और ससुर पति को यह कहते रहते थे कि रेखा उचित रूप से व्यवहार नहीं कर रही है ।

19.4 अभि. सा. 8 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अपने कथन में यह उल्लेख नहीं किया था कि जब अभि. सा. 8 और उसकी पत्नी ने आग बुझाई थी, तब रेखा का पति और देवर मकान के दरवाजे के निकट मौजूद थे । तथापि, यह उल्लेख किया गया था कि जब उसकी पत्नी रेखा के शरीर पर पानी डाल रही थी, तब उसका पति और देवर पास में खड़े थे ।

19.5 अभियोजन साक्षियों द्वारा साक्ष्य में किए गए उपरोक्त सुधारों को अभि. सा. 10, अन्वेषण अधिकारी की प्रतिपरीक्षा के दौरान अभिलेख पर लाया गया था । अत: यत्र-तत्र कतिपय विरोधाभासों के अतिरिक्त अभियोजन साक्षियों के वृत्तांत में उस समय स्पष्ट सुधार किया गया है जब उन्होंने न्यायालय के समक्ष साक्ष्य दिया था । तथापि, अभि. सा. 2 ने यहां तक कि अपनी प्रतिपरीक्षा में भी यह कथन किया था कि अभि. सा. 6 ने अस्पताल में रेखा का कथन विस्तार से अभिलिखित किया था । अब यह हमें अस्पताल में किए गए रेखा के उस कथन अर्थात् प्रदर्श-59 की ओर ले जाता है जो अभि. सा. 6 द्वारा अभिलिखित किया गया था । प्रदर्श-59 की परीक्षा करते समय हम अभि. सा. 12 और अभि. सा. 13 के साक्ष्य का भी विश्लेषण करेंगे ।

20. मृतका ने प्रदर्श-59 में यह कथन किया था कि उसे तारीख 12 दिसंबर, 1996 को पुलिस विभाग में महिला पुलिस कांस्टेबल के रूप में नियुक्त किया गया था । घटना की तारीख से लगभग तीन माह पूर्व उसे अंबाजोगई पुलिस थाने में स्थानांतरित किया गया था । उसका अपीलार्थी से विवाह लगभग दो वर्ष पहले हुआ था । अपीलार्थी सेना में नियोजित था और जोधपुर में तैनात था । घटना की तारीख से लगभग आठ दिन पूर्व वह पंद्रह दिन की छुट्टी पर घर आया था । वह अपने ससुराल वालों के साथ पुलिस कालोनी, अंबाजोगई में एक क्वार्टर में रहती थी । विवाह के पश्चात्, उसके साथ केवल लगभग पंद्रह दिन अच्छा व्यवहार किया गया था । उसके पश्चात्, उसकी सास और देवर उस पर बुरा बर्ताव करने का दोष लगाने लगे और उसके चरित्र पर संदेह करने लगे । उसके साथ मौखिक और शारीरिक दुर्व्यवहार किया गया

था । ससुराल वाले यह मांग करते थे कि उसे अपना वेतन उन्हें सौंपना चाहिए । जब उसने इनकार किया तो उन्होंने उसे यह कहकर तंग किया और दुर्व्यवहार किया कि उसे क्यों उसके वेतन की आवश्यकता है । देवर उसके अन्य ससुराल वालों को और उसके पति (अपीलार्थी) को जब कभी वह छुट्टी पर घर होता था, यह कहकर उकसाता था कि वह बुरा बर्ताव करती है जिसके कारण अपीलार्थी को उसे छोड़ देना चाहिए । ऐसे उकसावे के कारण पति (अपीलार्थी) उसकी पिटाई करता रहता था । यद्यपि उसका पुलिस खेलकूद प्रतियोगिता, बीड के लिए चयन हो गया था, तो भी अपीलार्थी ने उसे उसमें भाग लेने से मना कर दिया था ।

20.1 तारीख 22 जुलाई, 2022 को अपीलार्थी और उसके देवर सुरेश ने मृतका को मकान से बाहर नहीं जाने दिया । उसे मकान में परिरुद्ध करके उस पर शारीरिक रूप से हमला किया गया । सायंकाल में उन्होंने उसकी टांगों को एक तौलिए से और उसके हाथों को एक गमछे से बांध दिया । उसके पति ने उसका मुंह दबा लिया जबकि उसका देवर एक दियासलाई और मिट्टी के तेल की एक बोतल लाया । पति ने उसके संपूर्ण शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़का और एक तिल्ली जलाई जिससे उसे आग लगा दी । उसका गाउन जल गया और इस प्रक्रिया में उसे गंभीर दाह-क्षतियां कारित हुईं । उस समय उसके पति (अपीलार्थी) का दायां हाथ भी जल गया था ।

20.2 जब वह चिल्लाई, तो पति और देवर ने दरवाजा खोला और भाग गए । जैसे-तैसे, वह बाहर आई । फिर लोगों ने जो उसके मकान के बाहर इकट्ठा हो गए थे, आग की लपटों को बुझाया, उसे एक आटो में डाला और उसे अस्पताल ले गए ।

21. अभि. सा. 6 अंबाजोगई पुलिस थाने में सहायक उप निरीक्षक के रूप में सेवारत था । वह तारीख 22 जुलाई, 2002 को ड्यूटी पर था । उसने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि पुलिस थाने के थानाधिकारी ने उसे रेखा का कथन अभिलिखित करने के लिए कहा था, जो दाह-क्षतियों के कारण एस. आर. टी. आर. अस्पताल में भर्ती थी । उसने दाह-क्षति वार्ड में सेवारत नर्सों से पूछताछ की जहां रेखा का उपचार किया जा रहा था । वह लगभग 11.30 बजे अपराह्न में

अस्पताल गया था । उसने 5 से 10 मिनट के भीतर रेखा का कथन अभिलिखित करना आरंभ किया । कथन अभिलिखित करने से पूर्व उसने नर्सों से डाक्टर को बुलाने का अनुरोध किया, जिसके पश्चात् डाक्टर किरन कुरकुरे, अभि. सा. 13 आए । अभि. सा. 13 ने रेखा का परीक्षण किया और प्रमाणित किया कि वह अपना कथन करने की स्थिति में है । उसके पश्चात्, अभि. सा. 6 ने रेखा का कथन अभिलिखित किया । किंतु उसका कथन अभिलिखित करने से पूर्व उसने सुनिश्चित किया था कि रेखा कथन करने की स्थिति में थी । इस साक्षी ने अपने साक्ष्य में वह वर्णन किया जो रेखा ने उसे बताया था और जो उसने अभिलिखित किया था । इस साक्षी ने कथन किया कि उसने रेखा का कथन उसके कथनानुसार सही-सही अभिलिखित किया था । उसने उसके द्वारा किए गए और उसके द्वारा अभिलिखित किए गए कथन की अंतर्वस्तुओं को उसे पढ़कर सुनाया और रेखा ने कहा कि वे सही हैं । चूंकि वह हस्ताक्षर करने या अपने अंगूठे की छाप लगाने में असमर्थ थी क्योंकि वह गंभीर रूप से जली हुई थी, इसलिए अभि. सा. 6 ने उसकी दायीं टांग के अंगूठे की छाप ली थी । अभि. सा. 13 ने उसका कथन अभिलिखित करने से पूर्व और उसके कथन के समाप्त होने पर अपना पृष्ठांकन और हस्ताक्षर किए थे । उसके पश्चात्, अभि. सा. 6 ने दोनों पृष्ठों पर अपने हस्ताक्षर किए थे । अपने साक्ष्य में उसने रेखा के कथन को साबित किया जो उसे दिखाया गया था ।

22. अभि. सा. 12 डा. प्रशांत केदारी ने अपने साक्ष्य में कथन किया था कि प्रदर्श-59 पर दो पृष्ठांकन और हस्ताक्षर डा. किरन कुरकुरे, अभि. सा. 13 के हैं ।

23. अभि. सा. 13 ने अपने साक्ष्य में कथन किया कि रेखा का कथन 11.45 बजे अपराह्न में अभिलिखित किया गया था और वह मौजूद था । रेखा होश में थी और अपना कथन करने की स्थिति में थी । उसने पृष्ठांकनों के नीचे अपने दो पृष्ठांकनों और हस्ताक्षरों को साबित किया । उसने प्रदर्श-59 की अंतर्वस्तुओं की सत्यता को भी साबित किया । उसने स्पष्ट किया कि दूसरे पृष्ठांकन में उसने गलती से 11.45 बजे अपराह्न का समय लिख दिया था । उसने यह भी प्रकथन किया कि अस्पताल में रेखा को भर्ती करने के समय पर उसने रेखा

द्वारा बताए गए चिकित्सीय इतिवृत्त को भी अभिलिखित किया था । उसने उसकी (प्रदर्श-117) अंतर्वस्तुओं को साबित किया ।

24. उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि रेखा ने अपने मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श-59) में जिस घटना में उसे दाह-क्षतियां पहुंची थीं उसमें पति (अपीलार्थी) और देवर द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में स्पष्ट रूप से कथन किया था । मृत्युकालिक कथन की अंतर्वस्तुओं को अभि. सा. 6, अभि. सा. 12 और अभि. सा. 13 द्वारा साबित किया गया है । यद्यपि उनके साक्ष्य में कतिपय असंगतियां हैं, तो भी ऐसी असंगतियां हो जाना पूरी तरह स्वाभाविक है । इसके अलावा, वे तात्विक नहीं हैं और उसके कथन के सारभूत भाग को प्रभावित नहीं करती हैं । घटना तारीख 22 जुलाई, 2002 को घटी थी और मृत्युकालिक कथन उसी दिन कुछ ही घंटों के भीतर अभिलिखित किया गया था, जबकि उपरोक्त साक्षियों द्वारा न्यायालय में साक्ष्य पांच वर्षों के पश्चात् दिया गया था । ऐसी असंगतियां हो जाना लाजिमी है । वास्तव में, तात्विक साक्षियों द्वारा एक समान कथन करने से ऐसे साक्ष्य की विश्वसनीयता के बारे में न्यायालय के मस्तिष्क में सिखाने-पढ़ाने के रूप में संदेह उत्पन्न हो सकता है । इस स्थिति में, हम मृतका के मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श-59) को एक विधिमान्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार हैं ।

25. मृत्युकालिक कथन से संबंधित विधि अब भली-भांति स्थिर है । जब एक बार कोई मृत्युकालिक कथन प्रामाणिक और न्यायालय का विश्वास प्रेरित करने वाला पाया जाता है, तब इसका अवलंब लिया जा सकता है और किसी संपुष्टि के बिना दोषसिद्धि के लिए एकमात्र आधार हो सकता है । तथापि, ऐसे किसी मृत्युकालिक कथन को स्वीकार करने से पूर्व न्यायालय का अवश्य यह समाधान हो जाना चाहिए कि यह स्वेच्छापूर्वक किया गया था, यह संगत और विश्वसनीय है तथा यह किसी प्रकार के सिखाने-पढ़ाने से रहित है । जब एक बार ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है तो मृत्युकालिक कथन की अत्यधिक प्रमाणिकता हो जाती है और जैसाकि पहले कहा गया है, यह दोषसिद्धि के लिए एकमात्र आधार बन सकता है ।

26. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32(1) मृत्युकालिक कथन से संबंधित है । चूंकि उक्त उपबंध सुसंगत है इसलिए इसे इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "**32. वे दशाएं जिनमें उस व्यक्ति द्वारा सुसंगत तथ्य का किया गया कथन सुसंगत है, जो मर गया है या मिल नहीं सकता, इत्यादि** – सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे, जो मर गया है या मिल नहीं सकता है या जो साक्ष्य देने के समर्थ हो गया है या जिसकी हाजिरी इतने विलंब या व्यय के बिना उपाप्त नहीं की जा सकती, जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को अयुक्तियुक्त प्रतीत होता है, निम्नलिखित दशाओं में स्वयमेव सुसंगत है –
>
> (1) **जबकि वह मृत्यु के कारण से संबंधित है** – जबकि वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, तब उन मामलों में, जिनमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो ।
>
> ऐसे कथन सुसंगत हैं चाहे उस व्यक्ति को, जिसने उन्हें किया है, उस समय जब वे किए गए थे, मृत्यु की प्रत्याशंका थी या नहीं और चाहे उस कार्यवाही की, जिसमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत होता है, प्रकृति कैसी ही क्यों न हो ।"

26.1 धारा 32 में कहा गया है कि किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो मर गया है या जो मिल नहीं सकता है इत्यादि, किए गए कथन, चाहे यह लिखित रूप में हो या मौखिक, स्वयमेव सुसंगत तथ्य हैं । स्थिति (1) के अनुसार, जब सुसंगत तथ्य का संबंध मृत्यु के कारण से है, तो ऐसा कथन सुसंगत होगा चाहे उस व्यक्ति को, जिसने उसे किया है, उस समय जब वह किया गया था, मृत्यु की प्रत्याशंका थी या नहीं । ऐसा कथन सुसंगत होगा चाहे उस कार्यवाही की, जिसमें उसकी मृत्यु का कारण प्रश्नगत होता है, प्रकृति कैसी ही क्यों न हो । यह सुसंगतता उसकी मृत्यु के कारण तक सीमित नहीं है अपितु उस संव्यवहार की परिस्थितियों तक है जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी ।

27. **खुशाल राव** बनाम **बम्बई राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने मृत्युकालिक कथन की स्वीकार्यता को शासित करने वाले सिद्धांतों की परीक्षा की थी । साक्ष्य अधिनियम के सुसंगत उपबंधों और विभिन्न न्यायिक निर्णयों की परीक्षा करने के पश्चात् इस न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष अधिकथित किए :–

(i) विधि के आत्यंतिक नियम के रूप यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि कोई मृत्युकालिक कथन तब तक दोषसिद्धि का एकमात्र आधार नहीं बन सकता है जब तक कि इसकी संपुष्टि नहीं हो जाती है ;

(ii) प्रत्येक मामले का अवधारण स्वयं उसके तथ्यों के आधार पर उन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए जिनमें मृत्युकालिक कथन किया गया था ;

(iii) एक साधारण प्रतिपादना के रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि मृत्युकालिक कथन अन्य साक्ष्य की बजाए एक कमजोर प्रकार का साक्ष्य है ;

(iv) मृत्युकालिक कथन का महत्व किसी अन्य साक्ष्य के समान होता है और इसका मूल्यांकन परिवर्ती परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और साक्ष्य पर विचारमनन करने वाले सिद्धांतों के प्रति निर्देश करके किया जाना चाहिए ;

(v) ऐसा मृत्युकालिक कथन जो किसी सक्षम मजिस्ट्रेट द्वारा उचित रीति में, अर्थात् प्रश्नों और उत्तरों के रूप में और यथासाध्य घोषणा करने वाले के शब्दों में अभिलिखित किया गया है, तो वह उस मृत्युकालिक कथन की बजाय अधिक ऊंचे पायदान पर होता है जो मौखिक परिसाक्ष्य पर निर्भर हो, जिसमें मानव की यादाश्त और मानव चरित्र संबंधी सभी खामियां हो सकती हैं ;

(vi) किसी मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता का परीक्षण करने के लिए न्यायालय को ऐसा कथन करने वाले संबंधित व्यक्ति की हालत ; यह कि कथन शीघ्रतम अवसर पर किया गया था और

[1] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 22.

हितबद्ध पक्षकारों द्वारा सिखाने-पढ़ाने का परिणाम नहीं था सहित विभिन्न परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए ।

28. **पानीबेन (श्रीमती)** बनाम **गुजरात राज्य**[1] वाले मामले में उपरोक्त निष्कर्षों को दोहराया गया था । इस न्यायालय ने घोषित किया कि न तो विधि का और न ही प्रज्ञा का ऐसा कोई नियम है कि संपुष्टि के बिना मृत्युकालिक कथन के आधार पर कार्यवाही न की जा सकती हो । तथापि, न्यायालय को मृत्युकालिक कथन की सावधानीपूर्वक संवीक्षा करनी चाहिए और अवश्य यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कथन सिखाने-पढ़ाने, प्रेरित करने या कल्पना का परिणाम तो नहीं है ; मृतक कथन करने के लिए उपयुक्त और सही हालत में होना चाहिए । किंतु जब एक बार न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि मृत्युकालिक कथन सत्य और स्वैच्छिक है, तो इसके आधार पर किसी संपुष्टि के बिना दोषसिद्धि की जा सकती है ।

29. **कुंदुला बाला सुब्रहमण्यम् और एक अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने मृत्युकालिक कथन के महत्व को रेखांकित किया था । साधारण नियम यह है कि अनुश्रुत साक्ष्य ग्राह्य नहीं है । जब तक साक्ष्य की प्रतिपरीक्षा में जांच नहीं हो जाती है, तब तक यह विश्वसनीय नहीं है । तथापि, साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन इस साधारण नियम का एक अपवाद है । इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

"18. *** *** ***

व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कगार पर किए गए कथन की एक विशेष पवित्रता होती है क्योंकि इस गंभीर क्षण पर किसी व्यक्ति द्वारा कोई असत्य कथन करने की बहुत ही कम संभावना होती है । आसन्न मृत्यु का पूर्वाभास स्वयमेव मृतक द्वारा उन कारणों या परिस्थितियों के संबंध में किए गए कथन की सत्यता की गारंटी है जिनमें उसकी मृत्यु हुई है । अत मृत्युकालिक कथन की साक्ष्य के रूप में लगभग एक पुनीत प्रास्थिति होती है क्योंकि

[1] (1992) 2 एस. सी. सी. 474.

[2] (1993) 2 एस. सी. सी. 684.

यह मृतक के मुख से आता है । जब एक बार मर गए व्यक्ति का कथन और उसको प्रमाणित करने वाले साक्षियों का साक्ष्य न्यायालयों की सावधानीपूर्वक संवीक्षा के परीक्षण से गुजरता है, तो यह एक अति महत्वपूर्ण और विश्वसनीय साक्ष्य बन जाता है और यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि मृत्युकालिक कथन सत्य है और किसी अतिरंजना से मुक्त है तो ऐसा मृत्युकालिक कथन स्वयमेव किसी संपुष्टि के बिना भी दोषसिद्धि अभिलिखित करने के लिए पर्याप्त हो सकता है ..... ।"

30. आगे विस्तार से बताते हुए **शेर सिंह और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि किसी मृत्युकालिक कथन की स्वीकार्यता इसलिए और अधिक है क्योंकि ऐसा कथन मरणावस्था में किया जाता है । जब पक्षकार मृत्यु के कगार पर है, तो विरले ही ऐसे किसी व्यक्ति का झूठ बोलने का कोई हेतु होता है और यही कारण है कि किसी मृत्युकालिक कथन के मामले में शपथ और प्रतिपरीक्षा की अपेक्षाओं से अभिमुक्ति दी गई है ।

31. **सुधाकर** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि :–

"20. 'मृत्युकालिक कथन' किसी व्यक्ति द्वारा उस प्रक्रम पर किया गया अंतिम कथन है जब उसे अपनी मृत्यु की गंभीर आशंका है और उसके बचने की कोई संभावना नहीं है । ऐसे समय पर, यह प्रत्याशा की जाती है कि व्यक्ति सत्य और केवल सत्य बोलेगा । सामान्यत: ऐसी स्थितियों में न्यायालय ऐसे कथन में सत्यता अंतर्निहित होने की बात को महत्व देते हैं । जब एक बार ऐसा कथन स्वेच्छापूर्वक किया गया है, यह विश्वसनीय है और मृतक द्वारा सच्चाई को छिपाने या किसी व्यक्ति को मिथ्या रूप से फंसाने का प्रयास नहीं किया गया है, तब न्यायालय ऐसे मृत्युकालिक कथन पर सुरक्षित रूप से अवलंब ले सकते हैं और इसके आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है । इतना ही नहीं,

---

[1] (2008) 4 एस. सी. सी. 265.

[2] (2012) 7 एस. सी. सी. 569.

जहां मृतक द्वारा मृत्युकालिक कथन के रूप में दिए गए वृत्तांत का अन्य अभियोजन साक्ष्य द्वारा समर्थन और संपुष्टि होती है, तो ऐसे मृत्युकालिक कथन की सत्यता पर संदेह करने का न्यायालयों के लिए कोई कारण नहीं है ।"

32. जब एक से अधिक मृत्युकालिक कथन हों, इस न्यायालय ने **अमोल सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह स्पष्ट किया था कि यह मृत्युकालिक कथन की बहुलता नहीं है जो मायने रखती है । इसके विपरीत, यह किसी मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता है जो महत्वपूर्ण है । यदि एक मृत्युकालिक कथन और दूसरे मृत्युकालिक कथन के बीच असंगतियां हैं, तो न्यायालय को असंगतियों की प्रकृति की परीक्षा करनी चाहिए अर्थात् चाहे वे तात्विक हैं या नहीं ।

33. **लखन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जहां कई सारे मृत्युकालिक कथन हों और उनके बीच असंगतियां हों, तो न्यायालय को तथ्यों की संवीक्षा अति सावधानीपूर्वक करनी होगी और उसके पश्चात् विनिश्चय करेगा कि उन कथनों में से कौन सा विश्वसनीय है ।

34. पुनः, **आशाबाई** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[3] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि जब कई सारे मृत्युकालिक कथन हों, तो प्रत्येक मृत्युकालिक कथन का उसके साक्ष्यिक महत्व के बारे में पृथक् रूप से निर्धारण और उनके स्वयं के गुणागुण के आधार पर स्वतंत्र रूप से मूल्यांकन किया जाना चाहिए । किसी एक को दूसरे में मात्र कतिपय फेरफार होने के कारण नामंजूर नहीं किया जा सकता ।

35. जैसाकि पहले ही ऊपर चर्चा की गई है, हमारे लिए मृतका के मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श-59) की सत्यता के बारे में संदेह करने का कोई कारण नहीं है, जिसे साक्ष्य में साबित किया गया है । परिचर्या करने वाले डाक्टर ने यह प्रमाणित किया है कि मृतका अपना कथन

---

[1] (2008) 5 एस. सी. सी. 468.

[2] (2010) 8 एस. सी. सी. 514.

[3] (2013) 2 एस. सी. सी. 224.

करने के लिए समर्थ थी । मृत्युकालिक कथन का सार डाक्टर द्वारा अभिलिखित किए गए रोगी के चिकित्सा इतिवृत्त से भी प्रकट होता है और उसे भी साक्ष्य में साबित किया गया है । इसके अतिरिक्त, यद्यपि अभियोजन साक्षियों के वृत्तांत में असंगतियां और सुधार हैं, तथापि, मृतका द्वारा मृत्युकालिक कथन में किए गए वर्णन और डाक्टर द्वारा अभिलिखित किए गए चिकित्सा इतिवृत्त के सारभाग में समरूपता है । इस स्थिति में, अभिलेख पर के साक्ष्य, विशिष्ट रूप से प्रदर्श 59 से, स्पष्ट रूप से अभियुक्त की दोषिता सभी युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध होती है ।

36. हम इस तथ्य से भिज्ञ हैं कि अपीलार्थी वर्ष 2016 से जमानत पर है । तो भी, साक्ष्य की सावधानीपूर्वक संवीक्षा करने के पश्चात् हमारे मस्तिष्क में कोई संकोच नहीं है कि अपीलार्थी अपराध कारित करने का दोषी है और दोषिता को सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है ।

37. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए यह अपील खारिज की जाती है । अपीलार्थी को अपना दंडादेश पूरा करने के लिए आज से दो सप्ताह के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करने का निदेश दिया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2024] 3 उम. नि. प. 113

सुरेन्द्र सिंह

बनाम

राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)

[2012 की दांडिक अपील सं. 592]

3 जुलाई, 2024

न्यायमूर्ति सुधांशु धुलिया और न्यायमूर्ति राजेश बिंदल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 307 और 300 का अपवाद 1 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 105] – हत्या – मृतक के अभिकथित रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी की पत्नी के साथ अयुक्त संबंध होना – अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा पुलिस थाने में संतरी की अपनी ड्यूटी के दौरान अन्य पुलिस कार्मिकों की मौजूदगी में अपनी कार्बाइन से गोलियां चलाकर मृतक की हत्या किया जाना और शिकायतकर्ता महिला पुलिस कर्मी को भी गोली की क्षतियां कारित होना – अभियुक्त द्वारा घटना से इनकार न किया जाना किंतु आत्म-रक्षा तथा गंभीर और अचानक प्रकोपन में कार्य करने का अभिवाक् किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – मृतक के अपीलार्थी की पत्नी के साथ अयुक्त संबंध होने के कारण अभियुक्त के पास मृतक की मृत्यु कारित करने का स्पष्ट हेतु होने, मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट और साक्षियों के साक्ष्य से यह दर्शित होना कि अभियुक्त द्वारा मृतक की छाती पर अत्यंत निकट से गोली मारने के साथ-साथ मृतक द्वारा बचने की कोशिश करते समय उसकी पीठ पर भी गोली मारी गई थी और आठ से नौ गोलियां मारी गई थीं इसलिए इसे आत्म-रक्षा में तथा गंभीर और अचानक प्रकोपन में गोली चलाकर मृत्यु कारित किया जाना नहीं कहा जा सकता और अभियुक्त का मामला हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध का मामला न होकर हत्या का मामला है इसलिए

हत्या के अपराध के लिए की गई उसकी दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतक का विवाह अभियुक्त-अपीलार्थी की चचेरी बहिन से हुआ था और वह उसका पड़ोसी भी था । मृतक के अपीलार्थी की पत्नी के साथ अयुक्त संबंध थे । शिकायतकर्ता, जो सुसंगत समय पर पुलिस थाना, मयूर विहार, नई दिल्ली में हैड कांस्टेबल के रूप में तैनात थी, के विवरण के आधार पर पुलिस थाना, मयूर विहार, नई दिल्ली में भारतीय दंड संहिता की धारा 302/307 के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी जिसमें उसने यह उल्लेख किया कि घटना की तारीख को वह लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न में पुलिस थाने पहुंची और अभियुक्त (अपीलार्थी) को मृतक से बात करते हुए देखा । उसने यह भी कहा कि लगभग 11.40 बजे पूर्वाह्न में उसे गोली चलने की आवाज सुनाई दी और फिर मृतक को ड्यूटी अधिकारी के कमरे की ओर भागते हुए देखा । वह हवा में हाथ उठाए हुए था और उसके हाथ रक्त से लथपथ थे । अभियुक्त को अपनी कार्बाइन से मृतक पर गोली चलाते हुए देखा गया । जब गोलीबारी बंद हुई तो मृतक को ड्यूटी अधिकारी के कमरे के बाहर रक्त से लथपथ पड़े हुए देखा गया । अभियुक्त को उसकी कार्बाइन सहित पुलिस कर्मचारिवृंद द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया और शिकायतकर्ता (अभि. सा. 2), जोकि गोलीबारी में क्षतिग्रस्त हो गई थी, को अस्पताल ले जाया गया जहां उसे चिकित्सीय उपचार दिया गया । पुलिस ने अपने अन्वेषण के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किया और मामला सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया, जहां अभियुक्त (अपीलार्थी) के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/307 के अधीन आरोप विरचित किए गए । विचारण न्यायालय द्वारा अंततोगत्वा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 307 के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा उसकी दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि की गई । अभियुक्त द्वारा दोषसिद्धि और दंडादेश के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – कुल मिलाकर, मृतक को अपीलार्थी की कार्बाइन से आठ से नौ गोलियां लगी थीं जो उसके पूरे शरीर पर फैली हुई थीं । मृतक के शरीर के आगे और पीछे दोनों तरफ घाव हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि मृतक को न केवल सामने से बल्कि जब वह बचने की कोशिश कर रहा था पीछे से भी गोली मारी गई थी । इन क्षतियों की प्रकृति की संपुष्टि अभि. सा. 2 के प्रत्यक्षदर्शी परिसाक्ष्य से होती है । अभि. सा. 2 ने ही यह कहा था कि जब वह पुलिस थाने आई, तो उसने मृतक को पुलिस थाने के द्वार पर अपीलार्थी से बात करते देखा था और अपीलार्थी के पास एक कार्बाइन थी । अभि. सा. 21, कांस्टेबल देवेन्द्र कुमार, जिसे दोपहर 12.00 बजे 'संतरी'/गार्ड का प्रभार संभालना था, ने भी यह कहा कि उसने घटना से पहले अपीलार्थी को मृतक से बात करते हुए देखा था । अभि. सा. 2 ने कुछ मिनट बाद गोली चलने की आवाज सुनी और फिर मृतक (जो रक्त से लथपथ था) को अपने हाथ खड़े करके ड्यूटी कक्ष की ओर भागते हुए देखा और अपीलार्थी ने पीछे से उस पर गोली चलाई । कुल मिलाकर, ये सभी साक्ष्य अचुनौतीपूर्ण हैं । अभियोजन का पक्षकथन इन साक्ष्यों के आधार पर सुरक्षित है । यह हत्या का स्पष्ट मामला है । अपीलार्थी के हेतु (स्वीकृत रूप से मृतक का अपीलार्थी की पत्नी के साथ संबंध था) और पुलिस थाने में अपराध को अंजाम देना, ये सभी बातें वर्तमान अपीलार्थी द्वारा पुलिस थाने के अंदर की गई हत्या की ओर इशारा करते हैं । प्रवेश बिंदु को काला करते हुए एक अग्न्यायुध क्षति से भी स्पष्ट होता है कि मृतक को पहली गोली अत्यंत निकट से मारी गई थी । शेष क्षतियां भी ऊपर निर्दिष्ट किए गए प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य से मेल खाती हैं । आत्मरक्षा का अभिवाक् और अनुकल्पत: गंभीर और अचानक प्रकोपन का अपीलार्थी द्वारा किया गया अभिवाक् भी इस कहानी पर आधारित है कि मृतक ही अपनी कार में तेज गति से पुलिस थाने आया था जिससे उसने पहले पुलिस थाने के द्वार को टक्कर मारी और फिर अपीलार्थी को मारने के लिए उससे आयुध छीनने का प्रयास किया । किंतु इन तर्कों का कोई आधार नहीं है और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रतिरक्षा की इस विचित्र लाइन को बनाए रखने के लिए लेशमात्र भी साक्ष्य नहीं है ।

प्रस्तुत मामले में प्रतिरक्षा पक्ष किसी साक्ष्य द्वारा प्राइवेट प्रतिरक्षा के मामले को सिद्ध नहीं कर सका है । इस पहलू पर कोई साक्ष्य नहीं है और इसलिए विचारण न्यायालय तथा अपील न्यायालय द्वारा इस अभिवाक् को नामंजूर कर दिया गया था । (पैरा 18, 19, 20, और 22)

वास्तव में, मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए और अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के आधार पर, अभियुक्त/अपीलार्थी द्वारा किया गया आत्मरक्षा का अभिवाक् कम से कम बचकाना है । प्रतिरक्षा पक्ष का यह पक्षकथन कि मृतक अपीलार्थी को मारने के लिए 'निहत्था' पुलिस थाने आया था, यह अच्छी तरह से जानते हुए कि अपीलार्थी के पास आयुध था, मृतक को हमलावर के रूप में प्रस्तुत करने का एक विचित्र प्रयास है । इसका कोई अर्थ नहीं है । यहां सबसे महत्वपूर्ण बात अभि. सा. 2, अभि. सा. 1, अभि. सा. 11 और अभि. सा. 17 के प्रत्यक्षदर्शी बयान हैं, जिनसे साबित होता है कि अपीलार्थी शुरुआत में गोली चलाकर नहीं रुका, जो उसने अत्यंत निकट से चलाई थी (काले रंग के साथ बंदूक की गोली का प्रवेश घाव) । इसके बजाय, उसने मृतक पर तब भी गोलियां बरसाना जारी रखा जब वह बचकर भागने की कोशिश कर रहा था । उस समय पुलिस थाने में मौजूद चार पुलिस कर्मियों के प्रत्यक्षदर्शी बयान से किसी युक्तियुक्त संदेह के परे हत्या का मामला सिद्ध होता है । वर्तमान मामले में हर संभव पहलू के आधार पर यह मामला हत्या के अलावा कुछ नहीं है । प्रयुक्त किए गए आयुध की प्रकृति ; मृतक पर चलाई गई गोलियों की संख्या ; शरीर का वह भाग जहां पर गोलियां चलाई गईं, ये सभी इस बात की ओर इशारा करते हैं कि अपीलार्थी मृतक को मारने के लिए दृढ़संकल्प था । आखिरकार, उसने अपना काम पूरा किया और यह सुनिश्चित किया कि मृतक मर चुका है । किसी भी प्रकार से यह कमतर परिणाम का मामला नहीं है और निश्चित रूप से हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध नहीं है । वर्तमान मामले के तथ्यों से दूर-दूर तक भी भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 1 या भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के किसी अन्य अपवाद के अंतर्गत आने वाला कोई मामला नहीं बनता है । उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए यह न्यायालय विचारण

न्यायालय और उच्च न्यायालय के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं है । (पैरा 23, 25 और 26)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 13 एस. सी. सी. 297 : **केरल राज्य** बनाम **राशीद** ;	13
[2005]	(2005) 9 एस. सी. सी. 405 : **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **रमेश** ;	21
[2001]	(2001) 4 एस. सी. सी. 667 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **शंभुनाथ सिंह** ;	12
[2000]	(2000) 2 एस. सी. सी. 646 : **अंबिका प्रसाद** बनाम **राज्य (दिल्ली प्रशासन)** ;	12
[2002]	(2002) 7 एस. सी. सी. 334 : **मोहम्मद खालिद** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** ;	12
[1979]	(1979) 2 एस. सी. सी. 648 : **सलीम जिया** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	21
[1962]	ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 605 : **के. एम. नानावती** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	25

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2012 की दांडिक अपील सं. 592.

2008 की दांडिक अपील सं. 202 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली तारीख 18 मई, 2011 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री एस. के. अग्रवाल, ज्येष्ठ अधिवक्ता, अरुण के. सिन्हा, राकेश सिंह, (सुश्री) अंजलि राजपूत, सुमित सिन्हा, रोहन गोयल, अभिनव मुत्यालवर, विजय राज सिंह चौहान और सत्यजीत ए. देसाई (न्याय-मित्र)

प्रत्यर्थी की ओर से श्रीमती ऐश्वर्या भाटी, अपर महा सालिसिटर, श्री मुकेश कुमार मरोड़िया, सुश्री अमेया विक्रम थानवी, श्रीमती चित्रांग्दा राष्ट्रवरा, श्री संतोष कुमार, सुश्री स्वीक्षा, सुश्री पूर्णिमा सिंह और श्री चिन्मय मेहता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सुधांशु धुलिया ने दिया ।

न्या. धुलिया – इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के (तारीख 18 मई, 2011 के) उस आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा उसकी अपील को खारिज कर दिया गया और विचारण न्यायालय द्वारा उसकी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 307 के अधीन अपराधों के लिए की गई दोषसिद्धि और दंडादेश, जिसके लिए उसे क्रमश: आजीवन कारावास और सात वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है, कायम रखा गया ।

2. हमने अपीलार्थी तथा राज्य की ओर से विद्वान् काउंसलों को विस्तारपूर्वक सुना ।

3. जैसाकि मामले के तथ्यों से प्रकट होता है, प्रस्तुत मामला दिल्ली में एक पुलिस थाने के अंदर कारित की गई जघन्य हत्या का है । अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अपीलार्थी, जो मयूर विहार पुलिस थाना, नई दिल्ली में पुलिस संतरी के रूप में तैनात था, ने यह हत्या पुलिस थाने के अंदर उस समय की थी जब वह ड्यूटी पर था ।

4. मृतक का विवाह अपीलार्थी की चचेरी बहिन से हुआ था और वह उसका पड़ोसी भी था । अभियोजन का पक्षकथन यह है कि मृतक के अपीलार्थी की पत्नी के साथ अयुक्त संबंध थे । इस तथ्य के एक से अधिक साक्षी हैं कि मृतक और अपीलार्थी को अंतिम बार पुलिस थाने के अंदर एक-दूसरे के साथ बातचीत करते हुए देखा गया था, यहां तक कि इन साक्षियों द्वारा अपीलार्थी को अपनी शासकीय 9 मि.मि. कार्बाइन से मृतक की हत्या करते हुए देखे जाने से कुछ मिनट पहले भी ऐसा देखा गया था ।

5. अभि. सा. 2, जो सुसंगत समय पर पुलिस थाना, मयूर विहार, नई दिल्ली में हैड कांस्टेबल के रूप में तैनात थी, के विवरण के आधार पर तारीख 30 जून, 2002 को 2.30 बजे अपराह्न में पुलिस थाना, मयूर विहार, नई दिल्ली में भारतीय दंड संहिता की धारा 302/307 के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । अभि. सा. 2 ने उल्लेख किया कि घटना की तारीख को वह लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न में पुलिस थाने पहुंची और अपीलार्थी को मृतक से बात करते हुए देखा । उसने यह भी कहा कि लगभग 11.40 बजे पूर्वाह्न में उसे गोली चलने की आवाज सुनाई दी और फिर मृतक को ड्यूटी अधिकारी के कमरे की ओर भागते हुए देखा ; वह हवा में हाथ उठाए हुए था और उसके हाथ रक्त से लथपथ थे । अपीलार्थी को अपनी कार्बाइन से मृतक पर गोली चलाते हुए देखा गया । जब गोलीबारी बंद हुई तो मृतक को ड्यूटी अधिकारी के कमरे के बाहर रक्त से लथपथ पड़े हुए देखा गया । अपीलार्थी को उसकी कार्बाइन सहित पुलिस कर्मचारिवृंद द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया और अभि. सा. 2, जोकि गोलीबारी में क्षतिग्रस्त हो गई थी, को एलबीएस अस्पताल ले जाया गया जहां उसे चिकित्सीय उपचार दिया गया और बाद में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई ।

6. पुलिस ने अपने अन्वेषण के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किया और मामला सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया, जहां वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/307 के अधीन आरोप विरचित किए गए । अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 27 साक्षियों की परीक्षा की । अभियुक्त ने भी अपना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन कथन करने के पश्चात् एक साक्षी की प्रति. सा. 1 के रूप में परीक्षा कराई । जैसाकि पहले ही ऊपर उल्लेख किया गया है, विचारण न्यायालय ने अंततोगत्वा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 307 के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया ।

7. आश्चर्यजनक रूप से और अभियोजन पक्ष को ज्ञात सर्वोत्तम कारणों से उसने अभि. सा. 6, जो अपीलार्थी का भाई है और अभि. सा. 25, जो अपीलार्थी की पत्नी है, की अभियोजन साक्षियों के रूप में परीक्षा

की । यद्यपि इन दोनों साक्षियों ने अभियोजन के पक्षकथन का इस सीमा तक समर्थन करके सिद्ध किया कि मृतक के अपीलार्थी की पत्नी के साथ विवाहेत्तर संबंध थे, तो भी उन दोनों ने अपने परिसाक्ष्य में यह भी कहा कि मृतक ही अपीलार्थी को जान से मारने के लिए दृढ़संकल्प था ।

8. अभि. सा. 25, जो अपीलार्थी की पत्नी है, ने कहा कि घटना से कुछ मिनट पूर्व मृतक उसके स्थान पर आया था और उसे चेतावनी दी थी कि वह उसके पति को जान से मारने के लिए पुलिस थाने जा रहा है । अभि. सा. 6 भी मृतक द्वारा कही गई इस बात का साक्षी है ।

9. जैसाकि हमने देखा है, अभियुक्त/अपीलार्थी ने तो घटना से इनकार किया है और न ही इस तथ्य से इनकार किया है कि उसने मृतक की हत्या की थी । उसका तर्क यह है कि उसने ऐसा आत्म-रक्षा में किया था, और अनुकल्पत: यदि न्यायालय द्वारा आत्म-रक्षा की बात को स्वीकार नहीं किया जाता है, तब यह मामला अधिक से अधिक एक गंभीर और अचानक प्रकोपन का मामला है, जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी के हाथों मृतक की मृत्यु हुई थी । दूसरे शब्दों में, अपीलार्थी को केवल हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के लिए ही दोषसिद्ध किया जा सकता है ।

हमारे समक्ष यह दलील दी गई कि दुर्भाग्यपूर्ण दिन (अर्थात् तारीख 30 जनवरी, 2002) को वह मृतक ही था जो अपीलार्थी को जान से मारने के लिए पुलिस थाने आया था और अपीलार्थी ने अपना आयुध केवल आत्मरक्षा में प्रयुक्त किया था, किंतु दुर्भाग्यवश मृतक मारा गया ।

अभि. सा. 25 और अभि. सा. 6 के साक्ष्य से, जिसको हमने अभी-अभी निर्दिष्ट किया है, स्पष्ट रूप से इस कहानी का इस सीमा तक समर्थन होता है कि मृतक अपीलार्थी की हत्या करने के लिए दृढ़संकल्प था । अपीलार्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने कथन में निम्नलिखित कथन किया :–

> "..... मैं संतरी के रूप में अपनी ड्यूटी कर रहा था । लगभग 11.40 बजे सतीश (मृतक), जो मेरा नातेदार था, वहां आया । मैंने

थाना अधिकारी के निदेशानुसार पुलिस थाने के द्वार को आधा बंद कर रखा था । उसने द्वार को कार से टक्कर मारकर खोला । उसने अपनी कार पुलिस थाने के अंदर खड़ी की । वह मुझ पर चिल्लाने लगा । मैं उसे पुलिस क्वार्टरों की ओर ले गया । वह मुझ पर झपट पड़ा । मैंने उसे ऐसा करने से मना किया । मैं उसे ड्यूटी अधिकारी के कमरे की ओर ले गया । मैंने उसके हाथों से मेरी कार्बाइन छुड़ाने की कोशिश की । इस प्रक्रिया में गोली चल गई । मैगज़ीन नीचे गिर गई । मैंने उसे उठाने और कार्बाइन में लगाने की कोशिश की । इस प्रक्रिया में उससे हवा में चार-पांच बार गोली चली । सतीश ने मुझ से उक्त कार्बाइन छीनने की कोशिश की और उस प्रक्रिया में उसे गोलियां लग गईं । पुलिस थाने के द्वार से पुलिस क्वार्टरों तक कार्बाइन से तीव्रता से गोलियां चली थीं । जब हम ड्यूटी अधिकारी के कमरे के निकट थे तब कार्बाइन स्वचालित रीति में सेट हो गई । इससे गोली चली जो मृतक सतीश के साथ-साथ, ड्यूटी अधिकारी के कमरे की दीवारों, ट्यूबलाइटों और खिड़कियों पर लगी ।"

प्रतिरक्षा पक्ष का संपूर्ण पक्षकथन अभियुक्त-अपीलार्थी के उपरोक्त कथन पर टिका है, जोकि यह है कि वह मृतक ही था जो उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन को यह भली-भांति जानते हुए पुलिस थाने आया था कि अपीलार्थी वहां पर एक संतरी के रूप में तैनात है । उसने फिर अपीलार्थी से आयुध छीनने की कोशिश की और इस हाथापाई में आयुध से गोलियां चल गईं, जोकि एक दुर्घटना थी और अंततोगत्वा उसके परिणामस्वरूप मृतक की मृत्यु हो गई । संक्षेप में यही प्रतिरक्षा पक्ष का पक्षकथन है ।

फिर भी, इस मनगढ़ंत कहानी को विचारण न्यायालय और अपील न्यायालय का समर्थन नहीं मिला और अभियोजन पक्ष का इसके प्रतिकूल जबरदस्त साक्ष्य था, जो केवल वर्तमान अपीलार्थी के हाथों इस जघन्य हत्या की ओर इंगित कर रहा था ।

अभियोजन का पक्षकथन प्राथमिक रूप से पुलिस थाने में ही मौजूद प्रत्यक्षदर्शी साक्षी और मुख्य रूप से अभि. सा. 2 के कथन पर आधारित है जोकि एक महिला हैड कांस्टेबल है और शिकायतकर्ता भी है । यह

साक्षी घटना के बारे में अपने उस वृत्तांत पर अडिग रही, जो उसके द्वारा दर्ज की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में और बाद में विचारण के दौरान मुख्य परीक्षा और प्रतिपरीक्षा में दिया गया था । वह एक अत्यंत विश्वसनीय और भरोसेमंद साक्षी है और उसके कथन और अभिसाक्ष्य की सत्यता से अभियुक्त की दोषिता युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध होती है और इसकी संपुष्टि अभि. सा. 1, अभि. सा. 14 और अभि. सा. 17 जोकि पुलिस थाना, मयूर विहार, नई दिल्ली में कांस्टेबल और हैड कांस्टेबल थे और सुसंगत समय पर पुलिस थाने में मौजूद थे के प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्यों सहित अन्य साक्ष्यों से होती है । इसके अतिरिक्त, न्यायालयिक साक्ष्य द्वारा भी इसकी पुष्टि होती है जोकि पुलिस द्वारा अन्वेषण के दौरान स्वयं घटनास्थल से एकत्रित किया गया था जिसको हम कुछ समय बाद निर्दिष्ट करेंगे ।

प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा अभि. सा. 2 की विस्तृत प्रतिपरीक्षा की गई थी । प्रतिरक्षा पक्ष ने प्रतिपरीक्षा में पुलिस थाने में इस साक्षी की मौजूदगी पर हर संभव संदेह करने का प्रयास किया किंतु यह सब व्यर्थ रहा चूंकि इस मामले में एक से अधिक साक्षी हैं जिनसे अभि. सा. 2 की पुलिस थाने में मौजूदगी स्पष्ट रूप से सिद्ध होती है । इस साक्षी की थाने में मौजूदगी अन्य साक्षियों जैसे अभि. सा. 1, अभि. सा. 14 और अभि. सा. 17 द्वारा सिद्ध होती है, जो उसी पुलिस थाने में तैनात पुलिस कांस्टेबल थे । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उसकी मौजूदगी इस तथ्य द्वारा सिद्ध होती है कि यह साक्षी (अभि. सा. 2) भी एक क्षतिग्रस्त साक्षी है क्योंकि उसे उसके बाएं कंधे पर गोली की क्षतियां पहुंची थीं । उसका चिकित्सीय परीक्षण उसी दिन किया गया था और निम्नलिखित क्षतियां पाई गई थीं :

1. बाएं कंधे पर हंसली के पार्श्व सिरे के निकट 2 x 2 सें. मी. का विदीर्ण घाव जो अग्रभाग तक जा रहा था और ताजा था और रक्त बह रहा था ।

2. बाएं कंधे पर हंसली के पार्श्व सिरे के निकट पश्च भाग पर 3 x 3 सें. मी. का ताजा, रक्त बहता हुआ विदीर्ण घाव ।

अभि. सा. 11, हैड कांस्टेबल जय प्रकाश वह व्यक्ति है जो अभि. सा. 2 को एलबीएस अस्पताल लेकर गया था और इस संबंध में न्यायालय के समक्ष भी साक्ष्य दिया था । अभि. सा. 27, पुलिस थाने का थाना अधिकारी, जिसने मामले का अन्वेषण किया था, ने भी यह साक्ष्य दिया था कि वह घटना के तुरंत पश्चात् पुलिस थाने पहुंचा और फिर उस अस्पताल में गया जहां उसने अभि. सा. 2 का कथन अभिलिखित किया ।

10. अभि. सा. 2 ने अपनी मुख्य परीक्षा में कहा कि तारीख 30 जून, 2002 को वह पुलिस थाना, मयूर विहार में तैनात थी जहां उसे 9.00 बजे पूर्वाह्न से 5.00 बजे पूर्वाह्न तक ड्यूटी अधिकारी के रूप में कार्य करना था, किंतु चूंकि उसे उस दिन कुछ व्यक्तिगत कार्य था इसलिए उसने देर से पहुंचने के लिए थाना अधिकारी से पूर्व अनुज्ञा ले ली थी । अत: वह 11.35 बजे पूर्वाह्न में पुलिस थाने पहुंची और द्वार पर उसने अपीलार्थी-सुरेन्द्र को (जिसकी उसने न्यायालय में शनाख्त की), जो उसी थाने में संतरी के रूप में तैनात था, परिसर के एक कोने के निकट एक अजनबी से बात करते हुए देखा । फिर वह सीधे अपने ड्यूटी कक्ष में गई और जब वह हैड कांस्टेबल ओम पाल (अभि. सा. 1) से बात कर रही थी जिससे उसे प्रभार लेना था और जहां कांस्टेबल विनोद (अभि. सा. 17) और डीएचजी जय सिंह (अभि. सा. 5) मुंशी गुलजारी लाल के साथ मौजूद थे, उसे अचानक पुलिस थाने के परिसर में गोली चलने की आवाज सुनाई दी । फिर उसने उस व्यक्ति (अर्थात् मृतक) को हवा में हाथों को उठाए हुए ड्यूटी अधिकारी के कक्ष की ओर दौड़ते हुए देखा, जिसके साथ अपीलार्थी बात कर रहा था और उससे रक्तस्राव हो रहा था । उसने कांस्टेबल सुरेन्द्र (अर्थात् इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी) को भी पीछे से इस व्यक्ति का पीछा करते हुए देखा, और अभी भी 9 एम. एम. कार्बाइन से मृतक को निशाना बनाकर गोलियां चला रहा था । वह और हैड कांस्टेबल ओम प्रकाश, कांस्टेबल विनोद और डीएचजी जय सिंह नीचे झुके और छिटकती हुई गोलियों से बचने के लिए आड़ ली । उसने फिर मृतक को अत्यधिक रक्तस्राव होते हुए कक्ष के बाहर पड़े हुए देखा । इस समय तक उसे भी अहसास हो गया था कि

उसे भी उसके बाएं कंधे पर गोली की क्षतियां पहुंची हैं । उसे फिर हैड कांस्टेबल जय प्रकाश द्वारा एलबीएस अस्पताल ले जाया गया । अस्पताल में ही उसे सूचित किया गया कि मृतक (सतीश) सुरेन्द्र का एक नातेदार था और वह अब गोलीबारी में पहुंचीं क्षतियों के कारण मर गया है ।

11. प्रतिरक्षा पक्ष ने इस साक्षी की उसकी मुख्य परीक्षा के तुरंत बाद प्रतिपरीक्षा नहीं की, अपितु प्रतिपरीक्षा को आस्थगित करने की मांग की, जिसे आस्थगित किया गया और तारीख 30 नवंबर, 2004 को ही उसकी प्रतिपरीक्षा की गई, जो उसकी मुख्य परीक्षा के दो माह से अधिक बाद का समय है । हम केवल सावधानी बरतने की सलाह देने के लिए यहां थोड़ी देर के लिए रुक सकते हैं । मुख्य परीक्षा के बाद इस मामले में दिया गया इतना लंबा स्थगन कभी नहीं दिया जाना चाहिए था । इसके कई कारण हैं, किंतु हमारे विचार से मुख्य कारण यह है कि इससे विचारण की निष्पक्षता प्रभावित हो सकती है और किसी मामले में साक्षी की सुरक्षा भी खतरे में पड़ सकती है । जहां तक संभव हो, प्रतिरक्षा पक्ष को उसी दिन या अगले दिन साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने के लिए कहा जाना चाहिए । केवल बहुत ही आपवादिक मामलों में और अभिलिखित किए जाने वाले कारणों के लिए प्रतिपरीक्षा को आस्थगित किया जाना चाहिए और यदि आवश्यक हो तो साक्षी के लिए सावधानी और देखरेख करने के बाद एक छोटा स्थगन दिया जा सकता है । हम यह मताभिव्यक्ति करने के लिए बाध्य हैं क्योंकि हमने अनेक मामलों में देखा है कि प्रतिपरीक्षाओं को नियमित रूप से स्थगित किया जा रहा है जिससे निष्पक्ष विचारण पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है ।

12. इस न्यायालय ने एक से अधिक अवसरों पर विचारण न्यायालय की इस परिपाटी की निंदा की है जहां पर्याप्त कारणों के बिना परीक्षाएं आस्थगित कर दी जाती हैं । हम यहां कुछ मामलों का उल्लेख कर सकते हैं, जो हैं **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **शंभुनाथ सिंह**[1] ; **अंबिका**

[1] (2001) 4 एस. सी. सी. 667.

प्रसाद बनाम **राज्य (दिल्ली प्रशासन)**[1] ; **मोहम्मद खालिद** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[2] वाले मामले ।

13. जैसाकि हमने कहा है कि प्रतिपरीक्षा को आपवादिक मामलों में और न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से आस्थगित किया जा सकता है, जैसे कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231[3] की उपधारा (2) के अधीन, किंतु यहां भी स्थगन अधिकार के तौर पर नहीं किया जाना चाहिए और अंततोगत्वा यह न्यायालय का विवेकाधिकार है । **केरल राज्य** बनाम **राशीद**[4] वाले मामले में इस न्यायालय ने कतिपय मार्गदर्शक सिद्धांत निर्धारित किए हैं जिनके अधीन ऐसा स्थगन किया जा सकता है । जोर पुन: इस तथ्य पर दिया गया है कि आस्थगन के लिए अनुरोध पर्याप्त कारणों पर आधारित होना चाहिए जो साक्षी की प्रतिपरीक्षा का आस्थगन करने को न्यायोचित ठहराते हों ।

जैसाकि हम वर्तमान मामले के अभिलेख से देख सकते हैं, अभि. सा. 2 की प्रतिपरीक्षा को स्पष्ट रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट आधारों पर आस्थगित किया गया था । प्रतिरक्षा पक्ष ने अभि. सा. 2 की परीक्षा एक अन्य अभियोजन साक्षी (विनोद-अभि. सा. 17) के साथ करने का अनुरोध किया । फिर भी मामले के अभिलेखों से यह भी पता चलता है कि यद्यपि प्रतिपरीक्षा आस्थगित की गई थी, किंतु दूसरे साक्षी (अभि. सा. 17) की परीक्षा बहुत बाद में, अभि. सा. 2 की प्रतिपरीक्षा के लगभग एक वर्ष बाद, की गई थी । हम केवल एक चेतावनी टिप्पण अभिलिखित करना चाहते थे जिससे हम अपनी यह बात कह सकें कि यह परिपाटी एक उचित

---

[1] (2000) 2 एस. सी. सी. 646.

[2] (2002) 7 एस. सी. सी. 334.

[3] **231. अभियोजन के लिए साक्ष्य –** (1) ऐसी नियत तारीख पर न्यायाधीश ऐसा सब साक्ष्य लेने के लिए अग्रसर होगा जो अभियोजन के समर्थन में पेश किया जाए ।
(2) न्यायाधीश, स्वविवेकानुसार, किसी साक्षी की प्रतिपरीक्षा तब तक के लिए, जब तक किसी अन्य साक्षी या साक्षियों की परीक्षा न कर ली जाए आस्थगित करने की अनुज्ञा दे सकता है या किसी साक्षी को अतिरिक्त प्रतिरीक्षा के लिए पुन: बुला सकता है ।

[4] (2019) 13 एस. सी. सी. 297.

परिपाटी नहीं है और न्यायालयों को इन मामलों को आस्थगित करने में जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 232 के आदेश और ऊपर निर्दिष्ट विषय पर अधिकथित विधि का भाषा और भाव की दृष्टि से पालन किया जाना चाहिए ।

शुक्र है, इस मामले में अभि. सा. 2 की आस्थगित प्रतिपरीक्षा से विचारण की प्रक्रिया पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है । यह साक्षी अपनी बात पर अडिग रही है ।

14. अभि. सा. 19 डा. एस. बी. जंगपांगी है जो एलबीएस अस्पताल, दिल्ली में तैनात आपात चिकित्सा अधिकारी है, जिसने अभि. सा. 2 का परीक्षण किया था चूंकि उसे दुर्भाग्यपूर्ण दिन गोली लगने की क्षतियां पहुंची थीं । अभि सा. 19 ने अपने कथन में उल्लेख किया कि पानवती (अभि. सा. 2) के शरीर पर दो क्षतियां पाई गई थीं । अभि. सा. 19 ने मृतक का भी परीक्षण किया था, जिसे उसके द्वारा मृत घोषित कर दिया गया था और उसके शरीर को गोली की क्षतियों से छलनी पाया था ।

15. अभि. सा. 1 ओमपाल सिंह, जो पुलिस थाना मयूर विहार में हैड कांस्टेबल के रूप में तैनात था, एक अन्य मुख्य अभियोजन साक्षी है । उसका कहना है कि वह तारीख 30 जून, 2002 को महिला हैड कांस्टेबल पानवती (अभि. सा. 2) के स्थान पर ड्यूटी अधिकारी के रूप में कार्य कर रहा था । अभि. सा. 2 के अपनी ड्यूटी पर रिपोर्ट करने के पश्चात् कांस्टेबल विनोद (अभि. सा. 17), डीएचजी जय सिंह और अभि. सा. 1 भी ड्यूटी अधिकारी के कमरे में थे । उसने बताया कि घटना के दिन लगभग 11.35 बजे पूर्वाह्न में उसे गोलीबारी की आवाज सुनाई दी और रक्त से सने वस्त्रों वाले एक व्यक्ति (अर्थात् मृतक) को ड्यूटी अधिकारी के कमरे में जाने की कोशिश करते हुए देखा । अपीलार्थी उसका पीछा कर रहा था, जिसकी शनाख्त इस साक्षी ने न्यायालय में की थी । उसने कहा कि पुलिस कर्मचारिवृंद ने स्वयं अपनी जान ड्यूटी अधिकारी के कमरे में जाकर बचाने की कोशिश की और फिर मृतक को जमीन पर पड़े हुए देखा । कांस्टेबल पानवती (अभि. सा. 2) को भी इस

गोलीबारी में क्षतियां पहुंची थीं । उसने फिर थाना अधिकारी को घटना का बेतार संदेश दिया । इस साक्षी की बाद में प्रतिपरीक्षा की गई थी किंतु पुनः प्रतिपरीक्षा में ऐसा कुछ निकलकर नहीं आया जिससे इस साक्षी के कथन पर संदेह किया जा सके ।

16. अभि. सा. 11 और अभि. सा. 17 क्रमशः हैड कांस्टेबल और कांस्टेबल हैं, जो तारीख 30 जून, 2002 के उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन इस पुलिस थाने में तैनात थे । वे भी इस अपराध के साक्षी थे और उनके अभिसाक्ष्य में भी वही तथ्य सामने आए हैं जो अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने बताए हैं ।

17. मरणोत्तर परीक्षा तारीख 1 जुलाई, 2002 को एलबीएस अस्पताल के डा. विनय कुमार सिंह (अभि. सा. 18) द्वारा की गई थी । उसे मृतक के शरीर पर 17 मृत्यु-पूर्व की क्षतियां पायी थीं । उसने अपने अभिसाक्ष्य में अपनी मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट की पुष्टि की, जिसमें उसकी राय में मृत्यु का कारण आग्न्यायुध की क्षतियों के परिणामस्वरूप पहुंचा सदमा था । उसने कथन किया कि मृतक की छाती और पीठ पर पहुंची क्षतियां उसकी मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थीं । उसने यह भी उल्लेख किया कि मृतक की छाती की गुहिका से भी गोलियां बरामद की गई थीं और एक गोली पीठ के दाहिने हिस्से से बरामद की गई थी । आग्न्यायुध से कारित छह घाव थे जो छह आग्न्यायुध निकास घावों के अनुरूप थे । कम से कम एक आग्न्यायुध प्रविष्टि घाव के प्रवेश बिंदु पर कालापन है जिससे दर्शित होता है कि यह गोली अत्यंत निकट से मारी गई थी ।

18. कुल मिलाकर, मृतक को अपीलार्थी की कार्बाइन से आठ से नौ गोलियां लगी थीं जो उसके पूरे शरीर पर फैली हुई थीं । मृतक के शरीर के आगे और पीछे दोनों तरफ घाव हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि मृतक को न केवल सामने से बल्कि जब वह बचने की कोशिश कर रहा था पीछे से भी गोली मारी गई थी । इन क्षतियों की प्रकृति की संपुष्टि अभि. सा. 2 के प्रत्यक्षदर्शी परिसाक्ष्य से होती है । अभि. सा. 2 ने ही यह कहा था कि जब वह पुलिस थाने आई, तो उसने मृतक को पुलिस थाने के द्वार पर अपीलार्थी से बात करते देखा था और अपीलार्थी के पास एक कार्बाइन थी । अभि. सा. 21, कांस्टेबल देवेन्द्र कुमार, जिसे

दोपहर 12.00 बजे 'संतरी'/गार्ड का प्रभार संभालना था, ने भी यह कहा कि उसने घटना से पहले अपीलार्थी को मृतक से बात करते हुए देखा था । अभि. सा. 2 ने कुछ मिनट बाद गोली चलने की आवाज सुनी और फिर मृतक (जो रक्त से लथपथ था) को अपने हाथ खड़े करके ड्यूटी कक्ष की ओर भागते हुए देखा और अपीलार्थी ने पीछे से उस पर गोली चलाई ।

19. कुल मिलाकर, ये सभी साक्ष्य अचुनौतीपूर्ण हैं । अभियोजन का पक्षकथन इन साक्ष्यों के आधार पर सुरक्षित है । यह हत्या का स्पष्ट मामला है । अपीलार्थी के हेतु (स्वीकृत रूप से मृतक का अपीलार्थी की पत्नी के साथ संबंध था) और पुलिस थाने में अपराध को अंजाम देना, ये सभी बातें वर्तमान अपीलार्थी द्वारा पुलिस थाने के अंदर की गई हत्या की ओर इशारा करते हैं । प्रवेश बिंदु को काला करते हुए एक आग्न्यायुध क्षति से भी स्पष्ट होता है कि मृतक को पहली गोली अत्यंत निकट से मारी गई थी । शेष क्षतियां भी ऊपर निर्दिष्ट किए गए प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य से मेल खाती हैं ।

20. आत्म-रक्षा का अभिवाक् और अनुकल्पत: गंभीर और अचानक प्रकोपन का अपीलार्थी द्वारा लिया गया अभिवाक् भी इस कहानी पर आधारित है कि मृतक ही अपनी कार में तेज गति से पुलिस थाने आया था जिससे उसने पहले पुलिस थाने के द्वार को टक्कर मारी और फिर अपीलार्थी को मारने के लिए उससे आयुध छीनने का प्रयास किया । किंतु इन तर्कों का कोई आधार नहीं है और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रतिरक्षा की इस विचित्र लाइन को बनाए रखने के लिए लेशमात्र भी साक्ष्य नहीं है ।

21. भारतीय साक्ष्य अधिनियम[1] की धारा 105 के अधीन यह

---

[1] **105. यह साबित करने का भार कि अभियुक्त का मामला अपवादों के अंतर्गत आता है** – जबकि कोई व्यक्ति किसी अपराध का अभियुक्त है, तब उन परिस्थितियों के अस्तित्व को साबित करने का भार, जो उस मामले को भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के साधारण अपवादों में से किसी के अंतर्गत या उसी संहिता के किसी अन्य भाग में, या उस अपराध की परिभाषा करने वाली किसी विधि में, अंतर्विष्ट किसी विशेष अपवाद या परंतुक के अंतर्गत कर देती है, उस व्यक्ति पर है और न्यायालय ऐसी परिस्थितियों के अभाव की उपधारणा करेगा ।

साबित करने का भार कि अभियुक्त का मामला साधारण अपवाद के अंतर्गत आता है, अभियुक्त पर ही है । **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **रमेश**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि :–

> "भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में 'साक्ष्य अधिनियम') की धारा 105 के अधीन सबूत का भार अभियुक्त पर होता है, जो आत्मरक्षा का अभिवाक् प्रस्तुत करता है, और सबूत के अभाव में न्यायालय के लिए आत्मरक्षा के अभिवाक् की सत्यता की उपधारणा करना संभव नहीं है । न्यायालय ऐसी परिस्थितियों का अभाव होने की उपधारणा करेगा ..... । जहां प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अभिवाक् किया जाता है, वहां प्रतिरक्षा का वृत्तांत अवश्य एक युक्तियुक्त और अधिसंभाव्य वृत्तांत होना चाहिए जिससे न्यायालय का समाधान हो जाए कि अभियुक्त द्वारा कारित की गई अपहानि या तो हमले को रोकने के लिए या अभियुक्त की ओर से आगे की युक्तियुक्त आशंका को रोकने के लिए आवश्यक थी ।'

यद्यपि सबूत का यह भार सभी युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत के भार जितना दुर्भर नहीं है जो अभियोजन पक्ष पर होता है, तो भी प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा जब यह अभिवाक् किया जाता है तो उसे कुछ हद तक युक्तियुक्त समाधान को सिद्ध करना होता है । (**सलीम जिया** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाला मामला देखें) ।

22. प्रस्तुत मामले में प्रतिरक्षा पक्ष किसी साक्ष्य द्वारा प्राइवेट प्रतिरक्षा के मामले को सिद्ध नहीं कर सका है । इस पहलू पर कोई साक्ष्य नहीं है और इसलिए विचारण न्यायालय तथा अपील न्यायालय द्वारा इस अभिवाक् को नामंजूर कर दिया गया था ।

23. वास्तव में, मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए और अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के आधार पर, अभियुक्त/अपीलार्थी द्वारा किया गया आत्मरक्षा का अभिवाक् कम से कम बचकाना है । प्रतिरक्षा

---

[1] (2005) 9 एस. सी. सी. 405.

[2] (1979) 2 एस. सी. सी. 648.

पक्ष का यह पक्षकथन कि मृतक अपीलार्थी को मारने के लिए 'निहत्था' पुलिस थाने आया था, अच्छी तरह से यह जानते हुए कि अपीलार्थी के पास आयुध था, मृतक को हमलावर के रूप में प्रस्तुत करने का एक विचित्र प्रयास है । इसका कोई अर्थ नहीं है । यहां सबसे महत्वपूर्ण बात अभि. सा. 2, अभि. सा. 1, अभि. सा. 11 और अभि. सा. 17 के प्रत्यक्षदर्शी बयान हैं, जिनसे साबित होता है कि अपीलार्थी शुरुआत में गोली चलाकर नहीं रुका, जो उसने अत्यंत निकट से चलाई थी (काले रंग के साथ बंदूक की गोली का प्रवेश घाव) । इसके बजाय, उसने मृतक पर तब भी गोलियां बरसाना जारी रखा जब वह बचकर भागने की कोशिश कर रहा था । उस समय पुलिस थाने में मौजूद चार पुलिस कर्मियों के प्रत्यक्षदर्शी बयान से किसी युक्तियुक्त संदेह से परे हत्या का मामला सिद्ध होता है ।

24. पुनः, प्रतिरक्षा पक्ष यह दर्शाकर अपने भार का निर्वहन नहीं कर पाया कि यह एक गंभीर और अचानक प्रकोपन का मामला है, हालांकि प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा मामले को भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 1 के अंतर्गत लाने का प्रयास किया गया है । तथापि, अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है जो यह दर्शाए कि मृतक ने पुलिस थाने के द्वार पर उस कार से टक्कर मारी थी, जो उस पुलिस थाने के अंदर खड़ी पाई गई थी और उसकी बॉडी पर कोई खरोंच नहीं थी । इस प्रकार यह साबित नहीं होता है कि कार ने द्वार को टक्कर मारी थी, जैसाकि प्रतिरक्षा पक्ष का पक्षकथन था । इसके अलावा, न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए सभी तथ्यों से यह दर्शित होता है कि यह अपीलार्थी ही था जिसके पास मृतक की हत्या करने का हेतु था क्योंकि मृतक का उसकी पत्नी के साथ अयुक्त संबंध था । अपीलार्थी और मृतक के परिवार के सदस्यों द्वारा किए गए सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद मृतक की हत्या करने के लिए अपीलार्थी का यही हेतु था ।

25. अपीलार्थी ने तर्क दिया कि उसके द्वारा किया गया कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 1 के अंतर्गत आता है, जो इस प्रकार है :–

"अपवाद 1 – आपराधिक मानव वध कब हत्या नहीं है – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि अपराधी उस समय जब कि वह गंभीर और अचानक प्रकोपन से आत्म-संयम की शक्ति से वंचित हो, उस व्यक्ति, की जिसने कि वह प्रकोपन दिया था, मृत्यु कारित करे या किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु भूल या दुर्घटनावश कारित करे ।

ऊपर का अपवाद निम्नलिखित परंतुकों के अध्यधीन है –

पहला – यह कि वह प्रकोपन किसी व्यक्ति का वध करने या अपहानि करने के लिए अपराधी द्वारा प्रतिहेतु के रूप में इप्सित न हो या स्वेच्छया प्रकोपित न हो ।

दूसरा – यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया गया हो जो विधि के पालन में या लोक सेवक द्वारा ऐसे लोक सेवक की शक्तियों के विधिपूर्ण प्रयोग में, गई हो ।

तीसरा – यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया गया हो, जो प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के विधिपूर्ण प्रयोग में की गई हो ।

स्पष्टीकरण – प्रकोपन इतना गंभीर और अचानक था या नहीं कि अपराध को हत्या की कोटि में जाने से बचा दे, यह तथ्य का प्रश्न है ।"

प्रतिरक्षा पक्ष के अनुसार, अपीलार्थी द्वारा मृतक की मृत्यु तब कारित की गई थी, जब मृतक द्वारा किए गए गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण अपीलार्थी अपनी आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित हो गया था, जिसके परिणामस्वरूप दुर्घटनावश उसकी मृत्यु हो गई थी ।

इस न्यायालय ने **के. एम. नानावती** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले से लेकर अब तक एक से अधिक मामलों में दोहराया है कि

[1] ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 605.

प्रकोपन ही हत्या के अपराध को हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध में परिवर्तित करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं । हत्या के मामले को हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के मामले में परिवर्तित करने के लिए प्रकोपन का ऐसा होना आवश्यक है जो किसी 'युक्तियुक्त व्यक्ति' की आत्म-नियंत्रण की शक्ति को छीन ले । यह भी देखा जाना चाहिए कि इस अभिकथित प्रकोपन और मानव वध कृत्य के बीच समय अंतराल कितना है; किसी प्रकार के आयुध का प्रयोग किया गया; प्रहार की संख्या आदि । ये सभी फिर से तथ्य संबंधी प्रश्न हैं । इन परिस्थितियों में युक्तियुक्तता क्या होनी चाहिए, इसके लिए कोई मानक या परीक्षण नहीं है क्योंकि यह फिर से न्यायालय द्वारा अवधारित किया जाने वाला तथ्य का प्रश्न होगा । **नानावटी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया गया है :–

> "84. क्या गंभीर और अचानक प्रकोपन के सिद्धांत को लागू करने के लिए एक युक्तियुक्त व्यक्ति का कोई मानक है ? युक्तियुक्त व्यक्ति का कोई अमूर्त मानक अधिकथित नहीं किया जा सकता है । एक युक्तियुक्त व्यक्ति कतिपय परिस्थितियों में क्या करेगा, यह रीति-रिवाजों, तौर-तरीकों, जीवन-शैली, पारंपरिक मूल्यों आदि पर निर्भर करता है ; संक्षेप में, उस समाज की सांस्कृतिक सामाजिक और भावनात्मक पृष्ठभूमि पर निर्भर करता है जिससे अभियुक्त संबंधित है । हमारे विशाल देश में निम्नतम से लेकर उच्चतम स्तर की सभ्यता के सामाजिक समूह हैं । सटीकता के साथ कोई मानक अधिकथित करना न तो संभव है और न ही वांछनीय है ; प्रत्येक मामले में सुसंगत परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए न्यायालय को निर्णय लेना होता है । इस मामले में यह अभिनिश्चय करना आवश्यक नहीं है कि अभियुक्त की स्थिति में रखा गया कोई युक्तियुक्त व्यक्ति क्षणिक या अस्थायी रूप से अपना संयम खो सकता था जब उसकी पत्नी ने

किसी अन्य के साथ अपने अवैध अंतरंगता के विषय में उससे कबूल किया, क्योंकि हमारा इस साक्ष्य के आधार पर समाधान हो गया है कि अभियुक्त ने अपना आत्म-संयम वापस पा लिया था और जानबूझकर आहूजा की हत्या की थी ।

85. वर्तमान जांच हेतु प्रासंगिक भारतीय विधि का इस प्रकार उल्लेख किया जा सकता है : (1) 'गंभीर और अचानक' प्रकोपन का परीक्षण यह है कि क्या अभियुक्त के समान समाज के वर्ग से संबंधित कोई विवेकशील व्यक्ति उस स्थिति में जिसमें अभियुक्त था, इस प्रकार प्रकोपित हो जाता कि वह अपना आत्म-नियंत्रण खो देता । (2) भारत में शब्द और भाव-भंगिमा भी कतिपय परिस्थितियों में अभियुक्त के गंभीर और अचानक प्रकोपन का कारण बन सकते हैं जिससे उसके कार्य को भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के प्रथम अपवाद के अंतर्गत लाया जा सके । (3) विपदग्रस्त के पूर्व-कृत्य द्वारा निर्मित मानसिक पृष्ठभूमि को यह अभिनिश्चय करने के लिए ध्यान में रखा जा सकता है कि क्या बाद के कृत्य अपराध करने के लिए गंभीर और अचानक प्रकोपन का कारण बने । (4) जहां तक प्रहार को स्पष्ट रूप से उस प्रकोपन से उद्भूत मनोवेग के प्रभाव से जोड़ा जाना चाहिए, न कि समय बीतने के कारण मनोवेग के शांत हो जाने के बाद, या अन्यथा पूर्व-चिंतन और परिकलन के लिए जगह और गुंजाइश देने के बाद ।"

वर्तमान मामले में हर संभव पहलू के आधार पर यह मामला हत्या के अलावा कुछ नहीं है । प्रयुक्त किए गए आयुध की प्रकृति ; मृतक पर चलाई गई गोलियों की संख्या ; शरीर का वह भाग जहां पर गोलियां चलाई गईं, ये सभी इस बात की ओर इशारा करते हैं कि अपीलार्थी मृतक को मारने के लिए दृढ़संकल्प था । आखिरकार, उसने अपना काम पूरा किया और यह सुनिश्चित किया कि मृतक मर चुका है । किसी भी प्रकार से यह कमतर परिणाम का मामला नहीं है और निश्चित रूप से हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध नहीं है ।

वर्तमान मामले के तथ्यों से दूर-दूर तक भी भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 1 या भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के किसी अन्य अपवाद के अंतर्गत आने वाला कोई मामला नहीं बनता है ।

26. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं हैं । तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है । अपीलार्थी को जमानत देने वाला तारीख 2 अप्रैल, 2012 के अंतरिम आदेश को बातिल किया जाता है और अपीलार्थी को आज से चार सप्ताह के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करने का निदेश दिया जाता है । इस निर्णय की एक एक प्रति विचारण न्यायालय को भेजी जाएगी जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि अपीलार्थी अभ्यर्पण कर दे और अपने दंडादेश का शेष भाग भुगते ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2024] 3 उम. नि. प. 135

धर्मेन्द्र कुमार उर्फ **धम्मा**

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

[2024 की दांडिक अपील सं. 2806]

8 जुलाई, 2024

न्यायमूर्ति सूर्य कांत और न्यायमूर्ति के. वी. विश्वनाथन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 – हत्या – दोषसिद्धि – पक्षकारों के बीच एक दीवार के निर्माण को लेकर वाद-विवाद होना – अभियुक्त-अपीलार्थी सहित अन्य अभियुक्तों द्वारा शिकायतकर्ता और दीवार का निर्माण कर रहे दो व्यक्तियों के साथ गाली-गलौच किया जाना और अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा एक व्यक्ति पर चाकू से प्रहार किया जाना और एक अन्य अभियुक्त द्वारा दूसरे व्यक्ति को भी क्षतियां कारित किया जाना – दोनों में से एक व्यक्ति की मृत्यु हो जाना और कुछ समय पश्चात् दूसरे व्यक्ति की भी मृत्यु हो जाना – अन्वेषण अधिकारी द्वारा क्षतिग्रस्त जीवित व्यक्ति का कथन अभिलिखित किया जाना – अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि – उच्चतम न्यायालय में अपील – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य संगत, अनधिक्षेपणीय और चिकित्सीय साक्ष्य तथा अपराध कारित करने में प्रयुक्त किए गए आयुध की बरामदगी से उनके परिसाक्ष्यों की सम्यक् रूप से संपुष्टि होने, घटनास्थल पर अभियुक्त-अपीलार्थी की मौजूदगी और अपराध कारित करने में भाग लेने की बात सिद्ध होने पर उसकी दोषसिद्धि उचित है और शिकायतकर्ता को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तुओं को पढ़कर नहीं सुनाए जाने या अभियोजन साक्षियों के साक्ष्यों में छुट-पुट विरोधाभास या विसंगति होने से अभियोजन के पक्षकथन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़ने के कारण निचले न्यायालयों द्वारा की गई उसकी दोषसिद्धि में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 161 और 162 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32 और 145] – मृतक व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु से पूर्व पुलिस अधिकारी के समक्ष अपनी मृत्यु के कारण के संबंध में कथन किया जाना – ऐसे कथन की मृत्युकालिक कथन के रूप में ग्राह्यता – जहां किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो मर गया है, अपने मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, किसी पुलिस अधिकारी को कोई कथन किया गया है और उसे धारा 161 के अधीन लेखबद्ध किया गया है, वहां ऐसे कथन का साक्ष्य में प्रयोग करने के विरुद्ध इस धारा में अभिव्यक्त वर्जन होते हुए भी ऐसी स्थिति में ऐसा कथन सुसंगत और ग्राह्य होगा क्योंकि ऐसे कथन को असाधारण रूप से विश्वसनीय माना गया है और धारा 161 के अधीन किया गया कथन एक मृत्युकालिक कथन का स्वरूप ग्रहण कर लेता है, तथापि, दोषसिद्धि करने के लिए ऐसे कथन का अवलंब लेते समय न्यायालय को अत्यंत सावधान और सचेत रहना चाहिए ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि शिकायतकर्ता के कथन के आधार पर पुलिस थाने में भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 147, 148 और 149 के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी जिसमें शिकायतकर्ता ने कहा कि जब वह देवी सिंह **उर्फ** टिल्लू और तुलाराम द्वारा किए जा रहे उसकी झुग्गी (झोंपड़ी) की दीवार के निर्माण को देख रही थी, उसी समय अभियुक्त अहमद और उसकी पत्नी वहां पहुंचे और निर्माण का विरोध किया । इसी बीच अपीलार्थी सहित अन्य व्यक्ति वहां पहुंचें और शिकायतकर्ता के साथ-साथ टिल्लू और तुलाराम को गालियां देने लगे । स्थिति तब और बिगड़ गई जब अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्त टिल्लू पर शारीरिक रूप से हमला करने के लिए दौड़े । बचाव में टिल्लू ने निकटवर्ती खाली पड़ी झुग्गी में शरण ली और अंदर से दरवाजा बंद कर लिया । तथापि, अभियुक्त बलपूर्वक दरवाजा तोड़कर झुग्गी में घुस गए और अंदर घुसते ही उन्होंने टिल्लू को घेर लिया और अपीलार्थी ने टिल्लू के उदर में चाकू से प्रहार किया, जबकि एक अन्य

अभियुक्त ने उसके उदर के थोड़ा नीचे अन्य वार किया । इसके पश्चात्, अन्य अभियुक्तों ने भी मुक्कों और डंडों से उस पर हमला किया । इसी बीच, तुलाराम ने बीच-बचाव करने की कोशिश की किंतु उसके साथ भी मारपीट की गई जिसके परिणामस्वरूप उसके सिर और हाथ पर क्षतियां पहुंचीं । घटना के पश्चात् दोनों क्षतिग्रस्तों को चिकित्सीय उपचार के लिए अस्पताल ले जाया गया । उनकी गंभीर हालत को देखते हुए दोनों क्षतिग्रस्त व्यक्तियों को आगे के उपचार के लिए दूसरे अस्पताल में रेफर कर दिया गया । दुर्भाग्यवश टिल्लू को पहुंचीं क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई और उसे मृत घोषित कर दिया गया, जबकि तुलाराम अभी जीवित था और उसे अस्पताल में भर्ती किया गया । अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल का नक्शा तैयार करके अन्वेषण आरंभ किया । चूंकि तुलाराम जीवित था, यद्यपि गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त था इसलिए अन्वेषण अधिकारी ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन उसका कथन अभिलिखित किया, जिसमें तुलाराम ने विषयांतर्गत घटना के दौरान की घटनाओं का ब्यौरा दिया । तुलाराम की भी अस्पताल में शल्य-चिकित्सा के लगभग पांच दिन पश्चात् मृत्यु हो गई । अन्वेषण के दौरान, अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रकटीकरण कथन के अनुसरण में एक चाकू बरामद किया । तत्पश्चात् चाकू को न्यायालयिक विज्ञान परीक्षण के लिए प्रस्तुत किया गया, जहां चाकू पर मानवरक्त पाया गया किंतु रक्त समूह वर्गीकरण अनिश्चायक था । अन्वेषण के पश्चात् अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 147, 148, 302/149, 307/149 के अधीन आरोपित किया गया । विचारण न्यायालय ने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के वृत्तांत को विश्वसनीय पाकर अभियुक्त-अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 147, 148 और 149 के अधीन अपराधों का दोषी अभिनिर्धारित किया और उसे आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । अपील में उच्च न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन उसकी दोषसिद्धि को कायम रखा गया यद्यपि उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 147 और 148 के अधीन दोषमुक्त कर दिया गया । अपनी

दोषसिद्धि से असंतुष्ट होकर अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह बात पुरजोर रूप से उठाई गई कि घटनास्थल के संबंध में साक्षियों के परिसाक्ष्य में एक अंतर्निहित मतभेद है । उषा बाई, अभि. सा. 10 और लल्लू विश्वकर्मा, अभि. सा. 11 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृतक टिल्लू भैरव शास्त्री की झुग्गी में घुसा था, जहां उसे बाद में घेर लिया गया और अपीलार्थी द्वारा चाकू से उसके उदर पर हमला किया गया, जबकि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) ने प्रतिपरीक्षा के दौरान सत्यतापूर्वक स्वीकार किया था कि उसे घटनास्थल के पास भैरों बाबा नाम के किसी व्यक्ति के रहने की जानकारी नहीं थी । अन्वेषण अधिकारी ने आगे स्पष्ट किया कि घटनास्थल के आस-पास भैरों बाबा से जुड़ा कोई मकान या मंदिर नहीं था, यही कारण है कि उसने स्थल नक्शे (प्रदर्श पी-2) में इसका नाम नहीं लिखा था । इस न्यायालय ने इस संबंध में साक्षियों के परिसाक्ष्य की गहराई से संवीक्षा की है । इस न्यायालय को अभियोजन पक्ष के सभी बयानों में भैरव शास्त्री का लगातार उल्लेख मिला है, साथ ही भैरव शास्त्री का भैरों बाबा के रूप में भी उल्लेख किया गया है । लल्लू विश्वकर्मा, अभि. सा. 11 ने अपने परिसाक्ष्य में स्पष्ट रूप से यह कहा था कि मृतक टिल्लू को घटना के बाद भैरों बाबा के कमरे के अंदर पाया गया था । इसके अतिरिक्त, भैरव शास्त्री की झुग्गी की मौजूदगी का उल्लेख मृतक तुलाराम के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन किए गए कथन में है, जिसे अन्वेषण अधिकारी गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) द्वारा अभिलिखित किया गया था, जिसमें उसने असंदिग्ध रूप से कहा है कि टिल्लू ने भैरव शास्त्री की झोंपड़ी के अंदर शरण ली थी और स्वयं को उसमें बंद कर लिया था । भैरव शास्त्री की झुग्गी का उल्लेख शिकायतकर्ता, अभि. सा. 10 द्वारा दर्ज की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) तथा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन (प्रदर्श डी-1) में भी स्पष्ट है । यह सत्य है कि गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) के कथन के अनुसार उसे

घटनास्थल के पास किसी भैरों बाबा के होने की जानकारी नहीं थी, जबकि अन्य साक्षियों द्वारा जिस स्थान को 'भैरव शास्त्री की झुग्गी' बताया गया है, वह स्थान उसके द्वारा तैयार किए गए स्थल नक्शे (प्रदर्श पी-2) में दर्शाया गया है । स्थल नक्शा (प्रदर्श पी-2) की परीक्षा करने मात्र से एक चिह्नित संरचना का पता चलता है जिसे 'बी' से लेबल किया गया है जिसे 'ईंटों वाले कमरे' के रूप में पहचाना गया है जहां मृतक ने शरण ली थी । यद्यपि उक्त संरचना को भैरव शास्त्री की झुग्गी या किसी अन्य नाम से नहीं दर्शाया गया है, किंतु इससे प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के इस वृत्तांत की पुष्टि होती है कि टिल्लू पर पड़ोस की झुग्गी में हमला किया गया था । इसके अतिरिक्त, प्रतिरक्षा पक्ष ने अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) की प्रतिपरीक्षा के समय स्थल नक्शे में किए गए चित्रण पर कोई विवाद नहीं किया था । अन्वेषण अधिकारी की ओर से स्थल नक्शे पर किसी स्थान को चिह्नित करने में लोप मात्र से अभियोजन का पक्षकथन प्रभावित नहीं होता है । यह सुस्थिर है कि स्थल नक्शा केवल घटना के स्थान को दर्शाता है और इसमें कोई और ब्यौरा दिया जाना विवक्षित नहीं है । यह ऐसा मामला है जिसमें प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने एक-दूसरे की संपुष्टि की है ; उनके अभिसाक्ष्यों को स्वयं मृतक तुलाराम द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में पुष्ट किया है, और घटना के स्थान को स्थल नक्शा (प्रदर्श पी-2) पर 'ईंटों के कमरे' के रूप में दर्शाया गया है । इस प्रकार, यह सिद्ध हो जाता है कि वहां एक अन्य झुग्गी थी जहां मृतक ने शरण ली थी और अंततः उस पर हमला किया गया था । इन परिस्थितियों को देखते हुए, तथाकथित विरोधाभास अपराध के मुख्य भाग पर आक्षेप करने में पूरी तरह विफल हो जाता है । (पैरा 30-34)

इसके पश्चात् यह दलील दी गई कि शिकायतकर्ता उषा बाई (अभि. सा. 10) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) उसे पढ़कर नहीं सुनाई गई थी और उसने पुलिस के अनुदेशानुसार अपना अंगूठा लगाया था । प्रतिपरीक्षा के दौरान उसके अभिसाक्ष्य का अवलंब लिया गया, जिसमें उसने दावा किया

है कि उसने एक कोरे कागज पर अंगूठा लगाया था, जिसके उपरांत प्रदर्श पी-7 तैयार किया गया था । विषयांतर्गत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के सभी संघटकों का पूरी तरह से समाधान होता है । घटना तारीख 20 जून, 2004 को 9.30 बजे अपराह्न में घटित हुई बताई गई है और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट उसी दिन 10.45 बजे अपराह्न में अभिलिखित की गई थी । घटना में अभिकथित रूप से सम्मिलित सभी आठ अभियुक्तों के नाम सम्यक् रूप से अभिलिखित किए गए हैं । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट एक स्वाभाविक, सुसंगत हस्तलेखन प्रवाह में लिखी गई है, जिसमें कोई रिक्त स्थान नहीं छोड़ा गया है, शब्दों को उपरि लेखन करके या छोटा करके नहीं लिखा गया है, या कोई शब्द या वाक्य जोड़ा नहीं गया है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतिम पंक्ति में स्पष्ट रूप से अभिलिखित है कि इत्तिलाकर्ता को इत्तिला को पढ़कर सुनाया गया था और स्पष्ट किया गया था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट विहित रूप विधान में है और उषा बाई (अभि. सा. 10) ने उसके पश्चात् अपने अंगूठे की छाप लगाई है । यह सत्य है कि उषा बाई (अभि. सा. 10) ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह दावा किया था कि पुलिस ने न तो उसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) पढ़कर सुनाई थी और न ही उसके उन कथनों की अंतर्वस्तुओं का उल्लेख किया था, जो पुलिस द्वारा पांच-छह अवसरों पर अभिलिखित किए गए थे । उसने आगे यह कथन किया कि यह अवधारित नहीं किया जा सका था कि प्रदर्श पी-7 में क्या वृत्तांत सम्मिलित किया गया था चूंकि वह साक्षर नहीं है । यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने इस साक्षी को प्रभावित करने का स्पष्ट प्रयास किया था । तथापि, उषा बाई के अपीलार्थी को विधि के शिकंजे से बचाने के अहानिकर आशय के बावजूद वह इस तथ्य से इनकार नहीं कर सकी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट उसकी शिकायत के आधार पर दर्ज की गई थी या उसके द्वारा सूचित की गई घटना में टिल्लू और तुलाराम को घातक क्षतियां पहुंची थीं । यह मानते हुए कि पुलिस इत्तिलाकर्ता को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तुओं के बारे में बताने या सूचित करने में असफल रही थी, विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या ऐसे लोप से अपीलार्थी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है ? इस न्यायालय की सुविचारित राय में,

इसका उत्तर नकारात्मक ही होना चाहिए । यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें अपीलार्थी को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट या आरोप पत्र की प्रति उपलब्ध नहीं कराई गई थी, जिससे इत्तिलाकर्ता की प्रभावी रूप से प्रतिपरीक्षा करने में क्षमता बाधित हो सकी थी । अभिलेख से प्रकट होता है कि श्री ए. के. श्रीवास्तव, अधिवक्ता ने अपीलार्थी की ओर से उषा बाई (अभि. सा. 10) की प्रतिपरीक्षा की थी । उषा बाई ने अभियुक्त के रूप में अपीलार्थी का नाम न बताकर उसकी सहायता करने का प्रयास किया था, किंतु वह इस तथ्य को नहीं छिपा सकी कि अहमद, असगर, रवि और कनिजा बाई के अतिरिक्त वह अन्य अभियुक्तों को भी वह उनके नाम से जानती थी । अपीलार्थी स्वीकृत रूप से उन अभियुक्तों में से एक है । उसने आगे यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि सभी ने (उन सभी ने) टिल्लू पर लाठियों, राड़ों और पाइपों से हमला किया था । उसने यह भी कथन किया कि जब उसने बीच-बचाव करने की कोशिश की, तो अहमद ने उसके साथ गाली-गलौच की और उसे जान से मारने की धमकी दी । फिर वह कुछ दूरी पर जाकर खड़ी हो गई और उसने देखा कि उन आरोपीगण ने अर्थात् सभी अभियुक्तों ने टिल्लू और तुलाराम पर घातक हमला किया । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है उसने आगे यह साक्ष्य दिया कि वह लालाराम के साथ फिर पुलिस थाना कमला नगर गई, जिसके पश्चात् पुलिस पदधारियों ने लालाराम और तुलाराम को तुरंत हमीदिया अस्पताल में उपचार के लिए भेजा । तथापि, टिल्लू अस्पताल नहीं पहुंच सका क्योंकि रास्ते में ही उसकी मृत्यु हो गई थी । इसके अतिरिक्त, उषा बाई (अभि. सा. 10) ने अपने अभिसाक्ष्य के पैरा 4 में स्पष्ट रूप से यह कहा है कि उसने प्रदर्श पी-7 के माध्यम से पुलिस थाना, कमला नगर को मामले की सूचना दी थी, जिस पर उसका अंगूठा लगा हुआ है । उषा बाई (अभि. सा. 10) की प्रतिपरीक्षा करते समय अपीलार्थी द्वारा उसके अभिसाक्ष्य के इस भाग पर प्रश्न नहीं उठाया गया है । हमने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किए गए स्वयं अपीलार्थी के कथन को भी देखा है । एक अस्पष्ट इनकार और मिथ्या फंसाए जाने के दावों के अलावा ऐसा कोई सुझाव नहीं है कि वह घटनास्थल पर मौजूद नहीं था ; यह कि उसने घटना में भाग नहीं लिया

था, या उसे किसी कारण से मिथ्या रूप से फंसाया गया था । इस प्रकार, अपीलार्थी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तुओं को इत्तिलाकर्ता को अभिकथित रूप से पढ़कर न सुनाए जाने के परिणामस्वरूप पड़ने वाले किसी प्रतिकूल प्रभाव को प्रदर्शित करने में विफल रहा है । इस संबंध में दी गई दलील पूरी तरह से भ्रामक है । यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि जब प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य संगत, अनधिक्षेपणीय हैं और चिकित्सीय साक्ष्य या प्रयुक्त आयुध जैसी अपराध में आलिप्त करने वाली सामग्री की बरामदगी द्वारा विधिक रूप से संपुष्टि होती है, तो केवल प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में कोई कमी, यदि कोई हो, दोषसिद्धि को उलटने या अभियोजन के पक्षकथन को कमजोर करने का एक विधिमान्य आधार नहीं बनती है । (पैरा 35, 40-44)

अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि यह एक मिथ्या फंसाए जाने का मामला है क्योंकि घटनास्थल पर अपीलार्थी की मौजूदगी को संदेह के परे सिद्ध नहीं किया गया है । इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि जो कोई भी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के वृत्तांत के विपरीत और उसके अल्पीकरण में अन्यत्र उपस्थित होने की दलील देता है, अपराध के समय घटनास्थल पर मौजूद न होने की बात को साबित करने का उस पर भारी दायित्व होता है । अपीलार्थी न केवल इस प्रतिरक्षा को उठाने में विफल रहा था, बल्कि इसके समर्थन में कोई साक्ष्य भी प्रस्तुत नहीं किया था । इन सभी कारको के संचयी प्रभाव को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय के पास इस बात पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है कि अपीलार्थी न केवल अपराध स्थल पर मौजूद था, बल्कि उसने घटना में सक्रिय रूप से भाग भी लिया था और टिल्लू (मृतक) पर एक घातक प्रहार भी किया था । यह न्यायालय इस तथ्य को अनदेखा नहीं कर सकता कि ऐसी स्थिति में जहां तीखी नोंक-झोंक में दो लोगों की हत्या की गई हो, यह बात अत्यधिक असंभाव्य है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी चाहेंगे कि वास्तविक अपराधी न्याय से बच जाएं । किसी पूर्व हेतु के अभाव में, यह कहना ठीक नहीं है कि वे इस मामले में अपीलार्थी पर मिथ्या अभियोग लगाएंगे । यह ऐसा परिदृश्य नहीं है जहां शिकायतकर्ता या अभि. सा. 11 ने अपीलार्थी के विरुद्ध द्वेष रखा

हो और घटना के पश्चात् उसे फंसाने के लिए कोई कहानी गढ़ी हो । बल्कि, अपीलार्थी का नाम घटना के दो घंटे से भी कम समय के भीतर प्रदर्श पी-7 के माध्यम से सम्यक् रूप से अभिलिखित किए गए सर्वप्रथम वृत्तांत में सामने आया था । प्रासंगिक रूप से, प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के दौरान अपीलार्थी को मिथ्या रूप से फंसाए जाने का कोई हेतु नहीं सुझाया गया था । (पैरा 45, 50, 51)

अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि चूंकि घटना झुग्गी के अंदर और रात्रि में घटी थी इसलिए यह अत्यंत अनधिसंभाव्य है कि साक्षियों ने यह देखा हो कि घटना किस रीति में घटी थी । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 11, लल्लू विश्वकर्मा के कथन का अवलंब लिया गया था, जिसने कहा था कि वह नहीं देख सका था कि किसने किस पर हमला किया था और यह नहीं बता सका था कि किसके पास से कौन सा आयुध अभिगृहीत किया गया था । इस प्रकार, यह प्रकथन किया गया कि यह निष्कर्ष निकालने के लिए तनिक भी साक्ष्य नहीं है कि चाकू की क्षति अपीलार्थी द्वारा कारित की गई थी । इस न्यायालय ने इस दलील का गहराई से विश्लेषण किया है । अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रकटीकरण कथन के आधार पर चाकू अर्थात् आक्रामक आयुध का पता चला था और बाद में उसे अभिगृहीत किया गया था । अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य से पता चलता है कि अपीलार्थी ने पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए स्वेच्छा से प्रकटीकरण कथन किया था, जिसके अनुसरण में आक्रामक आयुध (चाकू) बरामद किया गया था । क्या उक्त कथन स्वेच्छा से किया गया था या प्रपीड़न द्वारा प्राप्त किया गया था, यह आवश्यक रूप से एक तथ्य का प्रश्न है । इस संबंध में, लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) का परिसाक्ष्य महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि उसके द्वारा प्रकटन कथन करते हुए सम्यक् रूप से देखा गया था । इस न्यायालय की सुविचारित राय में, अपीलार्थी का प्रकटन कथन, जिस सीमा तक इसके परिणामस्वरूप चाकू की बरामदगी हुई थी, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के मूल सिद्धांतों को पूरा करता है और इसे साक्ष्य में सही ढंग से स्वीकार किया गया है । यह न्यायालय इस प्रक्रम पर यह कहना चाहेगा कि

अभियोजन पक्ष के वृत्तांत को न केवल विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था अपितु उच्च न्यायालय ने भी अपील में इसकी अभिपुष्टि की थी । यह पता लगाने के लिए कि अपीलार्थी किसी युक्तियुक्त संदेह के परे दोषी है या नहीं, इस न्यायालय ने अपनी सीमित अधिकारिता के क्षेत्र का विस्तार किया है और प्रथम अपीलीय न्यायालय के समान भूमिका ग्रहण की है । यह न्यायालय इस तथ्य से अवगत है कि अधिकारिता संबंधी आवर्धन एक अपवाद होना चाहिए और अत्यधिक कठिनाई वाले मामले में विपदग्रस्त (विपदग्रस्तों), अभियुक्तों के साथ-साथ संवेदनशील साक्षियों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए अत्यधिक सावधानी के साथ इसका अवलंब लिया जाना चाहिए । ऐसे मापदंडों को ध्यान में रखते हुए, इस बात को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि दोनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षी, अभि. सा. 10 और अभि. सा. 11 अनपढ़ मजदूर हैं और उनके परिसाक्ष्य घटना के बाद काफी समय बीत जाने के पश्चात् अभिलिखित किए गए थे । दोनों साक्षियों ने जोरदार रूप से इस बात से इनकार किया कि उन्हें पुलिस या किसी और व्यक्ति ने सिखाया-पढ़ाया नहीं था । किसी ग्रामीण साक्षी का परिसाक्ष्य, भले ही उसमें कुछ छुट-पुट असंगतियां या विसंगतियां हों, उसकी दृढ़ता को कम नहीं कर सकती । ऐसे साक्षियों के साक्ष्य का व्यापक रूप से और सावधानीपूर्वक मूल्यांकन किया जाना चाहिए, विशेष रूप से जब प्रतिपरीक्षा से यह पता चलता हो कि अभियुक्त व्यक्ति (व्यक्तियों) ने कुछ बाहरी दबाव डालकर उन्हें अपने पक्ष में करने का प्रयास किया था । इस प्रकार, हमारा समाधान हो गया है कि अभि. सा. 10 और अभि. सा. 11 के कथनों में ऐसी कोई विसंगति नहीं है कि उन्हें त्यक्त कर दिया जाए । यहां तक कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य में भी कोई अंतरस्थ हेतु या साक्ष्य गढ़ने या अपीलार्थी और उसके सह-अभियुक्तों को मिथ्या रूप से फंसाने का प्रयास नहीं है । किसी साक्षी से, जब तक उसे सिखाया-पढ़ाया न गया हो, यह अपेक्षा करना अत्यधिक अनुचित और अयुक्तियुक्त होगा कि वह घटना के हर छोटे-छोटे विवरण को याद रखे और उसे पूरे विवरण के साथ प्रस्तुत करे । इस प्रकार, अपीलार्थी की दलील किसी गुणागुण से रहित है । (पैरा 52-58)

अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई कि निचले न्यायालयों ने अन्वेषण अधिकारी, गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) को किए गए तुलाराम के कथन (प्रदर्श पी-40) का अवलंब लेकर गलती की है और उक्त कथन को एक 'मृत्युकालिक कथन' नहीं समझा जा सकता क्योंकि अन्वेषण अधिकारी ने तुलाराम की मानसिक स्थिति के बारे में डाक्टर से कोई प्रमाणपत्र नहीं लिया था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 पुलिस को किसी भी ऐसे व्यक्ति की मौखिक रूप से परीक्षा करने के लिए सशक्त करती है जो अन्वेषणाधीन मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित है । पुलिस ऐसे कथन को लिखित रूप में भी लेखबद्ध कर सकती है । तो भी, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162(1) में यह आदिष्ट है कि किसी व्यक्ति द्वारा पुलिस अधिकारी को किया गया कोई कथन, यदि लेखबद्ध किया जाता है, तो उस कथन को करने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं किया जाएगा, न ही ऐसे कथन का भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 द्वारा उपबंधित रीति में साक्षी का खंडन करने के सिवाय साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जाएगा । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 की उपधारा (2) में उपधारा (1) का एक अपवाद दिया गया है क्योंकि इसमें स्पष्ट रूप से यह उपबंध किया गया है कि धारा 162 की किसी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के खंड (1) की परिधि के अंतर्गत आने वाले किसी कथन को लागू होती है । दूसरे शब्दों में, किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो मर गया है, अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई किसी पुलिस अधिकारी को किया गया कथन और जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किया गया है, साक्ष्य में ऐसे कथन का उपयोग करने के विरुद्ध इसमें अंतर्विष्ट अभिव्यक्त वर्जन होते हुए भी सुसंगत और ग्राह्य होगा । ऐसी स्थिति में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किया गया कथन एक मृत्युकालिक कथन का स्वरूप ग्रहण कर लेता है । चूंकि ऐसे मृत्युकालिक कथन को असाधारण विश्वसनीयता दी गई है इसलिए न्यायालय को उसका अवलंब लेने में अत्यंत सावधान और सतर्क रहना चाहिए । इस मामले में यह मूल्यांकन करना महत्वपूर्ण है कि अन्वेषण

अधिकारी ने घटना के एक दिन बाद ही तत्काल कथन को अभिलिखित किया था । उसने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि चिकित्सा रिपोर्ट में यह उल्लेख नहीं किया गया था कि कथन करने वाले तुलाराम की हालत गंभीर थी । इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि तुलाराम अपना कथन उचित रूप से करने में समर्थ था । इसके अलावा, कथन के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि कथन करने वाला तुलाराम पूरी तरह से स्वस्थ था क्योंकि उसे न केवल घटना के बारे में सही ढंग से बताया था बल्कि अपीलार्थी की भूमिका को भी स्पष्ट रूप से बताया था । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 13 और अभि. सा. 15 द्वारा की गई मरणोत्तर परीक्षा के दौरान पाई गई क्षतियों से मृतक तुलाराम के कथन की सम्यक् रूप से संपुष्टि हुई है । उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि केवल चिकित्सा प्रमाणपत्र अभिप्राप्त न करने से यह न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उचित रूप से अभिलिखित किए गए कथन को मृत्युकालिक कथन मानने से नहीं रुकेगा । ऊपर बताए गए कारणों से, न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि अभियोजन के पक्षकथन में ऐसा कोई विरोधाभास या विसंगति नहीं है जो हमें विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण से एक भिन्न दृष्टिकोण अपनाने के लिए बाध्य करे । (पैरा 62, 65, 68 और 69)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 11 एस. सी. सी. 500 : **प्रदीप बिसोई** बनाम **उड़ीसा राज्य** ;	65
[2015]	(2015) 11 एस. सी. सी. 43 : **राजा** उर्फ **राजेन्द्र** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	61
[2013]	(2013) 3 एस. सी. सी. 594 : **राज्य** बनाम **एन. एस. ज्ञानेश्वरन** ;	43
[2013]	(2013) 12 एस. सी. सी. 137 : **श्री भगवान** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	65

[2010] (2010) 12 एस. सी. सी. 224 :
मुकेशभाई गोपालभाई बरोत बनाम **गुजरात राज्य** ; 65

[2010] (2010) 15 एस. सी. सी. 91 :
शिवन्ना बनाम **हंसूर टाउन पुलिस का राज्य** ; 33

[2010] (2010) 14 एस. सी. सी. 129
जॉन पांडियन बनाम **राज्य** ; 61

[2007] (2007) 10 एस. सी. सी. 175 :
हीरा बनाम **राजस्थान राज्य** ; 47

[2005] (2005) 11 एस. सी. सी. 600 :
राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)
बनाम **नवजोत संधू** ; 47

[2002] (2002) 6 एस. सी. सी. 710 :
लक्ष्मण बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 67

[1999] (1999) 9 एस. सी. सी. 562 :
कोली चुन्नीलाल सावजी बनाम **गुजरात राज्य** ; 66

[1998] (1998) 9 एस. सी. सी. 238 :
नथूनी यादव बनाम **बिहार राज्य** ; 48

[1946] 1946 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 47 :
पुलुपुरी कोट्टया बनाम **सम्राट** । 55

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 2806.

2006 की दांडिक अपील सं. 193 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, प्रधान न्यायपीठ, जबलपुर द्वारा तारीख 19 दिसंबर, 2017 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री दुष्यंत दवे, ज्येष्ठ अधिवक्ता, कुलदीप सिंह, (श्रीमती) आयुषी गौड़ और गौरव यादव

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री मृणाल गोपाल ऐल्कर, सर्वश्री सौरभ सिंह और आशीष रावत

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सूर्य कांत ने दिया ।

न्या. कांत – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय जबलपुर (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'उच्च न्यायालय' कहा गया है) द्वारा तारीख 19 दिसंबर, 2017 को पारित किए गए उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा अपीलार्थी द्वारा विद्वान् सेशन न्यायाधीश, भोपाल (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्वारा तारीख 10 नवंबर, 2005 के निर्णय और आदेश द्वारा अधिनिर्णीत भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'भारतीय दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश के विरुद्ध फाइल की गई दांडिक अपील को खारिज कर दिया गया था ।

तथ्य :

3. इस प्रक्रम पर वर्तमान कार्यवाहियों के संदर्भ को उपवर्णित करने के लिए तथ्यात्मक पृष्ठभूमि की गहराई में जाना आवश्यक है ।

4. उषा बाई (अभि. सा. 10) के कथन के आधार पर पुलिस थाना, कमला नगर, भोपाल में तारीख 20 जून, 2004 को भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 147, 148 और 149 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 268 रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उक्त शिकायतकर्ता ने कहा कि तारीख 20 जून, 2004 की रात्रि को लगभग 9.30 बजे वह देवी सिंह **उर्फ** टिल्लू और तुलाराम द्वारा किए जा रहे उसकी झुग्गी (झोंपड़ी) की दीवार के निर्माण को देख रही थी । उसी समय, अभियुक्त व्यक्ति अहमद और उसकी पत्नी, कनिजा बाई पहुंचे और निर्माण का विरोध किया । टिल्लू ने दावा किया कि यह उनकी झुग्गी है और उन्हें दीवार बनाने का अधिकार है । इसी बीच, विजय, धर्मेन्द्र **उर्फ** धम्मा (अपीलार्थी), काटचू **उर्फ** रामस्वरूप, बल्लू, रवि और असगर सहित अन्य अभियुक्त व्यक्ति

पहुंचे और शिकायतकर्ता, टिल्लू और तुलाराम को मौखिक रूप से गालियां देने लगे । स्थिति तब और बिगड़ गई जब अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्त टिल्लू पर शारीरिक रूप से हमला करने के लिए दौड़े । प्रतिरक्षा में टिल्लू ने भैरव शास्त्री नामक व्यक्ति की खाली पड़ी झुग्गी में शरण ली और अंदर से दरवाजा बंद कर लिया । तथापि, अभियुक्त बलपूर्वक दरवाजा तोड़कर भैरव शास्त्री की झुग्गी में घुस गए । अंदर घुसते ही उन्होंने टिल्लू को घेर लिया और अपीलार्थी ने टिल्लू के उदर में चाकू से प्रहार किया, जबकि असगर ने उसके उदर के थोड़ा नीचे अन्य वार किया । इसके पश्चात्, अन्य अभियुक्तों ने भी मुक्कों और डंडों से टिल्लू पर हमला किया । इसी बीच, तुलाराम ने बीच-बचाव करने की कोशिश की किंतु उसके साथ भी काटचू और अहमद ने मारपीट की जिसके परिणामस्वरूप उसके सिर और हाथ पर क्षतियां पहुंचीं । शोरगुल सुनकर, मोहल्ले के निवासी घटनास्थल पर पहुंचे, जिससे अभियुक्त भाग गए । शिकायतकर्ता ने आगे कहा कि उसने बीच-बचाव करने की कोशिश की किंतु उसे धमकी दी गई कि यदि वह इस क्षेत्र को नहीं छोड़ेगी तो उसे गंभीर परिणाम भुगतने होंगे ।

5. घटना के पश्चात् टिल्लू और तुलाराम, दोनों क्षतिग्रस्तों को चिकित्सीय सहायता के लिए काटजू अस्पताल ले जाया गया । आपाताकालीन चिकित्सा अधिकारी डा. आर. एस. विजयवर्गीय (अभि. सा. 4) ने टिल्लू की नाड़ी गायब पाई तथा उसकी छाती में दो और उदर में चाकू के तीन घाव पाए जिनसे उसकी गंभीर हालत उपदर्शित हो रही थी । तुलाराम का परीक्षण करने पर डा. विजयवर्गीय ने उसके सिर के पिछले हिस्से और कनपटी के क्षेत्र में गंभीर क्षतियां देखीं । तत्पश्चात् दोनों क्षतिग्रस्त व्यक्तियों को आगे के उपचार के लिए हमीदिया अस्पताल रेफर कर दिया गया ।

6. दुर्भाग्यवश टिल्लू को पहुंचीं क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई और उसे मृत घोषित कर दिया गया, जबकि तुलाराम अभी जीवित था और उसे हमीदिया अस्पताल में भर्ती किया गया ।

7. डा. सी. एस. जैन (अभि. सा. 13) ने टिल्लू की मरणोत्तर परीक्षा

की और यह अवधारित किया कि मृत्यु का कारण पूरे शरीर पर कई बार चाकू घोंपने के घावों और सिर पर पहुंचीं क्षतियों के परिणामस्वरूप पहुंचा सदमा और रक्तस्राव था । घाव किसी धारदार, भेदक आयुध से कारित किए गए थे जिससे घोंपने की क्षतियां पहुंची थीं, जबकि सिर पर क्षतियां किसी कठोर और कुंद आयुध से कारित की गई थीं । सिर और उदर पर पहुंचीं संयुक्त क्षतियां मृत्यु कारित करनेके लिए पर्याप्त समझी गई ।

8. अन्वेषण अधिकारी, गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) ने घटनास्थल का नक्शा (प्रदर्श पी-2) तैयार करके अन्वेषण आरंभ किया और घटनास्थल से रक्तरंजित फर्श के टुकड़े (प्रदर्श पी-31) भी अभिगृहीत किए ।

9. चूंकि तुलाराम जीवित था, यद्यपि गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त था इसलिए अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसमें इसमें इसके पश्चात् 'दंड प्रक्रिया संहिता' कहा गया है) की धारा 161 के अधीन उसका कथन (प्रदर्श पी-40) अभिलिखित किया, जिसमें तुलाराम ने विषयांतर्गत घटना के दौरान की घटनाओं का ब्यौरा दिया । तुलाराम ने उल्लेख किया कि वह और टिल्लू नवग्रह मंदिर में उषा बाई की झुग्गी की दीवार का निर्माण कर रहे थे । लगभग 9.15 बजे अपराह्न में अहमद और उसकी पत्नी कनिजा बाई वहां पहुंचे और निर्माण का विरोध किया । टिल्लू के इस दावे के बावजूद कि यह उनकी दीवार है, अहमद उन्हें रोकने के लिए अड़ा रहा । कुछ ही देर बाद विजय, धर्मेन्द्र धम्मा (अपीलार्थी) काटचू **उर्फ** रामस्वरूप, बल्लू, रवि और असगर वहां पहुंचे और गाली-गलौच शुरू कर दी । इसके बाद अभियुक्तों ने टिल्लू पर हमला किया जिसने भैरव शास्त्री की निकटवर्ती झुग्गी में शरण ली और स्वयं को अंदर बंद कर लिया । हमलावर बलपूर्वक अंदर घुसे और टिल्लू को घेर लिया तथा धम्मा (अपीलार्थी) ने टिल्लू के उदर पर चाकू से प्रहार किया, जबकि असगर ने भी उसकी नाभि के निकट चाकू घोंपा । इसके अतिरिक्त, अन्य अभियुक्तों ने लाठी, डंडों और मुक्कों का प्रयोग करके शारीरिक हमला किया । जब तुलाराम ने बीच-बचाव करने का प्रयास किया, तो काटचू और अहमद ने उसे लाठियों से मारा जिससे उसके सिर, हाथ और शरीर पर क्षतियां पहुंचीं । तुलाराम ने

बताया कि लल्लू (अभि. सा. 11) और रमेश नामक व्यक्ति घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी थे ।

10. तुलाराम की भी हमीदिया अस्पताल में शल्यचिकित्सा के लगभग पांच दिन पश्चात् मृत्यु हो गई । डा. नीलम श्रीवास्तव (अभि. सा. 15) ने उसकी मरणोत्तर परीक्षा की और निष्कर्ष निकाला कि मृत्यु का कारण सिर पर पहुंची क्षति से हृदय श्वसन अवरुद्ध हो जाना था । इसके अलावा, क्षति की गंभीरता ऐसी थी कि सामान्य परिस्थितियों में भी इससे मृत्यु हो सकती थी । यह क्षति, जिसे मानव वध क्षति माना गया था, किसी कठोर, कुंद और भारी वस्तु से कारित की गई थी ।

11. अन्वेषण के दौरान, अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) ने अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रकटीकरण कथन (प्रदर्श पी-14) के अनुसरण में एक चाकू बरामद किया जिसे अपीलार्थी ने पुलिस लाइन नेहरू नगर के बैरक सं. 2 में छिपाया था । लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) इस बरामदगी का साक्षी था । तत्पश्चात् चाकू को न्यायालयिक विज्ञान परीक्षण (प्रदर्श पी-39) के लिए प्रस्तुत किया गया, जहां चाकू पर मानव रक्त पाया गया किंतु रक्त समूह वर्गीकरण अनिश्चायक था ।

12. अन्वेषण के पश्चात् अपीलार्थी सहित सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 147, 148, 302/149, 307/149 के अधीन आरोपित किया गया ।

13. विचारण में अभियोजन पक्ष ने दोषिता को सिद्ध करने के लिए उषा बाई, अभि. सा. 10 (शिकायतकर्ता) और लल्लू विश्वकर्मा, अभि. सा. 11, दोनों प्रत्यर्थी साक्षियों सहित कुल मिलाकर 15 साक्षियों की परीक्षा की । अभियोजन का पक्षकथन मुख्य रूप से इन दो प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के वृत्तांत पर आधारित था, जिन्होंने दावा किया कि विपदग्रस्तों पर घातक प्रहार उनके सामने किए गए थे ।

14. विचारण न्यायालय ने दोनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों (अभि. सा. 10 और अभि. सा. 11) के वृत्तांत को विश्वसनीय पाकर, जिसकी सम्यक् रूप से संपुष्टि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य, चिकित्सीय साक्ष्य और आयुध की बरामदगी से हुई थी, अपीलार्थी को

भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 147, 148 और 149 के अधीन अपराधों का दोषी अभिनिर्धारित किया और उसे आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया ।

15. उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखा, यद्यपि उच्च न्यायालय ने उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 147 और 148 के अधीन दोषमुक्त कर दिया । उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि : (i) अपीलार्थी की मौजूदगी लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) के परिसाक्ष्य द्वारा सिद्ध होती है, और उसकी प्रतिपरीक्षा से भी यह संपुष्टि होती है कि अपीलार्थी को मिथ्या रूप से फंसाने का कोई हेतु नहीं था ; (ii) अपीलार्थी के विरुद्ध अभिकथनों, जैसा कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों उषा बाई (अभि. सा. 10) और लल्लू विश्वकर्मा, अभि. सा. 11 द्वारा विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है, की डा. सी. एस. जैन (अभि. सा. 13) और डा. नीलम श्रीवास्तव (अभि. सा. 15) की चिकित्सीय राय से सम्यक् रूप से संपुष्टि हुई थी ; (iii) मृतक तुलाराम द्वारा किया गया कथन, जो कि अभि. सा. 14 द्वारा अभिलिखित किया गया है, दोषसिद्धि के लिए अवलंब लिए गए अन्य साक्ष्य के साथ मेल खाता है ; (iv) आयुध (चाकू) अपीलार्थी के प्रकटीकरण कथन के आधार पर अभिगृहीत किया गया था, जिससे भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'भारतीय साक्ष्य अधिनियम' कहा गया है) की धारा 27 के अधीन बरामदगी ग्राह्य हो जाती है ; और (v) अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य से भी आयुध के अभिग्रहण की संपुष्टि होती है ।

16. अपनी दोषसिद्धि से असंतुष्ट होकर अपीलार्थी ने हमारे समक्ष अपील फाइल की है ।

पक्षकारों की दलीलें

17. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री दुष्यंत दवे ने दलील दी कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 3022/34 के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखकर गलती की है । इसको सिद्ध करने के लिए उन्होंने निम्नलिखित दलीलें दीं :–

(क) अभियोजन पक्ष के पक्षकथन में अंतर्निहित विरोधाभास हैं । एक ओर, निचले न्यायालयों द्वारा अवलंबित दो प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों (अभि. सा. 10 और अभि. सा. 11) ने साक्ष्य दिया कि संपूर्ण घटना भैरव शास्त्री की झुग्गी के अंदर हुई थी, जो शिकायतकर्ता (अभि. सा. 10) की झुग्गी के पास स्थित थी । दूसरी ओर, अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान कथन किया कि अभि. सा. 10 की झुग्गी के पास कोई झगड़ा नहीं हुआ था और घटनास्थल के पास कोई 'भैरों बाबा मंदिर' या आवास नहीं था । यह दलील दी गई कि चूंकि घटना स्वीकृत रूप से झुग्गी के अंदर घटी थी, इसलिए यह अविश्वसनीय है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने इसे देखा हो ।

(ख) यह दलील दी गई कि घटनास्थल पर अपीलार्थी की मौजूदगी पूरी तरह से विवादग्रस्त है और इस तरह का निष्कर्ष स्वयं शिकायतकर्ता के कथन से निकाला जा सकता है । घटना लगभग 9.30 बजे अपराह्न में घटी थी, जिससे साक्षियों के लिए दृश्यता संबंधी चुनौतियां हो सकती थीं । उषा बाई (शिकायतकर्ता, अभि. सा. 10) ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वह अभियुक्त अहमद, असगर अली, रवि और कनिजा बाई से परिचित थी किंतु अन्य अभियुक्तों को वह केवल नाम से जानती थी । इससे स्पष्ट रूप से उपदर्शित होता है कि अभि. सा. 10 अपीलार्थी से परिचित नहीं थी । प्रत्यक्षदर्शी वृत्तांत को छोड़कर, यह सुझाव देने के लिए कोई अन्य विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी घटना में मौजूद था या उसने इसमें भाग लिया था ।

(ग) इसके अतिरिक्त, चाकू से पहुंची क्षति को अपीलार्थी पर अभ्यारोपित नहीं किया जा सकता, जैसा कि लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) ने साक्ष्य दिया है, जिसने स्पष्ट रूप से कहा था कि वह यह नहीं समझ सका था कि किसने किस पर हमला किया था ।

(घ) इसके अतिरिक्त, यह दलील दी गई कि अपीलार्थी से जब्त किए गए आयुध की न्यायालयिक प्रयोगशाला में जांच की गई थी जिसका परिणाम अनिश्चायक रहा, और इससे अपीलार्थी के इस पक्षकथन को बल मिलता है कि उसे मिथ्या रूप से फंसाया गया था ।

(ङ) अंत में, इस बात पर जोर दिया गया कि अन्वेषण अधिकारी गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए मृतक तुलाराम के कथन को तुलाराम के मानसिक स्वास्थ्य के संबंध में डा. से प्रमाणन के अभाव में 'मृत्युकालिक कथन' नहीं समझा जा सकता था ।

(च) अन्यथा भी, अन्वेषण अधिकारी/पुलिस के समक्ष किया गया मृत्युकालिक कथन सदैव संदिग्ध परिस्थितियों से घिरा होता है और उसका अवलंब नहीं लिया जा सकता ।

18. इसके विपरीत, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल सुश्री मृणाल गोपाल ऐल्कर ने यह दलील दी कि तारीख 19 दिसंबर, 2017 के आक्षेपित निर्णय में इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । उन्होंने निम्नलिखित दलीलें दीं :–

(क) निचले न्यायालयों ने स्पष्ट रूप से लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) के परिसाक्ष्य के आधार पर घटनास्थल पर अपीलार्थी की मौजूदगी और घटना में उसकी अंतर्ग्रस्तता की अभिपुष्टि की है । उन्होंने दलील दी कि विश्वकर्मा की प्रतिपरीक्षा से अपीलार्थी के संबंध में उसके कथन पर संदेह करने का कोई कारण नहीं मिलता है ।

(ख) अपीलार्थी के विरुद्ध मृतक टिल्लू के उदर पर चाकू से वार करने का विनिर्दिष्ट आरोप है, जिसका समर्थन डा. आर. एस. विजयवर्गीय (अभि. सा. 4) द्वारा दिए गए चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र से होता है, जिसने उदर पर चाकू के घाव की मौजूदगी के साथ-साथ अत्यधिक रक्तस्राव की पुष्टि की थी ।

(ग) गिरफ्तार होने के पश्चात् अपीलार्थी ने अन्वेषण अधिकारी को छिपाए गए चाकू के अवस्थान का स्वेच्छा से साक्षियों की मौजूदगी में प्रकटीकरण किया था । ऐसी बरामदगी अपीलार्थी के विरुद्ध एक अपराध में आलिप्त करने वाली सामग्री के रूप में साक्ष्य में ग्राह्य है ।

(घ) अंत में, सुश्री ऐल्कर ने इस बात पर प्रकाश डाला कि निचले न्यायालयों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए मृतक तुलाराम के कथन को ठीक ही 'मृत्युकालिक कथन' के रूप में समझा था जिससे अपीलार्थी के विरुद्ध अभियोजन के पक्षकथन की किसी संदेह के परे संपुष्टि होती है ।

विश्लेषण

19. पक्षकारों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल/काउंसेल को पर्याप्त विस्तार से सुनने के पश्चात् और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के कथनों के साथ-साथ अभिलेख पर की अन्य सुसंगत सामग्री का परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि वर्तमान अपील में निम्नलिखित तीन प्रश्न हमारे विचारार्थ उत्पन्न होते हैं :–

(क) क्या निचले न्यायालयों ने उन विरोधाभासों या विसंगतियों का मूल्यांकन न करके गलती की है जिनसे अभियोजन का पक्षकथन अविश्वसनीय हो जाता है ?

(ख) क्या बरामद किए गए आयुध पर रक्त-समूह वर्गीकरण का अभाव या न्यायालयिक प्रयोगशाला के अनिश्चायक परिणाम अभियोजन के पक्षकथन के लिए हानिकारक हैं ?

(ग) क्या अन्वेषण अधिकारी द्वारा चिकित्सा अधिकारी से स्वस्थता प्रमाणपत्र अभिप्राप्त न करने से तुलाराम की मृत्यु से पहले दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन पर 'मत्युकालिक कथन' के रूप में विचार करना अविधिमान्य हो जाता है ?

क. अभियोजन के पक्षकथन में विरोधाभास :

20. चूंकि अपीलार्थी के विरुद्ध अभियोजन का पक्षकथन मुख्य रूप से उषा बाई (अभि. सा. 10), लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11), डा. सी. एस. जैन (अभि. सा. 13), डा. नीलम श्रीवास्तव (अभि. सा. 15) और गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य पर टिका है इसलिए हम उनके परिसाक्ष्य को संक्षेप में इसमें नीचे प्रस्तुत करना उचित समझते हैं ।

21. उषा बाई (अभि. सा. 10) ने शपथपूर्वक कथन किया कि तारीख 20 जून, 2004 को लगभग 9.00 बजे अपराह्न में वह देवी सिंह **उर्फ** टिल्लू और तुलाराम द्वारा अपनी झुग्गी की दीवार के निर्माण को देख रही थी । दो अभियुक्त अहमद और कनिजा बाई वहां पहुंचे और उन्हें निर्माण को रोकने का आदेश दिया । इसके पश्चात् अहमद ने तुलाराम के सिर पर लाठी से प्रहार किया । इसके बाद अहमद के पुत्र असगर ने अन्य अभियुक्तों को हमला करने के लिए उकसाया और सभी अभियुक्तों को वहां पहुंचने तथा टिल्लू तुलाराम और लालाराम पर लाठी, राड़ और पाइप जैसे विभिन्न आयुधों से हमला करने के लिए उत्प्रेरित किया । जब अभि. सा. 10 ने अहमद की लाठी को पकड़कर बीच-बचाव करने का प्रयास किया, तो उसके साथ गाली-गलौच की गई और उसे एक तरफ हटने को कहा गया । इसके फलस्वरूप, वह पीछे हट गई । अभियुक्तों ने टिल्लू और तुलाराम को तब तक पीटा जब तक वे अशक्त नहीं हो गए । टिल्लू की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई, जबकि तुलाराम की मुश्किल से सांसें चल रही थी । घटना के तुरंत पश्चात् टिल्लू, तुलाराम और लालाराम को कमला नगर पुलिस थाने की पुलिस द्वारा उपचार के लिए हमीदिया अस्पताल ले जाया गया । अस्पताल ले जाते समय टिल्लू की मृत्यु हो गई । अभि. सा. 10 ने घटना का विवरण देते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) दर्ज कराई ।

22. लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) ने बताया कि घटना उषा बाई (अभि. सा. 10) की दीवार के पास घटी थी । लगभग 8.00 बजे अपराह्न में अहमद लाठी लहराते हुए उषा बाई की दीवार के निर्माण स्थल पर पहुंचा, जहां अभि. सा. 11 और टिल्लू साथ में खाना खा रहे

थे । अहमद दीवार के निर्माण पर आपत्ति जताते हुए उनसे भिड़ गया । जवाब में, टिल्लू ने उससे आग्रह किया कि निर्माण कार्य जारी रहने दिया जाए । इसके पश्चात्, सभी अन्य अभियुक्त वहां पहुंचे और टिल्लू तथा एक अन्य व्यक्ति पर हमला किया, यद्यपि अभि. सा. 11 विशिष्ट हमलावरों को पहचान नहीं सका । हमले के दौरान अभियुक्तों ने लाठी, चाकू, डंडे, राड़ और पाइप जैसे विभिन्न आयुधों का इस्तेमाल किया । टिल्लू भैरों बाबा के कमरे में क्षतिग्रस्त अवस्था में मिला, जबकि तुलाराम क्षतिग्रस्त अवस्था में निर्माण स्थल पर पड़ा हुआ था । अभि सा. 11 ने क्षतिग्रस्तों को एक आटो में ले जाने की व्यवस्था की । उसने पाया कि टिल्लू की अंतड़ियां बाहर निकली हुई थीं, जिसे उसने कपड़े में लपेटकर आटो में रख दिया । इसके अतिरिक्त, तुलाराम को कई सारी क्षतियों के कारण आघातजन्य और रक्तस्रावी आघात पहुंचा था । क्षतिग्रस्तों को फिर हमीदिया अस्पताल ले जाया गया । पुलिस ने बाद में अपीलार्थी से चाकू और डंडे (प्रदर्श पी-14) जब्त किए और एक ज्ञापन तैयार किया, जिस पर अभि. सा. 11 ने हस्ताक्षर किए ।

23. दो प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष ने प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य की संपुष्टि करने के लिए चिकित्सा विशेषज्ञों अर्थात् डा. सी. एस. जैन (अभि. सा. 13) और डा. नीलम श्रीवास्तव (अभि. सा. 15) को बुलाया जिन्होंने क्रमश: टिल्लू और तुलाराम की मरणोत्तर परीक्षाएं की थीं ।

24. डा. सी. एस. जैन, अभि. सा. 13 ने प्रतिवेदन दिया कि टिल्लू का शव तारीख 21 जून, 2004 को मरणोत्तर परीक्षा के लिए लाया गया था, जिस पर उदर के सामने की ओर चाकू के चार घाव के साथ-साथ सिर पर एक विदीर्ण घाव तथा तीन खरोंचें पाई गई थीं । उसने निष्कर्ष निकाला कि चाकू के घाव किसी कठोर, धारदार और भेदने वाले आयुध से कारित किए गए थे, जबकि सिर पर पहुंचीं क्षतियां किसी कठोर और कुंद वस्तु से कारित की गई थीं । सिर और उदर पर पहुंची क्षतियां संयुक्त रूप से मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त मानी गई थीं ।

25. डा. नीलम श्रीवास्तव, अभि. सा. 15 ने साक्ष्य दिया कि तुलाराम का शव मरणोत्तर परीक्षा के लिए तारीख 24 जून, 2004 को लाया गया था, जिस पर कई बहि:प्रकोष्ठित अस्थिभंग, सबड्यूरल

सुबराक्नाइड रक्तस्राव और विभिन्न घाव पाए गए थे । उसने निष्कर्ष निकाला कि तुलाराम की मृत्यु सिर पर पहुंची क्षति और उससे जुड़ी जटिलताओं के कारण श्वसन अवरुद्ध हो जाने के कारण हुई थी । क्षति की गंभीरता प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी और इसे एक कठोर, कुंद और भारी आयुध द्वारा पहुंचाए जाने के कारण मानववध संबंधी होना अवधारित किया गया था । इस साक्षी ने प्रतिपरीक्षा के दौरान स्पष्ट किया कि तुलाराम के शरीर पर चाकू या तलवार से कोई क्षति नहीं पहुंची थी ।

26. अभियोजन पक्ष ने विषयांतर्गत घटना के अन्वेषण अधिकारी, गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) की भी परीक्षा की । उसने साक्ष्य दिया कि कैसे अन्वेषण किया गया था, उस अवस्थान का एक स्थल नक्शा (प्रदर्श पी-2) तैयार किया गया था और घटनास्थल से एक रक्तरंजित फर्श का टुकड़ा भी अभिगृहीत किया गया था । उसने अपीलार्थी को गिरफ्तार किया और साक्षियों की मौजूदगी में उससे परिप्रश्न किए । परिप्रश्न के दौरान, अपीलार्थी ने हमले में प्रयुक्त किए गए चाकू को नेहरू नगर पुलिस लाइन के बैरक सं. 2 में छिपाने की संस्वीकृति की । अभि. सा. 14 ने फिर एक ज्ञापन तैयार किया और अपीलार्थी के बताने पर एक लोहे का चाकू बरामद किया । इसके पश्चात्, उसने अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्तों को गिरफ्तार किया । अभि. सा. 14 तुलाराम के शव का पंचनामा (प्रदर्श पी-34) भी तैयार किया ।

27. इस प्रक्रम पर यह उल्लेख करना समीचीन है कि अजहरूद्दीन (अभि. सा. 1), सुखराम (अभि. सा. 2) और रेशमबाई (अभि. सा. 3) को भी घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के रूप में लाया गया था । तथापि, अभियोजन पक्ष द्वारा उन्हें पक्षद्रोही माना गया क्योंकि, उनके अनुसार, उनकी मौजूदगी में कोई घटना नहीं घटी थी ।

28. यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्तों के विचारण के दौरान अभियुक्तों में से एक विजय सिंह फरार हो गया था । वर्ष 2005 में विचारण न्यायालय के निर्णय के पश्चात् विजय सिंह को गिरफ्तार किया गया और उसका विचारण किया गया था । विचारण न्यायालय ने वर्ष 2007 में दिए गए एक अन्य

निर्णय द्वारा प्रत्यक्षदर्शी साक्षी उषा बाई (अभि. सा. 10) के परिसाक्ष्य के आधार पर, जिसका सम्यक् रूप से समर्थन डा. सी. एस. जैन (अभि. सा. 13) और डा. नीलम श्रीवास्तव (अभि. सा. 15) की चिकित्सीय राय के साथ-साथ अन्वेषण अधिकारी गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य से हुआ था, उसे दोषसिद्ध किया ।

29. प्रस्तुत मामले में मुख्य साक्षियों के परिसाक्ष्यों पर विस्तार से चर्चा करने के पश्चात् अब हम अपीलार्थी की ओर से उजागर किए गए विरोधाभासों पर प्रकाश डाल सकते हैं ।

क.1 भैरव शास्त्री की झुग्गी

30. यह बात पुरजोर रूप से उठाई गई कि घटनास्थल के संबंध में साक्षियों के परिसाक्ष्य में एक अंतर्निहित मतभेद है । उषा बाई, अभि. सा. 10 और लल्लू विश्वकर्मा, अभि. सा. 11 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृतक टिल्लू भैरव शास्त्री की झुग्गी में घुसा था, जहां उसे बाद में घेर लिया गया और अपीलार्थी द्वारा चाकू से उसके उदर पर हमला किया गया, जबकि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) ने प्रतिपरीक्षा के दौरान सत्यतापूर्वक स्वीकार किया था कि उसे घटनास्थल के पास भैरों बाबा नाम के किसी व्यक्ति के रहने की जानकारी नहीं थी । अन्वेषण अधिकारी ने आगे स्पष्ट किया कि घटनास्थल के आस-पास भैरों बाबा से जुड़ा कोई मकान या मंदिर नहीं था, यही कारण है कि उसने स्थल नक्शे (प्रदर्श पी-2) में इसका नाम नहीं लिखा था ।

31. हमने इस संबंध में साक्षियों के परिसाक्ष्य की गहराई से संवीक्षा की है । हमें अभियोजन पक्ष के सभी बयानों में भैरव शास्त्री का लगातार उल्लेख मिला है, साथ ही भैरव शास्त्री का भैरों बाबा के रूप में भी उल्लेख किया गया है । लल्लू विश्वकर्मा, अभि. सा. 11 ने अपने परिसाक्ष्य में स्पष्ट रूप से यह कहा था कि मृतक टिल्लू को घटना के बाद भैरों बाबा के कमरे के अंदर पाया गया था । इसके अतिरिक्त, भैरव शास्त्री की झुग्गी की मौजूदगी का उल्लेख मृतक तुलाराम के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन किए गए कथन में है, जिसे अन्वेषण अधिकारी गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) द्वारा अभिलिखित किया गया था, जिसमें उसने असंदिग्ध रूप से कहा है कि टिल्लू ने भैरव

शास्त्री की झोंपड़ी के अंदर शरण ली थी और स्वयं को उसमें बंद कर लिया था । भैरव शास्त्री की झुग्गी का उल्लेख शिकायतकर्ता, अभि. सा. 10 द्वारा दर्ज की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) तथा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन (प्रदर्श डी-1) में भी स्पष्ट है ।

32. यह सत्य है कि गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) के कथन के अनुसार उसे घटनास्थल के पास किसी भैरों बाबा के होने की जानकारी नहीं थी, जबकि अन्य साक्षियों द्वारा जिस स्थान को 'भैरव शास्त्री की झुग्गी' बताया गया है, वह स्थान उसके द्वारा तैयार किए गए स्थल नक्शे (प्रदर्श पी-2) में दर्शाया गया है । स्थल नक्शा (प्रदर्श पी-2) की परीक्षा करने मात्र से एक चिह्नित संरचना का पता चलता है जिसे 'बी' से लेबल किया गया है जिसे 'ईंटों वाले कमरे' के रूप में पहचाना गया है जहां मृतक ने शरण ली थी । यद्यपि उक्त संरचना को भैरव शास्त्री की झुग्गी या किसी अन्य नाम से नहीं दर्शाया गया है, किंतु इससे प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के इस वृत्तांत की पुष्टि होती है कि टिल्लू पर पड़ोस की झुग्गी में हमला किया गया था । इसके अतिरिक्त, प्रतिरक्षा पक्ष ने अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) की प्रतिपरीक्षा के समय स्थल नक्शे में किए गए चित्रण पर कोई विवाद नहीं किया था ।

33. अन्वेषण अधिकारी की ओर से स्थल नक्शे पर किसी स्थान को चिह्नित करने में लोप मात्र से अभियोजन का पक्षकथन प्रभावित नहीं होता है । यह सुस्थिर है कि स्थल नक्शा केवल घटना के स्थान को दर्शाता है और इसमें कोई और ब्यौरा दिया जाना विवक्षित नहीं है । (**शिवन्ना** बनाम **हंसूर टाउन पुलिस का राज्य**[1] वाला मामला देखें) । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि जिन व्यक्तियों ने जो देखा था और उन्होंने उसके संबंध में साक्ष्य दिया है, उनके प्रत्यक्ष कथन को उचित महत्व दिया जाना चाहिए । उनके साक्ष्य को केवल इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता क्योंकि अन्वेषण अधिकारी स्थल नक्शे पर कमरे को 'भैरव शास्त्री की झुग्गी' के रूप में वर्णित करना भूल गया था ।

---

[1] (2010) 15 एस. सी. सी. 91.

34. यह ऐसा मामला है जिसमें प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने एक-दूसरे की संपुष्टि की है ; उनके अभिसाक्ष्यों को स्वयं मृतक तुलाराम द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में पुष्ट किया है, और घटना के स्थान को स्थल नक्शा (प्रदर्श पी-2) पर 'ईंटों के कमरे' के रूप में दर्शाया गया है । इस प्रकार, यह सिद्ध हो जाता है कि वहां एक अन्य झुग्गी थी जहां मृतक ने शरण ली थी और अंततः उस पर हमला किया गया था । इन परिस्थितियों को देखते हुए, तथाकथित विरोधाभास अपराध के मुख्य भाग पर आक्रमण करने में पूरी तरह विफल हो जाता है ।

क.2 प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तुओं को शिकायतकर्ता को पढ़कर न सुनाए जाने का विधिक प्रभाव

35. इसके पश्चात् यह दलील दी गई कि शिकायतकर्ता उषा बाई (अभि. सा. 10) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) उसे पढ़कर नहीं सुनाई गई थी और उसने पुलिस के अनुदेशानुसार अपना अंगूठा लगाया था । प्रतिपरीक्षा के दौरान उसके अभिसाक्ष्य का अवलंब लिया गया, जिसमें उसने दावा किया है कि उसने एक कोरे कागज पर अंगूठा लगाया था, जिसके उपरांत प्रदर्श पी-7 तैयार किया गया था ।

36. इस दलील का मूल्यांकन करने के लिए हमने उषा बाई (अभि. सा. 10) के कथन के अनूदित वृत्तांत का अनुशीलन किया है, जिसे अपीलार्थी ने मूल दस्तावेज पुस्तिका के साथ-साथ "साक्षियों के अभिसाक्ष्य के संकलन" के एक भाग के रूप में संलग्न किया है । चूंकि अनूदित वृत्तांत गलत प्रतीत होता है, जिससे यह समझना मुश्किल हो जाता है कि साक्षी ने क्या अभिसाक्ष्य दिया था, इसलिए हमने उषा बाई (अभि. सा. 10) के कथन के मूल हिंदी वृत्तांत को भी पढ़ा है ।

37. किसी साक्षी के कथन का गुणगान उसके समग्र रूप में किया जाना चाहिए । यह पुनः दोहराया जा सकता है कि उषा बाई (अभि. सा. 10) ने अपनी शिकायत में, जिसके कारण विषयांतर्गत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी, स्पष्ट रूप से यह कहा था कि "विजय, धर्मेन्द्र

उर्फ धम्मा, काटचू **उर्फ** रामस्वरूप, बल्लू, रवि, असगर सभी यह चिल्लाते हुए आए कि टिल्लू दादागिरी कर रहा है और आज उसे खत्म कर दिया जाए ....." । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि "ये सभी लोग" हमला करने लगे, टिल्लू भैरव शास्त्री की झुग्गी की ओर भागा, अंदर घुसा और स्वयं को बचाने के लिए अंदर से दरवाजा बंद कर लिया । "सभी ने" (उन सभी ने) बलपूर्वक दरवाजा तोड़ दिया और झुग्गी में घुस गए और टिल्लू को घेर लिया.....और धर्मेन्द्र **उर्फ** धम्मा (अपीलार्थी) ने फिर टिल्लू के उदर में चाकू से प्रहार किया ।

38. यह बात भी अवश्य ध्यान में रखी जानी चाहिए कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट कोई सारभूत साक्ष्य नहीं है और इसका उपयोग केवल इत्तिलाकर्ता के वृत्तांत की पुष्टि या खंडन करने के लिए किया जा सकता है । यह भी आवश्यक नहीं है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के लिए हमेशा लिखित कथन ही हो । यहां तक कि पुलिस को संज्ञेय अपराध कारित होने के बारे में मौखिक रूप से सूचना देना भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के लिए पर्याप्त है ।

39. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के तीन उद्देश्य हैं : पहला, अधिकारिता वाले मजिस्ट्रेट और पुलिस प्रशासन को उस अपराध के बारे में सूचित करना है जिसकी रिपोर्ट पुलिस थाने में की गई है ; दूसरा, न्यायिक अधिकारी को, जिसके समक्ष अंततोगत्वा विचारण किया जाता है, इस बात से परिचित कराना है कि घटना के तुरंत पश्चात् बताए गए वास्तविक तथ्य क्या हैं और किन सामग्री के आधार पर अन्वेषण प्रारंभ किया गया था ; तीसरा और सबसे महत्वपूर्ण है अभियुक्त को बाद में होने वाले फेरफारों, अतिशयोक्तियों और परिवर्धनों से बचाना ।

40. विषयांतर्गत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के सभी संघटकों का पूरी तरह से समाधान होता है । घटना तारीख 20 जून, 2004 को 9.30 बजे अपराह्न में घटित हुई बताई गई है और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट उसी दिन 10.45 बजे अपराह्न में अभिलिखित की गई थी । घटना में अभिकथित रूप से सम्मिलित सभी आठ अभियुक्तों के नाम सम्यक् रूप से अभिलिखित किए गए हैं ।

प्रथम इत्तिला रिपोर्ट एक स्वाभाविक, सुसंगत हस्तलेखन प्रवाह में लिखी गई है, जिसमें कोई रिक्त स्थान नहीं छोड़ा गया है, शब्दों को उपरि लेखन करके या छोटा करके नहीं लिखा गया है, या कोई शब्द या वाक्य जोड़ा नहीं गया है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतिम पंक्ति में स्पष्ट रूप से अभिलिखित है कि इत्तिलाकर्ता को इत्तिला को पढ़कर सुनाया गया था और स्पष्ट किया गया था । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट विहित रूपविधान में है और उषा बाई (अभि. सा. 10) ने उसके पश्चात् अपने अंगूठे की छाप लगाई है ।

41. यह सत्य है कि उषा बाई (अभि. सा. 10) ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह दावा किया था कि पुलिस ने न तो उसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) पढ़कर सुनाई थी और न ही उसके उन कथनों की अंतर्वस्तुओं का उल्लेख किया था, जो पुलिस द्वारा पांच-छह अवसरों पर अभिलिखित किए गए थे । उसने आगे यह कथन किया कि यह अवधारित नहीं किया जा सका था कि प्रदर्श पी-7 में क्या वृत्तांत सम्मिलित किया गया था चूंकि वह साक्षर नहीं है । यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने इस साक्षी को प्रभावित करने का स्पष्ट प्रयास किया था । तथापि, उषा बाई के अपीलार्थी को विधि के शिकंजे से बचाने के अहानिकर आशय के बावजूद वह इस तथ्य से इनकार नहीं कर सकी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट उसकी शिकायत के आधार पर दर्ज की गई थी या उसके द्वारा सूचित की गई घटना में टिल्लू और तुलाराम को घातक क्षतियां पहुंची थीं ।

42. यह मानते हुए कि पुलिस इत्तिलाकर्ता को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तुओं के बारे में बताने या सूचित करने में असफल रही थी, विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या ऐसे लोप से अपीलार्थी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है ? हमारी सुविचारित राय में, इसका उत्तर नकारात्मक ही होना चाहिए । यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें अपीलार्थी को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट या आरोप पत्र की प्रति उपलब्ध नहीं कराई गई थी, जिससे इत्तिलाकर्ता की प्रभावी रूप से प्रतिपरीक्षा करने में क्षमता बाधित हो सकी थी । अभिलेख से प्रकट होता है कि श्री ए. के. श्रीवास्तव, अधिवक्ता ने अपीलार्थी की ओर से उषा बाई (अभि. सा. 10) की

प्रतिपरीक्षा की थी । उषा बाई ने अभियुक्त के रूप में अपीलार्थी का नाम न बताकर उसकी सहायता करने का प्रयास किया था, किंतु वह इस तथ्य को नहीं छिपा सकी कि अहमद, असगर, रवि और कनिजा बाई के अतिरिक्त वह अन्य अभियुक्तों को भी वह उनके नाम से जानती थी । अपीलार्थी स्वीकृत रूप से उन अभियुक्तों में से एक है । उसने आगे यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि सभी ने (उन सभी ने) टिल्लू पर लाठियों, राड़ों और पाइपों से हमला किया था । उसने यह भी कथन किया कि जब उसने बीच-बचाव करने की कोशिश की, तो अहमद ने उसके साथ गाली-गलौच की और उसे जान से मारने की धमकी दी । फिर वह कुछ दूरी पर जाकर खड़ी हो गई और उसने देखा कि उन आरोपीगण ने अर्थात् सभी अभियुक्तों ने टिल्लू और तुलाराम पर घातक हमला किया । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है उसने आगे यह साक्ष्य दिया कि वह लालाराम के साथ फिर पुलिस थाना कमला नगर गई, जिसके पश्चात् पुलिस पदधारियों ने लालाराम और तुलाराम को तुरंत हमीदिया अस्पताल में उपचार के लिए भेजा । तथापि, टिल्लू अस्पताल नहीं पहुंच सका क्योंकि रास्ते में ही उसकी मृत्यु हो गई थी । इसके अतिरिक्त, उषा बाई (अभि. सा. 10) ने अपने अभिसाक्ष्य के पैरा 4 में स्पष्ट रूप से यह कहा है कि उसने प्रदर्श पी-7 के माध्यम से पुलिस थाना, कमला नगर को मामले की सूचना दी थी, जिस पर उसका अंगूठा लगा हुआ है । उषा बाई (अभि. सा. 10) की प्रतिपरीक्षा करते समय अपीलार्थी द्वारा उसके अभिसाक्ष्य के इस भाग पर प्रश्न नहीं उठाया गया है । हमने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किए गए स्वयं अपीलार्थी के कथन को भी देखा है । एक अस्पष्ट इनकार और मिथ्या फंसाए जाने के दावों के अलावा ऐसा कोई सुझाव नहीं है कि वह घटनास्थल पर मौजूद नहीं था ; यह कि उसने घटना में भाग नहीं लिया था, या उसे किसी कारण से मिथ्या रूप से फंसाया गया था । इस प्रकार, अपीलार्थी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तुओं को इत्तिलाकर्ता को अभिकथित रूप से पढ़कर न सुनाए जाने के परिणामस्वरूप पड़ने वाले किसी प्रतिकूल प्रभाव को प्रदर्शित करने में विफल रहा है । इस संबंध में दी गई दलील पूरी तरह से भ्रामक है ।

43. जो भी स्थिति हो, **राज्य** बनाम **एन. एस. ज्ञानेश्वरन**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह न्यायादेश दिया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन इत्तिला को अभिलिखित करने के पश्चात् पढ़कर सुनाने और उक्त इत्तिला पर इत्तिलाकर्ता द्वारा हस्ताक्षर करने और उसके सार की विहित रीति में प्रविष्टि करने से संबंधित शर्तें बाध्यकर नहीं हैं । ये अपेक्षाएं प्रक्रियात्मक प्रकृति की हैं और इनमें से किसी का भी लोप उक्त धारा के अधीन प्रदान की गई जानकारी से उत्पन्न होने वाले विधिक परिणामों को प्रभावित नहीं करती हैं ।

44. यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि जब प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य संगत, अनधिक्षेपणीय हैं और चिकित्सीय साक्ष्य या प्रयुक्त आयुध जैसी अपराध में आलिप्त करने वाली सामग्री की बरामदगी द्वारा विधिक रूप से संपुष्टि होती है, तो केवल प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में कोई कमी, यदि कोई हो, दोषसिद्धि को उलटने या अभियोजन के पक्षकथन को कमजोर करने का एक विधिमान्य आधार नहीं बनती है ।

क.3 घटनास्थल पर अपीलार्थी की मौजूदगी

45. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि यह एक मिथ्या फंसाए जाने का मामला है क्योंकि घटनास्थल पर अपीलार्थी की मौजूदगी को संदेह के परे सिद्ध नहीं किया गया है । उन्होंने उषा बाई (अभि. सा. 10) के कथन का अवलंब लिया, जिसने अपनी मुख्य परीक्षा के आरंभिक कथन में अहमद, असगर, रवि और कनिजा बाई को अभियुक्तों के रूप में नामित किया था और दावा किया था कि वह किसी और को नहीं जानती । इस बात पर प्रकाश डाला गया कि उषा बाई (अभि. सा. 10) न केवल अपने संपूर्ण कथन में अपीलार्थी का नाम लेने में असफल रही थी, बल्कि प्रतिपरीक्षा के दौरान भी यह स्वीकार किया था कि उसने कभी भी हमलावरों के नाम नहीं बताए थे, जैसाकि पुलिस ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) में उल्लेख किया है ।

---

[1] (2013) 3 एस. सी. सी. 594.

46. तथापि, हम इस दलील से प्रभावित नहीं हैं । हम ऐसा निम्नलिखित कारणों से कहते हैं :–

(क) उषा बाई (अभि. सा. 10) के कथन को टुकड़ों में नहीं बल्कि संपूर्ण रूप से पढ़ा और मूल्यांकन किया जाना चाहिए ।

(ख) जैसाकि पहले चर्चा की गई है, उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि वह शेष अभियुक्तों को नाम से जानती है । वह निर्विवाद रूप से शेष अभियुक्तों का उल्लेख कर रही थी जो न्यायालय में मौजूद थे, जिसमें अपीलार्थी भी सम्मिलित था ।

(ग) उसने अभिसाक्ष्य दिया था कि "सभी अभियुक्तों" ने लालाराम, तुलाराम और देवी सिंह **उर्फ** टिल्लू पर डंडों, छड़ों और पाइपों से हमला किया था ।

(घ) उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया था कि सभी अभियुक्तों ने टिल्लू और तुलाराम पर उन्हें जान से मारने के आशय से हमला किया था ।

(ङ) उसने यह भी स्वीकार किया था कि वह पुलिस थाना कमला नगर गई थी और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-7) दर्ज कराई थी, जिस पर उसके अंगूठे की छाप थी ।

(च) इन तात्विक तथ्यों को स्वीकार करने के पश्चात् उषा बाई के वृत्तांत का विश्लेषण करके यह कहना अतिशयोक्ति होगी कि अपीलार्थी घटना में मौजूद नहीं था या उसने भाग नहीं लिया था ।

(छ) किसी भी स्थिति में, एक अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षी लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि अपीलार्थी मौजूद था और उसने टिल्लू के उदर पर चाकू से प्रहार करके घटना में भाग लिया था ।

(ज) चाकू से कारित क्षति, जिसके लिए अपीलार्थी को जिम्मेदार ठहराया गया है, को डा. आर. एस. विजयवर्गीय (अभि. सा. 4)

और डा. सी. एस. जैन (अभि. सा. 13) द्वारा सम्यक् रूप से सिद्ध किया गया है ।

(झ) अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) ने अपीलार्थी के प्रकटीकरण कथन के आधार पर आक्रामक आयुध अर्थात् चाकू की बरामदगी को सफलतापूर्वक सिद्ध किया था । लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11), जो बरामदगी का साक्षी है, ने अन्वेषण अधिकारी के परिसाक्ष्य का समर्थन किया था ।

(ञ) किसी भी संदेह को दूर करने के लिए, लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) ने न्यायालय में अपीलार्थी की शनाख्त की थी और विनिर्दिष्ट रूप से इंगित किया था कि "खानेदार कमीज पहने हुए सामने खड़ा व्यक्ति धर्मेन्द्र है" ।

47. यह एक घिसी-पिटी विधि है कि शनाख्त परेड (टीआईपी) सारभूत साक्ष्य के रूप में काम नहीं करती है किंतु इसका आशय मुख्य रूप से यह सुनिश्चित करने में अन्वेषण अभिकरण की सहायता करने का होता है कि अन्वेषण में उसकी प्रगति सही मार्ग पर है । शनाख्त परेड आयोजित करना आबद्धकर नहीं है । इसके अतिरिक्त, शनाख्त परेड आयोजित करने में असफल रहना उन साक्षियों के परिसाक्ष्य को जानबूझकर त्यक्त करने का आधार नहीं हो सकता है जिनके साक्ष्य को विचारण न्यायालय और अपीलीय न्यायालय द्वारा समवर्ती रूप से स्वीकार किया गया हो । [**राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम **नवजोत संधू**[1] वाला मामला देखें] । इसके अतिरिक्त, परेड आयोजित न करने से न्यायालय में की गई शनाख्त के साक्ष्य को अग्राह्य नहीं माना जाएगा । (**हीरा** बनाम **राजस्थान राज्य**[2] वाला मामला देखें) ।

48. इसी प्रकार, घटनास्थल पर अंधेरे के कारण अस्पष्ट दृश्यता की दलील भी मान्य नहीं है । रात्रि में होने वाली घटनाओं का विश्लेषण

---

[1] (2005) 11 एस. सी. सी. 600.

[2] (2007) 10 एस. सी. सी. 175.

करते हुए इस न्यायालय ने **नथूनी यादव** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में कई कारकों को ध्यान में रखा, जिनमें सम्मिलित हैं :–

(i) वह निकटता जिस पर हमलावरों का क्षतिग्रस्त व्यक्तियों से आमना-सामना हुआ होगा ।

(ii) सितारों से घटनास्थल पर कुछ परिवेशी प्रकाश पहुंचने की संभावना ।

(iii) प्रत्येक हमलावर के हुलिए से साक्षियों की परिचितता ।

49. प्रस्तुत मामले में, प्रथमत:, घटनास्थल अर्थात् भैरव शास्त्री की झुग्गी शिकायतकर्ता (अभि. सा. 10) की झुग्गी से सटी हुई थी, जिससे साक्षियों के लिए अभियुक्तों को देखना और पहचानना आसान हो गया था । द्वितीयत:, प्रत्येक अभियुक्त, विशिष्ट रूप से अपीलार्थी, प्रत्यक्षदर्शियों से परिचित था । तृतीयत:, यह देखते हुए कि घटना गर्मियों की रात्रि में घटी थी, साक्षियों के लिए दृश्यता में न्यूनतम बाधा रही होगी । चतुर्थत: और सबसे महत्वपूर्ण बात, अपीलार्थी ने अपने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन कथन में कहीं भी अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् नहीं किया था । उसने साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के दौरान भी इस प्रतिरक्षा को अग्रसर नहीं किया था ।

50. इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि जो कोई भी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के वृत्तांत के विपरीत और उसके अल्पीकरण में अन्यत्र उपस्थित होने की दलील देता है, अपराध के समय घटनास्थल पर मौजूद न होने की बात को साबित करने का उस पर भारी दायित्व होता है । अपीलार्थी न केवल इस प्रतिरक्षा को उठाने में विफल रहा था, बल्कि इसके समर्थन में कोई साक्ष्य भी प्रस्तुत नहीं किया था । इन सभी कारकों के संचयी प्रभाव को ध्यान में रखते हुए हमारे पास इस बात पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है कि अपीलार्थी न केवल अपराध स्थल पर मौजूद था, बल्कि उसने घटना में सक्रिय रूप से भाग भी लिया था और टिल्लू (मृतक) पर एक घातक प्रहार भी किया था ।

---

[1] (1998) 9 एस. सी. सी. 238.

51. हम इस तथ्य को अनदेखा नहीं कर सकते कि ऐसी स्थिति में जहां तीखी नोंक-झोंक में दो लोगों की हत्या की गई हो, यह बात अत्यधिक असंभाव्य है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी चाहेंगे कि वास्तविक अपराधी न्याय से बच जाएं । किसी पूर्व हेतु के अभाव में, यह सत्यभासी नहीं है कि वे इस मामले में अपीलार्थी पर मिथ्या अभियोग लगाएंगे । यह ऐसा परिदृश्य नहीं है जहां शिकायतकर्ता या अभि. सा. 11 ने अपीलार्थी के विरुद्ध द्वेष रखा हो और घटना के पश्चात् उसे फंसाने के लिए कोई कहानी गढ़ी हो । बल्कि, अपीलार्थी का नाम घटना के दो घंटे से भी कम समय के भीतर प्रदर्श पी-7 के माध्यम से सम्यक् रूप से अभिलिखित किए गए सर्वप्रथम वृत्तांत में सामने आया था । प्रासंगिक रूप से, प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के दौरान अपीलार्थी को मिथ्या रूप से फंसाए जाने का कोई हेतु नहीं सुझाया गया था ।

क.4 अपीलार्थी पर चाकू की क्षति पहुंचाए जाने का अभ्यारोपण

52. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि चूंकि घटना झुग्गी के अंदर और रात्रि में घटी थी इसलिए यह अत्यंत अनधिसंभाव्य है कि साक्षियों ने यह देखा हो कि घटना किस रीति में घटी थी । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 11, लल्लू विश्वकर्मा के कथन का अवलंब लिया गया था, जिसने कहा था कि वह नहीं देख सका था कि किसने किस पर हमला किया था और यह नहीं बता सका था कि किसके पास से कौन सा आयुध अभिगृहीत किया गया था । इस प्रकार, यह प्रकथन किया गया कि यह निष्कर्ष निकालने के लिए तनिक भी साक्ष्य नहीं है कि चाकू की क्षति अपीलार्थी द्वारा कारित की गई थी ।

53. हमने इस दलील का गहराई से विश्लेषण किया है । इस न्यायालय के लिए अपीलार्थी के प्रकटीकरण कथन (प्रदर्श पी-14), जिसके परिणामस्वरूप प्रश्नगत आयुध (चाकू) का पता चला था, की परीक्षा करना आवश्यक है । यह कथन निम्नलिखित है :–

"तारीख 20 अप्रैल, 2004 को मैंने अपने साथियों अहमद, असगर, रवि, विजय, काटचू **उर्फ** रामस्वरूप, बल्लू व कनिजा बाई के साथ

मिलकर टिल्लू **उर्फ** देवीसिंह के साथ चाकू और डंडे से स्वेच्छापूर्वक मारपीट की थी, जिस चाकू से मैंने टिल्लू **उर्फ** देवीसिंह पर हमला किया था, उसे मैंने पुलिस लाइन, नेहरू नगर बैरक सं. 2 में छिपा रखा है । मेरे साथ चलो, मैं इसे आपको सौंप दूंगा ।"

54. अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रकटीकरण कथन के आधार पर चाकू अर्थात् आक्रामक आयुध का पता चला था और बाद में उसे अभिगृहीत किया गया था । इसके पश्चात्, एक अभिग्रहण ज्ञापन (पी-20) तैयार किया गया था, जिसमें निम्नलिखित विवरण दिया गया था :–

> "लोहे से बना एक चाकू है जिस पर लकड़ी का मुट्ठा है, जिसकी कुल लंबाई लगभग 14½ इंच, मुट्ठे की लंबाई लगभग 4¾ इंच, ब्लेड की लंबाई लगभग 10 इंच और ब्लेड की चौड़ाई लगभग 1¼ इंच है, चाकू की नोक नुकीली है, ब्लेड के अगले हिस्से में रक्त लगा है जो सूख चुका है । अभियुक्त धर्मेन्द्र **उर्फ** धम्मा द्वारा प्रस्तुत किए जाने पर उसे पुलिस ने अपने कब्जे में लिया और मौके पर ही साक्ष्य के रूप में मुहरबंद किया ।"

55. जिस प्रश्न का अवधारण किए जाने की आवश्यकता है, वह यह है कि क्या उपर्युक्त प्रकटीकरण कथन साक्ष्य में ग्राह्य है ? भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अर्थांतर्गत किसी प्रकटीकरण कथन की ग्राह्यता से संबंधित मुद्दे पर इस न्यायालय द्वारा **पुलुकुरी कोट्टया** बनाम **सम्राट**[1] वाले मामले में व्यापक रूप से विचार किया गया था, जिसमें संक्षेप में निम्नलिखित मानदंड निर्धारित किए गए थे :–

(i) किसी तथ्य का पता चलना चाहिए ।

(ii) तथ्य का पता किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति से प्राप्त जानकारी के परिणामस्वरूप चलना चाहिए ।

(iii) जानकारी देने वाला व्यक्ति पुलिस अधिकारी की अभिरक्षा में होना चाहिए ।

---

[1] 1946 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 47.

(iv) जानकारी का केवल वह भाग ही साबित किया जा सकता है जो पता चले तथ्य से स्पष्टत: या पूर्णत: संबंधित हो ।

56. अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य से पता चलता है कि अपीलार्थी ने पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए स्वेच्छा से प्रकटीकरण कथन किया था, जिसके अनुसरण में आक्रामक आयुध (चाकू) बरामद किया गया था । क्या उक्त कथन स्वेच्छा से किया गया था या प्रपीड़न द्वारा प्राप्त किया गया था, यह आवश्यक रूप से एक तथ्य का प्रश्न है । इस संबंध में, लल्लू विश्वकर्मा (अभि. सा. 11) का परिसाक्ष्य महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि उसके द्वारा प्रकटन कथन करते हुए सम्यक् रूप से देखा गया था । हमारी सुविचारित राय में, अपीलार्थी का प्रकटन कथन, जिस सीमा तक इसके परिणामस्वरूप चाकू की बरामदगी हुई थी, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के मूल सिद्धांतों को पूरा करता है और इसे साक्ष्य में सही ढंग से स्वीकार किया गया है ।

57. हम इस प्रक्रम पर यह कहना चाहेंगे कि अभियोजन पक्ष के वृत्तांत को न केवल विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था अपितु उच्च न्यायालय ने भी अपील में इसकी अभिपुष्टि की थी । यह पता लगाने के लिए कि अपीलार्थी किसी युक्तियुक्त संदेह के परे दोषी है या नहीं, हमने अपनी सीमित अधिकारिता के क्षेत्र का विस्तार किया है और प्रथम अपीलीय न्यायालय के समान भूमिका ग्रहण की है । हम इस तथ्य से अवगत हैं कि अधिकारिता संबंधी आवर्धन एक अपवाद होना चाहिए और अत्यधिक कठिनाई वाले मामले में विपदग्रस्त (विपदग्रस्तों), अभियुक्तों के साथ-साथ संवेदनशील साक्षियों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए अत्यधिक सावधानी के साथ इसका अवलंब लिया जाना चाहिए । ऐसे मापदंडों को ध्यान में रखते हुए, इस बात को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि दोनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षी, अभि. सा. 10 और अभि. सा. 11 अनपढ़ मजदूर हैं और उनके परिसाक्ष्य घटना के बाद काफी समय बीत जाने के पश्चात् अभिलिखित किए गए थे । दोनों साक्षियों ने जोरदार रूप से इस बात से इनकार

किया कि उन्हें पुलिस या किसी और व्यक्ति ने सिखाया-पढ़ाया नहीं था । किसी ग्रामीण साक्षी का परिसाक्ष्य, भले ही उसमें कुछ छुट-पुट असंगतियां या विसंगतियां हों, उसकी दृढ़ता को कम नहीं कर सकती । ऐसे साक्षियों के साक्ष्य का व्यापक रूप से और सावधानीपूर्वक मूल्यांकन किया जाना चाहिए, विशेष रूप से जब प्रतिपरीक्षा से यह पता चलता हो कि अभियुक्त व्यक्ति (व्यक्तियों) ने कुछ बाहरी दबाव डालकर उन्हें अपने पक्ष में करने का प्रयास किया था । इस प्रकार, हमारा समाधान हो गया है कि अभि. सा. 10 और अभि. सा. 11 के कथनों में ऐसी कोई विसंगति नहीं है कि उन्हें त्यक्त कर दिया जाए । यहां तक कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 14) के परिसाक्ष्य में भी कोई अंतरस्थ हेतु या साक्ष्य गढ़ने या अपीलार्थी और उसके सह-अभियुक्तों को मिथ्या रूप से फंसाने का प्रयास नहीं है ।

58. किसी साक्षी से, जब तक उसे सिखाया-पढ़ाया न गया हो, यह अपेक्षा करना अत्यधिक अनुचित और अयुक्तियुक्त होगा कि वह घटना के हर छोटे-छोटे विवरण को याद रखे और उसे पूरे विवरण के साथ प्रस्तुत करे । इस प्रकार, अपीलार्थी की दलील किसी गुणागुण से रहित है ।

ख. रक्त समूह वर्गीकरण की अनुपस्थिति का अभियोजन के पक्षकथन पर प्रभाव

59. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने प्राख्यान किया कि अभियुक्त के पास से तात्पर्यित रूप से बरामद चाकू का न्यायालयिक प्रयोगशाला में परीक्षण किया गया था, जहां परीक्षण के परिणाम विशिष्ट रूप से आयुध पर रक्त समूह के अवधारण के संबंध में, अनिश्चायक थे । परिणामस्वरूप, रक्त समूह विश्लेषण में निश्चायक मिलान के अभाव को अपीलार्थी के पक्ष में और अभियोजन पक्ष के विरुद्ध माना जाना चाहिए ।

60. न्यायालयिक प्रयोगशाला रिपोर्ट की गहराई से परीक्षा करने पर इस बात की पुष्टि हो जाती है कि बरामद किए गए चाकू पर किए गए रक्त समूह वर्गीकरण परीक्षण से अनिश्चायक परिणाम मिले थे । तथापि, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि अपीलार्थी के बताने पर बरामद चाकू पर मानव रक्त पाया गया था (न्यायालयिक प्रयोगशाला के

समक्ष प्रदर्श "I") । यह देखते हुए इस तथ्य का कुछ महत्व हो जाता है कि लाठी सहित विभिन्न आयुधों और यहां तक कि वह चाकू जिसके लिए अभियुक्त असगर को जिम्मेदार ठहराया गया था, का भी न्यायालयिक प्रयोगशाला में परीक्षण किया गया था, तो भी उन पर मानव रक्त के कोई अवशेष नहीं पाए गए थे । उल्लेखनीय रूप से, मानव रक्त केवल अपीलार्थी द्वारा प्रयुक्त किए गए चाकू पर पाया गया था ।

61. **राजा** उर्फ **राजेन्द्र** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] और **जॉन पांडियन** बनाम **राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित नज़ीरों के अनुरूप अपराध के आयुध पर मानव रक्त का स्पष्टीकरण न देना अभियुक्त के विरुद्ध एक परिस्थिति का गठन करता है । अभियुक्त इस बात के लिए आबद्ध है कि वह आयुध पर मानव रक्त की मौजूदगी के संबंध में स्पष्टीकरण दे । अपीलार्थी ऐसा करने में असफल रहा है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा दिए गए निर्णयों से भी यह प्रकट नहीं होता है कि अपीलार्थी ने बरामद किए गए चाकू पर रक्त की मौजूदगी के बारे में कोई समाधानप्रद स्पष्टीकरण दिया था । हालांकि यह बात दोषिता का अवधारण करने के लिए एक निश्चायक कारक नहीं हो सकता है, किंतु एक स्पष्ट मौन से अभियोजन पक्ष के पक्षकथन को समर्थन मिलता है ।

ग. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन मृतक तुलाराम के कथन पर मृत्युकालिक कथन के रूप में विचार किया जाना

62. अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई कि निचले न्यायालयों ने अन्वेषण अधिकारी, गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14) को किए गए तुलाराम के कथन (प्रदर्श पी-40) का अवलंब लेकर गलती की है और उक्त कथन को एक 'मृत्युकालिक कथन' नहीं समझा जा सकता क्योंकि अन्वेषण अधिकारी ने तुलाराम की मानसिक स्थिति के बारे में डाक्टर से कोई प्रमाणपत्र नहीं लिया था ।

---

[1] (2015) 11 एस. सी. सी. 43.

[2] (2010) 14 एस. सी. सी. 129.

63. इस संबंध में, अन्वेषण अधिकारी, गिरीश बोहरे (अभि. सा. 14), जिसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन तुलाराम का कथन अभिलिखित किया था, के परिसाक्ष्य का निम्नलिखित भाग महत्वपूर्ण हो जाता है :–

> "यह सही है कि मैंने तुलाराम का कथन अभिलिखित करने से पूर्व डाक्टर से तुलाराम की स्थिति के बारे में अनुज्ञा नहीं ली थी । यह सही है कि कथन अभिलिखित करने के समय मुझे इस तथ्य का पता चला था कि इस मामले में एक व्यक्ति की मृत्यु हो गई है । चूंकि चिकित्सा रिपोर्ट में सिर पर पहुंची क्षति को गंभीर नहीं बताया गया था इसलिए यह कहना गलत है कि मुझे इस तथ्य का पता था कि तुलाराम के सिर पर लाठी से प्रहार किया गया था और उसकी हालत गंभीर थी । यह कहना गलत है कि तुलाराम को सिर पर पहुंची क्षति गंभीर थी और उसकी चिकित्सा रिपोर्ट में उसकी हालत गंभीर बताई गई थी । यह सही है कि तुलाराम के जीवित रहने तक मैंने उसका मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने की कार्रवाई नहीं की थी । यह कहना गलत है कि तुलाराम क्षतियां पहुंचने के पश्चात् और अपनी मृत्यु तक बोलने में असमर्थ था इसलिए मैंने उसका मृत्युकालिक कथन अभिलिखित नहीं किया था । यह कहना गलत है कि इस कारण से प्रदर्श पी-40 का कथन मिथ्या रूप से तैयार किया गया है ।"

64. इससे पहले कि हम आगे अग्रसर हों, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) को संक्षेप में दोहराना समीचीन होगा, जिसके अधीन किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो मर गया है, अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, किया गया कथन इस तथ्य के होते हुए भी सुसंगत और ग्राह्य है कि उस व्यक्ति को कथन करने के समय मृत्यु की प्रत्याशंका नहीं थी ।

65. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 पुलिस को किसी भी ऐसे व्यक्ति की मौखिक रूप से परीक्षा करने के लिए सशक्त करती है जो

अन्वेषणाधीन मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित है । पुलिस ऐसे कथन को लिखित रूप में भी लेखबद्ध कर सकती है । तो भी, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162(1) में यह आदिष्ट है कि किसी व्यक्ति द्वारा पुलिस अधिकारी को किया गया कोई कथन, यदि लेखबद्ध किया जाता है, तो उस कथन को करने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं किया जाएगा, न ही ऐसे कथन का भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 द्वारा उपबंधित रीति में साक्षी का खंडन करने के सिवाय साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जाएगा । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 की उपधारा (2) में उपधारा (1) का एक अपवाद दिया गया है क्योंकि इसमें स्पष्ट रूप से यह उपबंध किया गया है कि धारा 162 की किसी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के खंड (1) की परिधि के अंतर्गत आने वाले किसी कथन को लागू होती है । दूसरे शब्दों में, किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो मर गया है, अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, किसी पुलिस अधिकारी को किया गया कथन और जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किया गया है, साक्ष्य में ऐसे कथन का उपयोग करने के विरुद्ध इसमें अंतर्विष्ट अभिव्यक्त वर्जन होते हुए भी सुसंगत और ग्राह्य होगा । ऐसी स्थिति में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किया गया कथन एक मृत्युकालिक कथन का स्वरूप ग्रहण कर लेता है । चूंकि ऐसे मृत्युकालिक कथन को असाधारण विश्वसनीयता दी गई है इसलिए न्यायालय को उसका अवलंब लेने में अत्यंत सावधान और सतर्क रहना चाहिए । इस न्यायालय के कई सारे निर्णय हैं जो दंड प्रक्रिया संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम के उपबंधों के बीच अंतर-क्रिया को समर्थन देते हैं, जैसाकि ऊपर स्पष्ट किया गया है । (**मुकेशभाई गोपालभाई बरोत** बनाम **गुजरात राज्य**[1]; **श्री भगवान** बनाम **उत्तर प्रदेश**

---

[1] (2010) 12 एस. सी. सी. 224.

राज्य[1] और **प्रदीप बिसोई** बनाम **उड़ीसा राज्य**[2] वाले मामले देखें) ।

66. मृत्युकालिक कथन करने वाले व्यक्ति की मानसिक स्वस्थता के निर्धारण के संबंध में निस्संदेह न्यायालय का उत्तरदायित्व है कि वह यह सुनिश्चित करे कि कथन करने वाला व्यक्ति मानसिक रूप से स्वस्थ था । ऐसा इसलिए है क्योंकि मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने के लिए कोई कठोर प्रक्रिया अनिवार्य नहीं है । यदि कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी यह प्राख्यान करता है कि मृतक होश में था और कथन करने में समर्थ था, तो चिकित्सीय राय ऐसी अभिपुष्टि पर अभिभावी नहीं हो सकती, न ही डाक्टर के स्वस्थता प्रमाणन के अभाव में मृत्युकालिक कथन को अनदेखा किया जा सकता है । कथन करने वाले व्यक्ति की मानसिक स्वस्थता के प्रमाणन के पश्चात् डाक्टर की उपस्थिति में मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किए जाने की आवश्यकता केवल एक प्रज्ञा का विषय है । (**कोली चुन्नीलाल सावजी** बनाम **गुजरात राज्य**[3] वाला मामला देखें) ।

67. **लक्ष्मण** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[4] वाले मामले में संविधान न्यायपीठ ने प्राधिकारवान् रूप से यह निर्णय दिया है कि :–

> "3. .....। किंतु जहां प्रत्यक्षदर्शी साक्षी यह कथन करते हैं कि मृतक कथन करने के लिए स्वस्थ और सचेत अवस्था में था, वहां चिकित्सीय राय अभिभावी नहीं होगी, न ही यह कहा जा सकता है कि चूंकि कथन करने वाले व्यक्ति की मानसिक स्वस्थता के बारे में डाक्टर का कोई प्रमाणन नहीं है इसलिए मृत्युकालिक कथन स्वीकार्य नहीं है । मृत्युकालिक कथन मौखिक या लिखित हो सकता है और संचार का कोई भी उचित तरीका, चाहे शब्दों द्वारा

---

[1] (2013) 12 एस. सी. सी. 137.

[2] (2019) 11 एस. सी. सी. 500.

[3] (1999) 9 एस. सी. सी. 562.

[4] (2002) 6 एस. सी. सी. 710.

हो या संकेतों द्वारा या अन्यथा, पर्याप्त होगा बशर्ते संकेत सकारात्मक और निश्चित हो । तथापि, अधिकांश मामलों में ऐसे कथन मृत्यु होने से पहले मौखिक रूप से दिए जाते हैं और मजिस्ट्रेट या डाक्टर या पुलिस अधिकारी जैसे किसी व्यक्ति द्वारा लेखबद्ध किए जाते हैं.....। अनिवार्य रूप से यह आवश्यक है कि मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने वाले व्यक्ति का यह समाधान हो जाना चाहिए कि मृतक मानसिक रूप से स्वस्थ था । जहां मजिस्ट्रेट के परिसाक्ष्य द्वारा यह साबित किया जाता है कि कथन करने वाला व्यक्ति डाक्टर द्वारा जांच किए बिना भी कथन करने योग्य था, तो ऐसे कथन पर कार्रवाई की जा सकती है बशर्ते न्यायालय अंततोगत्वा इसे स्वैच्छिक और सत्य मानती हो । डाक्टर द्वारा प्रमाणन अनिवार्य रूप से एक सावधानी का नियम है और इसलिए कथन की स्वैच्छिक सत्य प्रकृति को अन्यथा सिद्ध किया जा सकता है ।"

68. इस मामले में यह मूल्यांकन करना महत्वपूर्ण है कि अन्वेषण अधिकारी ने घटना के एक दिन बाद ही तत्काल कथन को अभिलिखित किया था । उसने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि चिकित्सा रिपोर्ट में यह उल्लेख नहीं किया गया था कि कथन करने वाले तुलाराम की हालत गंभीर थी । इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि तुलाराम अपना कथन उचित रूप से करने में समर्थ था । इसके अलावा, कथन के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि कथन करने वाला तुलाराम पूरी तरह से स्वस्थ था क्योंकि उसे न केवल घटना के बारे में सही ढंग से बताया था बल्कि अपीलार्थी की भूमिका को भी स्पष्ट रूप से बताया था । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 13 और अभि. सा. 15 द्वारा की गई मरणोत्तर परीक्षा के दौरान पाई गई क्षतियों से मृतक तुलाराम के कथन की सम्यक् रूप से संपुष्टि हुई है ।

69. उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि केवल चिकित्सा प्रमाणपत्र

अभिप्राप्त न करने से यह न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उचित रूप से अभिलिखित किए गए कथन को मृत्युकालिक कथन मानने से नहीं रुकेगा ।

निष्कर्ष

70. ऊपर बताए गए कारणों से, हमारा यह समाधान हो जाता है कि अभियोजन के पक्षकथन में ऐसा कोई विरोधाभास या विसंगति नहीं है जो हमें विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण से एक भिन्न दृष्टिकोण अपनाने के लिए बाध्य करे । अत: हम इस अपील में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं, जो परिणामस्वरूप खारिज की जाती है । यदि अपीलार्थी जमानत पर है, तो उसके जमानत बंधपत्र रद्द किए जाते हैं और उसे अभ्यर्पण करने और दंडादेश की शेष अवधि को भुगतने का निदेश दिया जाता है । तथापि, यदि अपीलार्थी पहले से अभिरक्षा में है, तो उस स्थिति में वह दंडादेश की शेष अवधि को पूरा करेगा ।

71. तद्नुसार आदेश किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2024] 3 उम. नि. प. 179

पंजाब राज्य

बनाम

प्रताप सिंह वेरका

[2024 की दांडिक अपील सं. 1943]

8 जुलाई, 2024

न्यायमूर्ति सुधांशु धुलिया और न्यायमूर्ति प्रसन्ना बी. वारले

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 5) – धारा 19 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 319] – लोक सेवक के विरुद्ध अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी – शिकायतकर्ता द्वारा प्रत्यर्थी-लोक सेवक और एक अन्य सह-अभियुक्त के विरुद्ध रिश्वत लेने का अभिकथन करते हुए सतर्कता ब्यूरो में शिकायत किया जाना – सतर्कता ब्यूरो द्वारा सह-अभियुक्त को रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों गिरफ्तार किया जाना – सतर्कता ब्यूरो द्वारा फाइल किए गए आरोप पत्र में प्रत्यर्थी-लोक सेवक का नाम न होना – शिकायतकर्ता की ओर से प्रत्यर्थी को विचारण का सामना करने लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन आवेदन फाइल किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन मंजूर करते हुए प्रत्यर्थी-लोक सेवक को धारा 7/13(2) के अधीन विचारण का सामना करने के लिए समन किया जाना – प्रत्यर्थी के विरुद्ध अभियोजन चलाने के लिए सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी न लेने के आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय के आदेश को अपास्त किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – शुद्धता – भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19(1) में प्रयुक्त शब्दों और वाक्यांशों से स्वत: यह स्पष्ट है कि यह उपबंध आज्ञापक प्रकृति का है और न्यायालय किसी लोक सेवक के विरुद्ध पहले धारा 19 में दी गई प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना यहां तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन किए गए आवेदन के आधार पर भी भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7, 11, 13 और 15 के अधीन किए गए

अपराधों का संज्ञान नहीं ले सकता, अत: उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश में किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

इस मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी डा. प्रताप सिंह वेरका और एक अन्य सह-अभियुक्त अर्थात् 'विकास' के विरुद्ध पुलिस थाना सतर्कता ब्यूरो, अमृतसर में तारीख 25 अप्रैल, 2016 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7/13(2) के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह खुलासा किया गया था कि वर्तमान प्रत्यर्थी सुसंगत समय पर गुरु नानक अस्पताल में एक डाक्टर के रूप में कार्य कर रहा था जब शिकायतकर्ता ने अपने भाई का उपचार कराना चाहा था, जो जेल में था । शिकायतकर्ता ने यह अभिकथन किया कि प्रत्यर्थी ने शिकायतकर्ता से उसके भाई को अपने अस्पताल में भर्ती करने के लिए अभियुक्त-विकास के माध्यम से 10,000/- रुपए की रिश्वत ली थी, चूंकि वह अन्यथा किसी कैदी का उपचार करने के लिए अनिच्छुक था । प्रत्यर्थी ने रोगी को आगे के उपचार के लिए अस्पताल में रखने के लिए पुन: 10,000/- रुपए की मांग की और शिकायतकर्ता को वह रकम अन्य अभियुक्त अर्थात् 'विकास' को 5,000 - 5,000/- रुपए की दो किश्तों में देने के लिए कहा । तथापि, शिकायतकर्ता ने इसकी बजाय सतर्कता ब्यूरो से संपर्क किया और सतर्कता ब्यूरो के पदधारियों ने अपराधियों को पकड़ने के लिए एक जाल बिछाया । अभियुक्त-विकास (वार्ड परिचारक) को शिकायतकर्ता से 5,000/- रुपए प्राप्त करते हुए अस्पताल के पार्किंग क्षेत्र में रंगे हाथों पकड़ लिया गया । उसी दिन प्रत्यर्थी को भी उसके कार्यालय से गिरफ्तार कर लिया गया । बाद में केवल अन्य अभियुक्त-विकास के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया और वर्तमान प्रत्यर्थी को आरोप पत्र में अभियुक्त के रूप में नामित नहीं किया गया । विचारण के दौरान शिकायतकर्ता ने अभिसाक्ष्य दिया और अपनी मुख्य परीक्षा में उसने कहा कि वह प्रथम प्रत्यर्थी ही था जिसने रिश्वत की मांग की थी और उसकी ओर से ही अन्य अभियुक्त विकास ने रिश्वत की रकम प्राप्त की थी । राज्य के लोक अभियोजक की ओर से प्रत्यर्थी को अभियुक्त के रूप में समन करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन एक आवेदन प्रस्तुत किया गया, जिसे मंजूर किया गया और प्रत्यर्थी को

विचारण का सामना करने के लिए समन किया गया । अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा विचारण न्यायालय के इस आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई और उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया, चूंकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन मंजूरी नहीं ली गई थी । राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के आदेश को उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल करके चुनौती दी गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए

अभिनिर्धारित – इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि प्रत्यर्थी भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 2(ग) के अधीन परिभाषित अनुसार एक 'लोक सेवक' है । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 में धारा 7, धारा 11, धारा 13 और धारा 15 के अधीन अपराधों का, यथास्थिति, राज्य सरकार, केंद्रीय सरकार या सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना संज्ञान लेने पर रोक लगाई गई है । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19(1) में प्रयुक्त शब्दों और वाक्यांशों से स्वत: यह स्पष्ट होता है कि यह उपबंध आज्ञापक प्रकृति का है । विधि की यह सुस्थिर स्थिति है कि न्यायालय भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7, धारा 11, धारा 13 और धारा 15 के अधीन कारित किए गए अपराधों के लिए किसी लोक सेवक के विरुद्ध संज्ञान पहले भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 की अपेक्षाओं का अनुसरण किए बिना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन किए गए आवेदन पर भी नहीं ले सकता है । यहां, अभियोजन पक्ष के लिए सही प्रक्रिया दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन न्यायालय के समक्ष औपचारिक रूप से आवेदन देने से पूर्व समुचित प्रकार से भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन मंजूरी अभिप्राप्त करना होनी चाहिए थी । वास्तव में, विचारण न्यायालय को भी पूर्व मंजूरी की बात पर जोर देना चाहिए था, जो उसने नहीं किया । मंजूरी के अभाव में संपूर्ण प्रक्रिया दोषपूर्ण हो जाती है । यह न्यायालय उच्च न्यायालय के विनिश्चय से पूरी तरह सहमत हैं और इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं हैं और तद्नुसार यह अपील तद्द्वारा खारिज की जाती है । (पैरा 7, 10 और 11)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	(2016) 8 एस. सी. सी. 722 : **सुरिन्दरजीत सिंह मांद** बनाम **पंजाब राज्य** ;	10
[2007]	(2007) 14 एस. सी. सी. 783 : **पॉल वर्गिस** बनाम **केरल राज्य** ;	9
[2005]	(2005) 12 एस. सी. सी. 709 : **दिलावर सिंह** बनाम **परविन्दर सिंह** ।	8

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 1943.

2017 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 2317 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ द्वारा तारीख 2 अगस्त, 2018 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री विवेक जैन, उप महाअधिवक्ता, (सुश्री) नूपुर कुमार और अभिनव जैन

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री आर. पी. नागरथ, ज्येष्ठ अधिवक्ता, मनुज नागरथ, रक्तिम गोगोई, कार्तिकेय सिंह, शिवम शर्मा और एस. विनोद

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सुधांशु धुलिया ने दिया ।

न्या. धुलिया – पंजाब राज्य यहां पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय, जिसने प्रत्यर्थी प्रताप सिंह वेरका को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम' कहा गया है) की धारा 7/13(2) के अधीन अपराधों के लिए विचारण का सामना करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन समन किया था, के तारीख 20 मई, 2017 के आदेश को अपास्त करते हुए तारीख 2 अगस्त, 2018 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील में आया है ।

2. इस मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी डा. प्रताप सिंह

वेरका और एक अन्य सह-अभियुक्त अर्थात् 'विकास' के विरुद्ध पुलिस थाना सतर्कता ब्यूरो, अमृतसर में तारीख 25 अप्रैल, 2016 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7/13(2) के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह खुलासा किया गया था कि वर्तमान प्रत्यर्थी सुसंगत समय पर गुरु नानक अस्पताल में एक डाक्टर के रूप में कार्य कर रहा था जब शिकायतकर्ता-गुरविन्दर सिंह ने अपने भाई का उपचार कराना चाहा था, जो जेल में था । शिकायतकर्ता ने यह अभिकथन किया कि तारीख 20 अप्रैल, 2016 को प्रत्यर्थी ने शिकायतकर्ता से उसके भाई को अपने अस्पताल में भर्ती करने के लिए अभियुक्त-विकास के माध्यम से 10,000/- रुपए की रिश्वत ली थी, चूंकि वह अन्यथा किसी कैदी का उपचार करने के लिए अनिच्छुक था । पुन: तारीख 24 अप्रैल, 2016 को प्रत्यर्थी ने रोगी को आगे के उपचार के लिए अस्पताल में रखने के लिए 10,000/- रुपए की फिर मांग की और शिकायतकर्ता को वह रकम अन्य अभियुक्त अर्थात् 'विकास' को 5,000-5,000/- रुपए की दो किश्तों में देने के लिए कहा । तथापि, शिकायतकर्ता ने इसकी बजाय सतर्कता ब्यूरो से संपर्क किया और सतर्कता ब्यूरो के पदधारियों ने अपराधियों को पकड़ने के लिए एक जाल बिछाया । तारीख 25 अप्रैल, 2016 को अभियुक्त-विकास (वार्ड परिचारक) को शिकायतकर्ता से 5,000/- रुपए प्राप्त करते हुए अस्पताल के पार्किंग क्षेत्र में रंगे हाथों पकड़ लिया । उसी दिन प्रत्यर्थी को भी उसके कार्यालय से गिरफ्तार कर लिया गया ।

3. मई, 2016 में दोनों अभियुक्तों को जमानत पर छोड़ दिया गया । बाद में तारीख 22 दिसंबर, 2016 को केवल अन्य अभियुक्त-विकास के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया । वर्तमान प्रत्यर्थी को आरोप पत्र में अभियुक्त के रूप में नामित नहीं किया गया था ।

4. तथापि, विचारण के दौरान शिकायतकर्ता-गुरविन्दर सिंह ने तारीख 12 मई, 2017 को अभि. सा. 1 के रूप में अभिसाक्ष्य दिया और अपनी मुख्य परीक्षा में उसने कहा कि वह प्रथम प्रत्यर्थी ही था जिसने रिश्वत की मांग की थी और उसकी ओर से ही अन्य अभियुक्त विकास ने रिश्वत की रकम प्राप्त की थी । विचारण न्यायाल ने राज्य के लोक

अभियोजक के अनुरोध पर सुनवाई को आस्थगित कर दिया, जिसने इसके पश्चात् प्रत्यर्थी को अभियुक्त के रूप में समन करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन एक आवेदन प्रस्तुत करना चाहा । परिणामस्वरूप, राज्य द्वारा तारीख 18 मई, 2017 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन एक आवेदन दिया गया, जिसे तारीख 20 मई, 2017 को मंजूर किया गया और डा. प्रताप सिंह वेरका को विचारण का सामना करने के लिए समन किया गया ।

5. अभियुक्त-प्रत्यर्थी ने विचारण न्यायालय के इस आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी, जिसने विचारण न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया, चूंकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन मंजूरी नहीं ली गई थी ।

6. हमने अपीलार्थी-राज्य तथा प्रत्यर्थी की ओर से काउंसेलों को सुना और हमारे समक्ष सामग्री का भी परिशीलन किया ।

7. इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि प्रत्यर्थी भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 2(ग) के अधीन परिभाषित अनुसार एक 'लोक सेवक' है । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 में धारा 7, धारा 11, धारा 13 और धारा 15 के अधीन अपराधों का, यथास्थिति, राज्य सरकार, केंद्रीय सरकार या सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना संज्ञान लेने पर रोक लगाई गई है । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 का सुसंगत भाग निम्नलिखित है :–

> "**19. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी का आवश्यक होना** – (1) कोई न्यायालय धारा 7, धारा 10, धारा 11, धारा 13 और धारा 15 के अधीन दंडनीय किसी ऐसे अपराध का संज्ञान, जिसकी बाबत यह अभिकथित है कि वह लोक सेवक द्वारा किया गया है, जैसा लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, 2013 (2014 का अधिनियम संख्यांक 1) में अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय निम्नलिखित की पूर्व मंजूरी के बिना नहीं करेगा –
>
> (क) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो संघ के मामलों के

संबंध में, नियोजित है और जो अपने पद से केंद्रीय सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से हटाए जाने के सिवाय नहीं हटाया जा सकता है, केंद्रीय सरकार ;

(ख) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो राज्य के मामलों के संबंध में, नियोजित है और जो अपने पद से राज्य सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से हटाए जाने के सिवाय नहीं हटाया जा सकता है, केंद्रीय सरकार ;

(ग) किसी अन्य व्यक्ति की दशा में, उसे उसके पद से हटाने के लिए, सक्षम प्राधिकारी ।"

8. लोक अभियोजक द्वारा दिए गए धारा 319 (दंड प्रक्रिया संहिता) के अधीन आवेदन को मंजूर करते हुए विचारण न्यायालय ने मंजूरी के प्रश्न पर विचार नहीं किया । इस न्यायालय के समक्ष पंजाब राज्य का आधार यह है कि इस मंजूरी की कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि संज्ञान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन स्वयमेव न्यायालय में लिया गया था । **दिलावर सिंह** बनाम **परविन्दर सिंह**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के उपबंधों के साथ-साथ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के उपबंधों को भी स्पष्ट करते हुए निम्नलिखित कहा था :–

"इस धारा में धारा 7, धारा 10, धारा 11, धारा 13 और धारा 15 के अधीन दंडनीय किसी अपराध, जिसकी बाबत यह अभिकथित है कि वह लोक सेवक द्वारा किया गया है, का संज्ञान इसकी उपधारा के खंड (क) से (ग) में प्रगणित सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के सिवाय लेने की न्यायालय की शक्ति पर पूर्ण रोक लगाई गई है । यदि उपधारा को समग्र रूप से पढ़ा जाए, तो इससे स्पष्ट रूप से दर्शित होगा कि अभियोजन के लिए मंजूरी किसी विनिर्दिष्ट अभियुक्त की बाबत दी जानी होती है और मंजूरी दिए जाने के पश्चात् ही न्यायालय धारा 17, धारा 10, धारा 11, धारा 13 और धारा 15 के अधीन दंडनीय किसी ऐसे अपराध का संज्ञान, जिसकी

[1] (2005) 12 एस. सी. सी. 709.

बाबत यह अभिकथित है कि वह लोक सेवक द्वारा किया गया है, लेने के लिए सक्षम होता है .....।" (पैरा 4)

इसके अतिरिक्त, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 और दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन संज्ञान लेने वाले उपबंधों के बीच संबंध के विषय में इस न्यायालय ने विधि को निम्नलिखित शब्दों में अधिकथित किया :–

"..... अधिनियम की धारा 19 के उपबंधों का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 या 319 में अंतर्विष्ट साधारण उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । कोई विशेष न्यायाधीश भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अधीन अपराध का विचारण करते समय किसी अन्य व्यक्ति को समन नहीं कर सकता और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन तात्पर्यित शक्ति का प्रयोग करते हुए उसके विरुद्ध तब तक कार्यवाही नहीं कर सकता यदि ऐसे किसी व्यक्ति का अभियोजन करने के लिए समुचित प्राधिकारी द्वारा कोई मंजूरी प्रदान नहीं की गई है क्योंकि उस व्यक्ति के संबंध में अपराध का संज्ञान लेने के लिए मंजूरी का विद्यमान होना अत्यावश्यक है ।" (पैरा 8)

9. **पॉल वर्गिस** बनाम **केरल राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने पुन: इस उपबंध को दोहराया और यह अभिनिर्धारित किया :–

"जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा दिलावर सिंह [(2005) 12 एस. सी. सी. 709 = (2006) 1 एस. सी. सी. (क्रि.) 727] वाले मामले में जो कहा गया है उसको ध्यान में रखते हुए ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके न्यायोचित किया था कि संहिता की धारा 319 को अधिनियम की धारा 19 पर अधिमान/प्राथमिकता मिलनी चाहिए, और यह विषय समाप्त हो जाता है ।" (पैरा 4)

10. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19(1) में प्रयुक्त शब्दों और वाक्यांशों से स्वत: यह स्पष्ट होता है कि यह उपबंध आज्ञापक

---

[1] (2007) 14 एस. सी. सी. 783.

प्रकृति का है । **सुरिन्दरजीत सिंह मांद** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में यद्यपि यह न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी के मुद्दे पर विचार कर रहा था किंतु ऐसा करते समय उच्च न्यायालय ने ऊपर चर्चा किए गए दो मामलों सहित विभिन्न निर्णयों को निर्दिष्ट किया और पूर्व मंजूरी के उपबंध पर बल दिया :–

> "इस न्यायालय द्वारा घोषित विधि इसमें ऊपरनिर्दिष्ट निर्णयों से प्रकट होती है जिससे किसी संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती है कि संहिता की धारा 197 के अधीन और/या किसी विशेष कानून (जैसा कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन अभिधारणा की गई है) के अधीन आज्ञापक मंजूरी किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा किसी अपराध (चाहे दंड संहिता के अधीन हो, या संबंधित विशेष कानूनी अधिनियमिति के अधीन हो) का संज्ञान लेने से पूर्व एक आवश्यक पूर्वापेक्षा होगी । मंजूरी अभिप्राप्त करने की प्रक्रिया संहिता के उपबंधों द्वारा और/या विशेष अधिनियमिति के अधीन आदेशित अनुसार शासित होगी । संहिता की धारा 197 में दिए गए शब्द यह हैं, '.....कोई भी न्यायालय ऐसे अपराध का संज्ञान पूर्व मंजूरी से ही करेगा.....।'
>
> इसी प्रकार, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 की उपधारा (1) में यह उपबंधित है –
>
> '19. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी का आवश्यक होना – (1) कोई न्यायालय पूर्व मंजूरी के बिना ..... संज्ञान नहीं लेगा .....।'
>
> यह आदेश स्पष्ट और असंदिग्ध है कि कोई न्यायालय मंजूरी के बिना संज्ञान 'नहीं लेगा' । इसको और आगे विस्तार से स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है । अत: कोई न्यायालय समुचित प्राधिकारी की मंजूरी के बिना संज्ञान ले ही नहीं सकता । इसको दृष्टिगत करते हुए, हम प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई इस दूसरी दलील में कोई सार नहीं पाते हैं कि जहां संहिता की धारा 319 के अधीन संज्ञान ले लिया जाता है, वहां या

[1] (2016) 8 एस. सी. सी. 722.

तो संहिता की धारा 197 के अधीन (या संबंधित विशेष अधिनियमिति के अधीन) मंजूरी एक आज्ञापक पूर्वापेक्षा नहीं है ।"

11. विधि की यह सुस्थिर स्थिति है कि न्यायालय भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7, धारा 11, धारा 13 और धारा 15 के अधीन कारित किए गए अपराधों के लिए किसी लोक सेवक के विरुद्ध संज्ञान पहले भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 की अपेक्षाओं का अनुसरण किए बिना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन किए गए आवेदन पर भी नहीं ले सकता है । यहां, अभियोजन पक्ष के लिए सही प्रक्रिया दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन न्यायालय के समक्ष औपचारिक रूप से आवेदन देने से पूर्व समुचित प्रकार से भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन मंजूरी अभिप्राप्त करना होनी चाहिए थी । वास्तव में, विचारण न्यायालय को भी पूर्व मंजूरी की बात पर जोर देना चाहिए था, जो उसने नहीं किया । मंजूरी के अभाव में संपूर्ण प्रक्रिया दोषपूर्ण हो जाती है । हम उच्च न्यायालय के विनिश्चय से पूरी तरह से सहमत हैं और इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं हैं और तद्नुसार यह अपील तद्द्वारा खारिज की जाती है । लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का भी निपटारा हो जाएगा ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2024] 3 उम. नि. प. 189

लाल मोहम्मद मंजूर अंसारी

बनाम

गुजरात राज्य

[2023 की दांडिक अपील सं. 3524]

8 जुलाई, 2024

न्यायमूर्ति अभय एस. ओका और न्यायमूर्ति उज्जल भुयन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 – हत्या – दोषसिद्धि – एक कमरे में एक साथ रह रहे अभियुक्त-अपीलार्थी और मृतक के बीच टेप-रिकार्डर बजाने को लेकर कहा-सुनी होना और दोनों के बीच झगड़ा होने पर अभियुक्त द्वारा मृतक पर चाकू से हमला करके क्षतियां कारित किया जाना – क्षतियों के कारण मृतक की मृत्यु हो जाना – अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से अपने नियोजक जिसके पास उसने केवल पांच माह काम किया था, को फोन करके अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति किया जाना – मृतक द्वारा अभिकथित रूप से एक अभियोजन साक्षी के समक्ष मृत्युकालिक कथन किया जाना – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों सहित कुछ अभियोजन साक्षी पक्षद्रोही हो जाना – विचारण न्यायालय द्वारा उनके परिसाक्ष्य के कतिपय भागों का अवलंब लेते हुए अभियुक्तअपीलार्थी को दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – प्रसामान्यत: कोई अभियुक्त उसके द्वारा कारित किए गए अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति उस व्यक्ति के समक्ष करेगा जिस पर उसका गहरा विश्वास हो और इस बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि अभियुक्त द्वारा जिस व्यक्ति को फोन करके अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति की गई हो उसके पास उसने केवल पांच माह काम किया था और पुलिस द्वारा उस फोन नंबर की जांच तक नहीं की गई हो जिससे फोन किया गया था और इसके अतिरिक्त पक्षद्रोही हो गए अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर ऐसा कुछ निकलकर न आता हो

जिसके आधार पर अभियुक्त-अपीलार्थी को मृतक की हत्या के अपराध से संपृक्त किया जा सके, वहां अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अभियुक्त-अपीलार्थी और मृतक भाड़े पर लिए गए एक कमरे में एक साथ रह रहे थे । उनके बीच अभिकथित रूप से टेप-रिकार्डर बजाने को लेकर विवाद हुआ और इस विवाद के परिणामस्वरूप कहा-सुनी हुई जिसमें अभियुक्तअपीलार्थी ने मृतक पर हमला कर दिया । मृतक को पहुंची क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । अभियोजन पक्ष के अनुसार अभियुक्त द्वारा अपने नियोजक, जिसकी दुकान पर वह काम करता था, को फोन करके मृतक की हत्या करने की न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी । इसके अतिरिक्त मृतक ने भी एक साक्षी को अभिकथित रूप से मृत्युकालिक कथन किया था । यद्यपि विचारण के दौरान इन अभियोजन साक्षियों को पक्षद्रोही घोषित किया गया था, तो भी विचारण न्यायालय ने साक्षियों के पररिसाक्ष्य के कतिपय भागों का अवलंब लिया और अभियुक्त को मृतक की हत्या करने के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अपील में उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि की गई । अभियुक्त द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए

अभिनिर्धारित – मानवीय आचरण का प्रसामान्य नियम है कि कोई व्यक्ति गंभीर अपराध कारित करने की संस्वीकृति उस व्यक्ति को करेगा जिस पर उसका गहरा विश्वास हो । अपीलार्थी ने अभि. सा. 9 की दुकान में वर्ष 2004 में केवल पांच माह काम किया था । अपीलार्थी अन्यथा अभि. सा. 19 को नहीं जानता था । अत: यह अस्वाभाविक है कि अपीलार्थी उसे फोन करके संस्वीकृति करता । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 19 ने कथन किया था कि अपीलार्थी ने उसे फोन पर संस्वीकृति करने के पश्चात् केंद्रीय बस अड्डे पर बुलाया था । यहां तक कि यह आचरण भी बिल्कुल अस्वाभाविक है । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 19 ने स्वीकृत रूप से पुलिस को वह टेलीफोन नंबर नहीं बताया था जिससे उसे अभिकथित रूप से अपीलार्थी से कॉल प्राप्त हुई थी । जैसा

कि अभि. सा. 25, अन्वेषण अधिकारी के परिसाक्ष्य से देखा जा सकता है, उस फोन नंबर का अभिनिश्चय करने के लिए कोई अन्वेषण नहीं किया गया था जिस पर अभि. सा. 19 को अपीलार्थी से कॉल प्राप्त हुई थी और वह फोन नंबर जिससे अभि. सा. 19 ने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को कॉल की थी । अभियोजन पक्ष के लिए इन पहलुओं पर साक्ष्य एकत्रित करना और इसे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक था । यद्यपि अभि. सा. 19 ने कथन किया था कि अपीलार्थी ने पुन: केंद्रीय बस अड्डे पर पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा की मौजूदगी में न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी, तो भी अभियोजन पक्ष ने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा की साक्षी के रूप में परीक्षा नहीं की थी । अभि. सा. 25 के परिसाक्ष्य के अनुसार, अन्वेषण के दौरान पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा का कथन अभिलिखित नहीं किया गया था । किसी भी स्थिति में, अपीलार्थी द्वारा पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा के समक्ष की गई अभिकथित संस्वीकृति को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 25 को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध साबित नहीं किया जा सकता । अत: न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के संबंध में अभियोजन पक्ष के साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता । अभि. सा. 19 ने कथन किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा और दो से तीन अन्य कांस्टेबल अपीलार्थी को ले गए थे । इस प्रकार, वह उप निरीक्षक मिश्रा था जिसने अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया था । अत: पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा एक महत्वपूर्ण साक्षी था । एक महत्वपूर्ण अभियोजन साक्षी को न्यायालय से विधारित कर लिया गया था । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया गया है कि उप निरीक्षक मिश्रा ने कोई ऐसा शासकीय अभिलेख बनाया था जिससे दर्शित होता हो कि उसने अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया था । अभि. सा. 25, अन्वेषण अधिकारी ने कथन किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा और अन्य तीन पुलिस कार्मिक अपीलार्थी को बाजार में ढूंढ रहे थे क्योंकि वह वहां काम करता था । उसने यह भी उल्लेख किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को पुलिस थाने में पेश किया था और उस दिन 9.30 बजे अपराह्न में गिरफ्तार किया गया दर्शाया गया था । इस प्रकार, अभि. सा. 25 ने यह नहीं कहा कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा अभि. सा. 19 से फोन कॉल

प्राप्त होने के उपरांत केंद्रीय बस अड्डे पर गया था और उसने बस अड्डे पर अपीलार्थी को पकड़ा था । अभि. सा. 25 का बयान पूर्णतया भिन्न है । अभि. सा. 25 ने प्रतिपरीक्षा में विनिर्दिष्ट रूप से स्वीकार किया कि उसने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा का कथन अभिलिखित नहीं किया था । उसने कथन किया कि उसने अपीलार्थी को तब गिरफ्तार किया था जब पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने उसे पेश किया था । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 25 ने प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि गिरफ्तारी पंचनामा में यह उल्लिखित नहीं है कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को उसके समक्ष पेश किया था । उसने कथन किया कि उसे कोई जानकारी नहीं है कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को किस समय, किसकी मौजूदगी में और किस स्थान से गिरफ्तार किया था । आगे प्रतिपरीक्षा में उसने कथन किया कि वह इस बात से अवगत नहीं था कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा अपीलार्थी के नियोजक की मौजूदगी में केंद्रीय बस अड्डे पर अपीलार्थी से मिला था । उसने इस बात से इनकार किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को अभिरक्षा में रखा था और अपीलार्थी को उसके समक्ष पेश किया था । इस प्रकार, अभि. सा. 19 के इस परिसाक्ष्य पर विश्वास करना असंभव है कि उसने अपीलार्थी द्वारा न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की बात पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को बताई थी । इसके अतिरिक्त, जिस रीति में अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया गया था, वह अत्यंत संदेहास्पद हो जाती है क्योंकि यहां तक कि गिरफ्तारी पंचनामा में भी यह अभिलिखित नहीं है कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को गिरफ्तार किया था । इस तथ्य के अतिरिक्त कि इस बात पर विश्वास करना बहुत मुश्किल है कि अपीलार्थी ने अभि. सा. 19 के समक्ष संस्वीकृति की थी, अभि. सा. 19 के अगले भाग से उसका परिसाक्ष्य अत्यंत संदेहास्पद हो जाता है क्योंकि अभियोजन पक्ष ने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को न्यायालय से विधारित कर लिया था । अत: अभि. सा. 19 के साक्ष्य पर विश्वास करना संभव नहीं है । अब, मृतक द्वारा अभि. सा. 24 के समक्ष किए गए मृत्युकालिक कथन की कहानी पर आते हैं । अभि. सा. 24 ने मुख्य परीक्षा में कथन किया कि यह सुनने के पश्चात् कि उसका मित्र (मृतक) क्षतिग्रस्त हो गया है, वह घटनास्थल पर गया और पाया कि मृतक पूरी

तरह रक्त से सना था और उसने बताया कि अपीलार्थी ने क्षतियां पहुंचाई हैं । विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसने पुलिस के समक्ष ऐसा कोई कथन किए जाने की बात से इनकार किया । विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी का उसके पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए पूर्वतन कथन से सामना कराया गया था । इस प्रकार, इस साक्षी ने कथन किया था कि उसने पुलिस को वह कथन नहीं किया था जिस कथन से उसका सामना कराया गया है । अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसने स्वीकार किया कि जब उसने लिम्बयात पुलिस थाने में सूचित किया था, तो एक पुलिसकर्मी एक आटो-रिक्शा में आया था । पुलिसकर्मी के साथ दो या तीन अन्य व्यक्ति मृतक को नीचे लाए और उसे आटो-रिक्शा में डाला । इस पुलिस कार्मिक और अन्य दो से तीन व्यक्तियों की साक्षियों के रूप में परीक्षा नहीं की गई थी । उसने कथन किया कि उस समय मृतक बेहोश था । इसलिए जब मृतक को आटो-रिक्शा में डाला गया था, उस समय वह बोलने की स्थिति में नहीं था । इस प्रक्रम पर, अभि. सा. 3, जो शिकायतकर्ता और अपीलार्थी का मकान-मालिक था, के परिसाक्ष्य का भी उल्लेख किया जा सकता है । उसने कथन किया कि जब वह उस स्थान पर गया जहां मृतक भारी रक्तस्राव की दशा में पड़ा हुआ था, तो मृतक ने उसे कुछ नहीं बताया था और जब उसके द्वारा मृतक को आटो-रिक्शा से अस्पताल ले जाया गया था उस समय कोई बातचीत नहीं हुई थी । अतः अभि. सा. 24 को किए गए मृत्युकालिक कथन के संबंध में अभियोजन पक्ष की कहानी से कतई विश्वास प्रेरित नहीं होता है । अतः पक्षद्रोही अभियोजन साक्षियों (अभि. सा. 3 से अभि. सा. 9) के साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् हमारा निष्कर्ष है कि साक्ष्य में ऐसा कुछ नहीं है जिसका अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी को मृतक की हत्या से संपृक्त करने के लिए अवलंब लिया जा सके । इस प्रकार, उपरोक्त कारणों से अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है । (पैरा 7, 8, 9, 10, 14 और 15)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2023 की दांडिक अपील सं. 3524.

2005 की दांडिक अपील सं. 2436 में गुजरात उच्च न्यायालय, अहमदाबाद द्वारा तारीख 5 मार्च, 2013 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री रजत भारद्वाज, मोहम्मद अइनुल अंसारी, मनोज कुमार गोयल, (सुश्री) अंकिता एम. भारद्वाज, ऋषभ गोयल और कौस्तुभ खन्ना

प्रत्यर्थी की ओर से — सुश्री स्वाति घिलडियाल और सुश्री देवयानी भट्ट

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय एस. ओका ने दिया ।

न्या. ओका – अपीलार्थी-अभियुक्त को सेशन न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थी की दोषसिद्धि की पुष्टि की । अपीलार्थी को आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है ।

तथ्यात्मक पहलू

2. अपीलार्थी ने किशोर होने का अभिवाक् किया । इस न्यायालय ने तारीख 10 अप्रैल, 2023 के आदेश द्वारा किशोरता के अभिवाक् की जांच करने के लिए विचारण न्यायालय को निदेश दिया । तद्नुसार, विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा तारीख 8 अप्रैल, 2023 को एक आदेश किया गया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी अपराध कारित करने की तारीख को किशोर नहीं था । उसके पश्चात् इजाजत दी गई और अपील को गुणागुण के आधार पर सुना गया ।

3. घटना तारीख 6 सितंबर, 2004 को घटी थी । अभियुक्त अभि. सा. 3 अलीमुद्दीन अमीरुद्दीन शेख द्वारा उसे भाड़े पर दिए गए कमरा सं. 3 में रह रहा था । अभियोजन पक्ष के अनुसार, मृतक मोहम्मद अख्तर गफूर अंसारी भी अपीलार्थी के साथ कमरा सं. 3 में रह रहा था ।

उनके बीच संगीत बजाने के बारे में एक विवाद हुआ । इस विवाद के परिणामस्वरूप कहा-सुनी हुई जिसमें अपीलार्थी ने मृतक पर हमला कर दिया । मृतक को पहुंची क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । अभियोजन का पक्षकथन प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अभि. सा. 3 से अभि. सा. 9 के साक्ष्य, अपीलार्थी द्वारा अभि. सा. 19 मोहम्मद अफरोज़ को की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति और मृतक द्वारा अभि. सा. 24 मोहम्मद रफीक को किए गए मृत्युकालिक कथन पर आधारित है । यद्यपि अभि. सा. 3 से अभि. सा. 9 को पक्षद्रोही घोषित किया गया था, तो भी विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने उनके परिसाक्ष्य के कतिपय भागों का अवलंब लिया । उच्च न्यायालय ने अभि. सा. 19 और अभि. सा. 24 के परिसाक्ष्य पर विश्वास किया ।

दलीलें

4. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने हमारा ध्यान पक्षद्रोही प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य की ओर दिलाया । उच्च न्यायालय के निष्कर्षों का उल्लेख करते हुए उन्होंने दलील दी कि पहली बात तो यह कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा किए गए कतिपय अप्रासंगिक कथनों का अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब नहीं लिया जा सकता था । दूसरी बात यह कि उक्त साक्षियों के परिसाक्ष्य से अभियोजन पक्ष का समर्थन नहीं होता है । अभि. सा. 19 के साक्ष्य का उल्लेख करते हुए उन्होंने दलील दी कि इस साक्षी के अनुसार वह अपीलार्थी का नियोजक था । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, अपीलार्थी ने उसे घटना की तारीख को 3.30 बजे अपराह्न में एक फोन कॉल की और उसे सूचित किया कि उसने अपने कमरे में साथ रहने वाले (रूममेट) की हत्या कर दी है । उन्होंने उल्लेख किया कि उस फोन के बारे में कोई अन्वेषण नहीं किया गया था जिससे यह कॉल की गई थी । इसके अतिरिक्त, उन्होंने उल्लेख किया कि यद्यपि अभि. सा. 19 का दावा है कि उसने इस संस्वीकृति के बारे में लिम्बायत पुलिस थाने के पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को सूचित किया था और उसे केंद्रीय बस अड्डे पर बुलाया था, तो भी पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा की साक्षी के रूप में परीक्षा नहीं की गई थी । उन्होंने उल्लेख किया कि अभियोजन के

पक्षकथन के अनुसार यहां तक कि केंद्रीय बस अड्डे पर भी अपीलार्थी ने अभिकथित रूप से पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा की मौजूदगी में दूसरी न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी । अत: पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा की परीक्षा करने में लोक अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक हो जाता है । उन्होंने उल्लेख किया कि अभियोजन का पक्षकथन यह था कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने ही अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया था और अभि. सा. 25 के समक्ष प्रस्तुत किया था । अभि. सा. 25, अन्वेषण अधिकारी का बयान संदेहास्पद प्रतीत होता है । उन्होंने दलील दी कि अभियोजन के संपूर्ण पक्षकथन पर विश्वास नहीं किया जा सकता ।

5. राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि यद्यपि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी पक्षद्रोही घोषित किए गए थे, तो भी उनके परिसाक्ष्य को पूर्ण रूप से त्यक्त नहीं किया जा सकता । उन्होंने दलील दी कि उक्त साक्षियों के साक्ष्य से अभिलेख पर ये तथ्य लाए गए हैं कि मृतक की हत्या के समय वह अभि. सा. 3 के स्वामित्व वाले भवन के कमरा सं. 3 में अपीलार्थी के साथ रह रहा था । विद्वान् काउंसेल ने अभि. सा. 4 (स्लेहाबानू) के साक्ष्य का उल्लेख किया । विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी ने कथन किया था कि उसने पहले अपीलार्थी को लॉबी से सीढ़ियों की ओर भागते हुए देखा और उसके तुरंत पश्चात् मृतक को भारी रक्तस्राव की दशा में पाया । उन्होंने उल्लेख किया कि इस साक्षी के साक्ष्य से साबित होता है कि अपीलार्थी और मृतक झगड़ रहे थे । इस साक्षी ने अपीलार्थी के कमरे से "बचाओ, बचाओ" के चिल्लाने की आवाज सुनी थी । विद्वान् काउंसेल ने यह भी उल्लेख किया कि यहां तक कि अभि. सा. 7 नज़मा के साक्ष्य से भी अभिलेख पर यह लाया गया है कि उसने मृतक से भवन की गैलरी में रक्तस्राव होते हुए देखा था और उस समय "बचाओ, बचाओ" चिल्ला रहा था । इस साक्षी ने अपीलार्थी को भवन से नीचे आते हुए देखा था और अपनी कमीज से रक्त के धब्बों को साफ करते हुए देखा गया था । विद्वान् काउंसेल ने उल्लेख किया कि यहां तक कि अभि. सा. 14 सगुफा परवीन के साक्ष्य से भी दर्शित होता है कि मृतक की हत्या कमरा सं. 3 में की गई थी जहां मृतक और

अपीलार्थी एक साथ रह रहे थे । उन्होंने यह भी दलील दी कि अभि. सा. 9 अपीलार्थी का नियोजक था, इसीलिए यह स्वाभाविक था कि अपीलार्थी अपनी दोषिता के बारे में अपने नियोजक को बताने पर भरोसा करेगा । उन्होंने दलील दी कि अभि. सा. 19, जिसको न्यायिकेत्तर संस्वीकृति करने की बात साबित होती है, के परिसाक्ष्य को त्यक्त करने का कोई कारण नहीं है । इसी प्रकार, अभि. सा. 24 के परिसाक्ष्य को त्यक्त करने का कोई कारण नहीं है जिसके समक्ष मृतक द्वारा यह मृत्युकालिक कथन किया गया था कि अपीलार्थी ने उसकी हत्या की है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि आक्षेपित निर्णयों, जिनमें अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य का विस्तारपूर्वक विश्लेषण करने के पश्चात् विस्तृत निष्कर्ष अंतर्विष्ट हैं, में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है ।

दलीलों पर विचार

6. हमने अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्य की बारीकी से समीक्षा की है । प्रथमत:, हम अभि. सा. 19 के साक्ष्य पर विचार करेंगे, जिसने दावा किया है कि मृतक ने उसके समक्ष एक न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी । यद्यपि इस साक्षी को पक्षद्रोही घोषित किया गया था, तो भी अभियोजन पक्ष ने उसके परिसाक्ष्य के एक भाग का अवलंब लिया । हम अभि. सा. 19 द्वारा अपनी मुख्य परीक्षा में किए गए कथनों, उसे पक्षद्रोही घोषित किए जाने के पश्चात् विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा की गई उसकी प्रतिपरीक्षा में और अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसके द्वारा किए गए कथनों का संक्षिप्त सार दे रहे हैं । उसके बयान का सारांश निम्नलिखित है :–

(क) अपीलार्थी ने उसके वस्त्र भंडार में वर्ष 2004 में सितंबर, 2004 के पहले सप्ताह तक पांच माह काम किया था ;

(ख) सितंबर, 2004 में, उसे लगभग 3.30 बजे अपराह्न में अपीलार्थी से एक कॉल प्राप्त हुई और फोन पर अपीलार्थी ने उसे सूचित किया कि उसने अपने रूम पार्टनर को मार दिया है ;

(ग) अपीलार्थी ने अभि. सा. 19 को सूरत रेलवे स्टेशन के निकट केंद्रीय बस अड्डे पर बुलाया ;

घ) उसके पश्चात्, अभि. सा. 19 ने लिम्बायत पुलिस थाने के पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को फोन किया और उसे केंद्रीय बस अड्डे पर बुलाया ;

(ङ) पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा केंद्रीय बस अड्डे पर आया, जहां वे अपीलार्थी से मिले । अपीलार्थी ने पुन: दोहराया कि उसके और उसके रूम पार्टनर के बीच एक टेप रिकॉर्डर को बजाने को लेकर झगड़ा हुआ था, और उसने अपने रूम पार्टनर की हत्या कर दी ;

(च) अभि. सा. 19 ने कथन किया कि यद्यपि अपीलार्थी ने उसे उस व्यक्ति का नाम बताया था जिसकी हत्या की गई थी, किंतु उसे वह नाम स्मरण नहीं है ;

(छ) लोक अभियोजक द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसका सामना दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन के सुसंगत भाग से कराया गया था । उसने कथन करने की बात स्वीकार की थी । इस साक्षी ने कथन किया कि अपीलार्थी ने उसे बताया था कि उसने मोहम्मद अख्तर गफूर अंसारी की हत्या की थी ;

(ज) अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसने कथन किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को अपने साथ लिया और उसके साथ दो या तीन पुलिसकर्मी थे ;

(झ) उसे स्मरण नहीं है कि क्या उसने पुलिस को वह फोन नंबर बताया था जिससे उसने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को फोन किया था ; और

(ञ) उसने स्वीकार किया कि उसने वह फोन नंबर नहीं बताया था जिससे अपीलार्थी ने उसे कॉल की थी ।

7. मानवीय आचरण का प्रसामान्य नियम है कि कोई व्यक्ति गंभीर अपराध कारित करने की संस्वीकृति उस व्यक्ति को करेगा जिस पर उसे गहरा विश्वास हो । अपीलार्थी ने अभि. सा. 9 की दुकान में वर्ष 2004 में केवल पांच माह काम किया था । अपीलार्थी अन्यथा अभि. सा. 19 को नहीं जानता था । अत: यह अस्वाभाविक है कि अपीलार्थी उसे फोन करके संस्वीकृति करता । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 19 ने कथन किया था कि अपीलार्थी ने उसे फोन पर संस्वीकृति करने के पश्चात् केंद्रीय बस अड्डे पर बुलाया था । यहां तक कि यह आचरण भी बिल्कुल अस्वाभाविक है । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 19 ने स्वीकृत रूप से पुलिस को वह टेलीफोन नंबर नहीं बताया था जिससे उसे अभिकथित रूप से अपीलार्थी से कॉल प्राप्त हुई थी । जैसा कि अभि. सा. 25, अन्वेषण अधिकारी के परिसाक्ष्य से देखा जा सकता है, उस फोन नंबर का अभिनिश्चय करने के लिए कोई अन्वेषण नहीं किया गया था जिस पर अभि. सा. 19 को अपीलार्थी से कॉल प्राप्त हुई थी और वह फोन नंबर जिससे अभि. सा. 19 ने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को कॉल की थी । अभियोजन पक्ष के लिए इन पहलुओं पर साक्ष्य एकत्रित करना और इसे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक था । यद्यपि अभि. सा. 19 ने कथन किया था कि अपीलार्थी ने पुन: केंद्रीय बस अड्डे पर पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा की मौजूदगी में न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी, तो भी अभियोजन पक्ष ने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा की साक्षी के रूप में परीक्षा नहीं की थी । अभि. सा. 25 के परिसाक्ष्य के अनुसार, अन्वेषण के दौरान पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा का कथन अभिलिखित नहीं किया गया था । किसी भी स्थिति में, अपीलार्थी द्वारा पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा के समक्ष की गई अभिकथित संस्वीकृति को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 25 को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध साबित नहीं किया जा सकता । अत: न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के संबंध में अभियोजन पक्ष के साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता ।

8. अभि. सा. 19 ने कथन किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा और दो से तीन अन्य कांस्टेबल अपीलार्थी को ले गए थे । इस प्रकार, वह उप निरीक्षक मिश्रा था जिसने अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया था । अत: पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा एक महत्वपूर्ण साक्षी था । एक महत्वपूर्ण अभियोजन साक्षी को न्यायालय से विधारित कर लिया गया था । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया गया है कि उप निरीक्षक मिश्रा ने कोई ऐसा शासकीय अभिलेख बनाया था जिससे दर्शित होता हो कि उसने अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया था । अभि. सा. 25, अन्वेषण अधिकारी ने कथन किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा और अन्य तीन पुलिस कार्मिक अपीलार्थी को बाजार में ढूंढ़ रहे थे क्योंकि वह वहां काम करता था । उसने यह भी उल्लेख किया कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को पुलिस थाने में पेश किया था और उस दिन 9.30 बजे अपराह्न में गिरफ्तार किया गया दर्शाया गया था । इस प्रकार, अभि. सा. 25 ने यह नहीं कहा कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा अभि. सा. 19 से फोन कॉल प्राप्त होने के उपरांत केंद्रीय बस अड्डे पर गया था और उसने बस अड्डे पर अपीलार्थी को पकड़ा था । अभि. सा. 25 का बयान पूर्णतया भिन्न है । अभि. सा. 25 ने प्रतिपरीक्षा में विनिर्दिष्ट रूप से स्वीकार किया कि उसने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा का कथन अभिलिखित नहीं किया था । उसने कथन किया कि उसने अपीलार्थी को तब गिरफ्तार किया था जब पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने उसे पेश किया था । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 25 ने प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया कि गिरफ्तारी पंचनामा में यह उल्लिखित नहीं है कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को उसके समक्ष पेश किया था । उसने कथन किया कि उसे कोई जानकारी नहीं है कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को किस समय, किसकी मौजूदगी में और किस स्थान से गिरफ्तार किया था । आगे प्रतिपरीक्षा में उसने कथन किया कि वह इस बात से अवगत नहीं था कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा अपीलार्थी के नियोजक की मौजूदगी में केंद्रीय बस अड्डे पर अपीलार्थी से मिला था । उसने इस बात से इनकार किया कि

पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को अभिरक्षा में रखा था और अपीलार्थी को उसके समक्ष पेश किया था । इस प्रकार, अभि. सा. 19 के इस परिसाक्ष्य पर विश्वास करना असंभव है कि उसने अपीलार्थी द्वारा न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की बात पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को बताई थी । इसके अतिरिक्त, जिस रीति में अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया गया था, वह अत्यंत संदेहास्पद हो जाती है क्योंकि यहां तक कि गिरफ्तारी पंचनामा में भी यह अभिलिखित नहीं है कि पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा ने अपीलार्थी को गिरफ्तार किया था । इस तथ्य के अतिरिक्त कि इस बात पर विश्वास करना बहुत मुश्किल है कि अपीलार्थी ने अभि. सा. 19 के समक्ष संस्वीकृति की थी, अभि. सा. 19 के अगले भाग से उसका परिसाक्ष्य अत्यंत संदेहास्पद हो जाता है क्योंकि अभियोजन पक्ष ने पुलिस उप निरीक्षक मिश्रा को न्यायालय से विधारित कर लिया था । अत: अभि. सा. 19 के साक्ष्य पर विश्वास करना संभव नहीं है ।

9. अब, मृतक द्वारा अभि. सा. 24 के समक्ष किए गए मृत्युकालिक कथन की कहानी पर आते हैं । अभि. सा. 24 ने मुख्य परीक्षा में कथन किया कि यह सुनने के पश्चात् कि उसका मित्र (मृतक) क्षतिग्रस्त हो गया है, वह घटनास्थल पर गया और पाया कि मृतक पूरी तरह रक्त से सना था और उसने बताया कि अपीलार्थी ने क्षतियां पहुंचाई हैं । विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसने पुलिस के समक्ष ऐसा कोई कथन किए जाने की बात से इनकार किया । विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी का उसके पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए पूर्वतन कथन से सामना कराया गया था । प्रतिपरीक्षा का सुसंगत भाग इस प्रकार है :–

> "ऐसा नहीं हुआ था और मेरे द्वारा पुलिस के समक्ष मेरे कथन में यह नहीं कहा था कि ....., अत: जब मैं सीढ़ियों से नीचे आ रहा था, मैंने मोहम्मद अख्तर के साथ रहने वाले लाल मोहम्मद को लिम्बयात पुलिस थाने की ओर सड़क पर भागते हुए देखा ।

..... इसलिए मैंने रिक्शा बुलाया और मकान मालिक अलीमुद्दीन शेख और मैं मोहम्मद अख्तर को रिक्शा में उपचार के लिए लेकर गए और उस समय मैंने देखा कि मोहम्मद अख्तर को गले और सिर पर क्षतियां पहुंची थीं और लगातार रक्तस्राव हो रहा था । उस समय मैंने मोहम्मद अख्तर से पूछा और उसने मुझे यह बताया, मेरा मेरे साथ रहने वाले लाल मोहम्मद के साथ टेप रिकॉर्डर बजाने के संबंध में कहा-सुनी और झगड़ा हो गया था और इसलिए लाल मोहम्मद ने एक चाकू का प्रयोग करके मुझे क्षतियां कारित कीं और भाग गया ।

.....।"

इस प्रकार, इस साक्षी ने कथन किया था कि उसने पुलिस को वह कथन नहीं किया था जिस कथन से उसका सामना कराया गया है । अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसने स्वीकार किया कि जब उसने लिम्बयात पुलिस थाने में सूचित किया था, तो एक पुलिसकर्मी एक आटो-रिक्शा में आया था । पुलिसकर्मी के साथ दो या तीन अन्य व्यक्ति मृतक को नीचे लाए और उसे आटो-रिक्शा में डाला । इस पुलिस कार्मिक और अन्य दो से तीन व्यक्तियों की साक्षियों के रूप में परीक्षा नहीं की गई थी । उसने कथन किया कि उस समय मृतक बेहोश था । इसलिए जब मृतक को आटो-रिक्शा में डाला गया था, उस समय वह बोलने की स्थिति में नहीं था ।

10. इस प्रक्रम पर, हम अभि. सा. 3, जो शिकायतकर्ता और अपीलार्थी का मकान-मालिक था, के परिसाक्ष्य का भी उल्लेख कर सकते हैं । उसने कथन किया कि जब वह उस स्थान पर गया जहां मृतक भारी रक्तस्राव की दशा में पड़ा हुआ था, तो मृतक ने उसे कुछ नहीं बताया था और जब उसके द्वारा मृतक को आटो-रिक्शा से अस्पताल ले जाया गया था उस समय कोई बातचीत नहीं हुई थी । अतः अभि. सा. 24 को किए गए मृत्युकालिक कथन के संबंध में अभियोजन पक्ष की कहानी से कतई विश्वास प्रेरित नहीं होता है ।

11. अब, हम प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य पर आते हैं जिन्हें पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया था । अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभि. सा. 3 वह साक्षी था जिसके समक्ष मृतक ने उस समय एक मृत्युकालिक कथन किया था जब उसे आटो-रिक्शा में ले जाया जा रहा था । अभि. सा. 3 ने इस पहलू पर अभियोजन पक्ष का समर्थन नहीं किया और अभि. सा. 24 ने दावा किया कि जब मृतक को आटो-रिक्शा में डाला गया था, वह होश में नहीं था । अभि. सा. 3 ने कथन किया कि उसने अपीलार्थी और मृतक के बीच झगड़ा होने की आवाज सुनाई दी थी । जब प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी का सामना उसके पुलिस को किए गए कथन से कराया गया, तो उसने ऐसा कोई कथन किए जाने की बात से इनकार किया । अभि. सा. 4 को पक्षद्रोही घोषित किया गया था । जब उसका सामना उसके पुलिस को किए गए कथन के सुसंगत भाग से कराया गया, तो उसने ऐसा कथन किए जाने की बात से इनकार किया ।

12. उच्च न्यायालय ने अभि. सा. 7 के परिसाक्ष्य का अवलंब लिया, जिसे भी पक्षद्रोही घोषित किया गया था । लोक अभियोजक द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 7 ने स्वीकार किया था कि उसने पुलिस को यह सूचित किया था कि उसने अपीलार्थी को नीचे आते हुए देखा था और जब नीचे आ रहा था तो वह अपने वस्त्रों से रक्त साफ कर रहा था । तथापि, अभियुक्त की ओर से अधिवक्ता द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी ने कथन किया कि मृतक को क्षतिग्रस्त हालत में देखने के सिवाय उसने और कुछ नहीं देखा था और उसे उन व्यक्तियों की जानकारी नहीं थी जो घटना में अंतर्वलित थे ।

13. उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अभि. सा. 9 कल्लू शेख, एक अन्य पक्षद्रोही साक्षी, के साक्ष्य से घटना के समय अपीलार्थी की मौजूदगी साबित होती है । अभियुक्त की ओर से अधिवक्ता द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 9 ने कथन किया कि वह घटना से पहले अपीलार्थी और मृतक को नहीं जानता था । उसने कथन किया कि वह अपीलार्थी की शनाख्त करने में असमर्थ है । उसने कथन किया कि

"बचाओ, बचाओ" चिल्लाने की आवाज सुनने के सिवाय उसे और कुछ नहीं पता ।

14. अत: पक्षद्रोही अभियोजन साक्षियों (अभि. सा. 3 से अभि. सा. 9) के साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् हमारा निष्कर्ष है कि साक्ष्य में ऐसा कुछ नहीं है जिसका अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी को मृतक की हत्या से संपृक्त करने के लिए अवलंब लिया जा सके ।

15. इस प्रकार, उपरोक्त कारणों से अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है । तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है । अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी को लिम्बयात पुलिस थाने के अपराध सं. 1/142/2004 से उद्भूत 2005 के सेशन मामला सं. 80 में उसके विरुद्ध अभिकथित अपराध से दोषमुक्त किया जाता है, जिसका तृतीय त्वरित न्यायालय, सूरत द्वारा विनिश्चय किया गया है । अपीलार्थी को, यदि उसे किसी अन्य मामले के संबंध में निरुद्ध करना आवश्यक न हो, स्वतंत्र किया जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 3 उम. नि. प. 205

शिव प्रताप सिंह राणा

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य

[2023 की दांडिक अपील सं. 1552]

8 जुलाई, 2024

न्यायमूर्ति अभय एस. ओका और न्यायमूर्ति उज्जल भुयन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376(2)(ढ), धारा 506 और धारा 90 – बार-बार बलात्संग और आपराधिक अभित्रास – अभियुक्त और अभियोक्त्री के बीच मैत्री संबंध होना – अभियुक्त द्वारा अभियोक्त्री की एक झरने के नीचे स्नान करते समय और स्नान के पश्चात् वस्त्र बदलते समय मोबाइल फोन से कुछ तस्वीरें खींच लेना – अभियुक्त द्वारा अभियोक्त्री को एक दूसरे स्थान पर ले जाना और अभिकथित रूप से इन तस्वीरों को सार्वजनिक करने की धमकी देकर उसके साथ कई बार जबरदस्ती शारीरिक संबंध बनाना – अभियुक्त द्वारा अभियोक्त्री को उसके साथ विवाह करने का वचन दिया जाना – अभियोक्त्री द्वारा कई अवसरों पर अभिकथित रूप से अभियुक्त को कुछ धनराशि और जेवरात भी दिया जाना – अभियुक्त द्वारा बाद में उससे विवाह करने से इनकार करने पर अभियोक्त्री द्वारा दो वर्ष पश्चात् अभियुक्त के विरुद्ध बलात्संग का अभिकथन करते हुए पुलिस थाने में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा आरोप विरचित किया जाना – अभियुक्त द्वारा उन्मोचन के लिए सेशन न्यायालय के समक्ष आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन खारिज हो जाना – उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया पुनरीक्षण आवेदन भी खारिज कर दिया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – अभियोक्त्री द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन और धारा 164 के अधीन किए गए कथनों में विरोधाभास होने, पुलिस द्वारा अभियुक्त का मोबाइल फोन जिससे उसके द्वारा अभियोक्त्री की तस्वीरें

खींची गई थीं और उन तस्वीरों को भी अभिगृहीत न किए जाने और अभियोक्त्री द्वारा अभियुक्त के साथ एक झरने के नीचे स्नान करने और उसके सामने अपने वस्त्र बदलने के तथ्य के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि अभियोक्त्री और अभियुक्त के बीच शारीरिक संबंध अभियोक्त्री की इच्छा के विरुद्ध और उसकी सम्मति के बिना और तथ्य के भ्रम के अधीन नहीं थे, अपितु यह एक सहमति-जन्य संबंध होना कहा जा सकता है इसलिए बलात्संग और आपराधिक अभित्रास का कोई मामला नहीं बनने के कारण अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाहियों को अभिखंडित करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अभियोक्त्री और अभियुक्त-अपीलार्थी के बीच मैत्री संबंध थे । अभियोक्त्री अभियुक्त के कहने पर उसके साथ अपने निवास स्थान से ग्वालियर गई । वे दोनों एक मंदिर में गए और वहां एक झरने के नीचे अभियोक्त्री और अभियुक्त ने स्नान किया और अभियुक्त ने मोबाइल फोन से अभिकथित रूप से उस समय उसकी कुछ तस्वीरें खींच लीं । अभियुक्त ने अभियोक्त्री के साथ शारीरिक संबंध बनाए । अभियुक्त ने अभियोक्त्री को विवाह करने का वचन दिया किंतु बाद उसने विवाह करने से इनकार कर दिया । अभियोक्त्री ने इस घटना के लगभग दो वर्ष पश्चात् एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट यह अभिकथन करते हुए दर्ज कराई कि अभियुक्त उसे वर्ष 2016 में उसकी (अभियोक्त्री) तस्वीरें दिखाता रहता था और कहता था कि वह उसके साथ ग्वालियर आए अन्यथा उसकी तस्वीरों को व्हटसऐप पर अपलोड कर दिया जाएगा । इस डर के मारे वह डाबरा से रेलगाड़ी द्वारा अपीलार्थी के साथ ग्वालियर आई । वहां अपीलार्थी ने उसके साथ जबरदस्ती दोषपूर्ण कार्य किया । अभियुक्त-अपीलार्थी उसे बारंबार संबंध बनाने के बारे में कहता रहता था । उसने उसे कहा कि वह अपने भाई के विवाह के पश्चात् उससे विवाह कर लेगा । किंतु उसके भाई के विवाह के पश्चात् जब अभियोक्त्री ने विवाह का विषय उठाया, तो अपीलार्थी ने उसे कहा कि उसके भाई को विवाह में 15 लाख रुपए मिले थे ; यदि उसका परिवार 15 लाख रुपए देगा तो केवल तब वह उससे विवाह करेगा, अन्यथा नहीं । उसके माता-पिता विवाह का प्रस्ताव लेकर

अभियुक्त-अपीलार्थी के निवास पर गए किंतु उसके परिवार के सदस्यों ने प्रस्ताव को ठुकरा दिया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह अभिकथन किया गया कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ संबंध बनाते समय उससे विभिन्न अवसरों पर कुल मिलाकर 90,000/- हजार रुपए लिए थे ; इसके अतिरिक्त जेवरात भी लिए गए थे । पुलिस ने अन्वेषण किया और इसके दौरान अभियोक्त्री का दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन कथन अभिलिखित किया गया । इसके अलावा, अभियोक्त्री का तारीख दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन भी कथन अभिलिखित किया गया था । अन्वेषण पूर्ण होने पर अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी ने अपने उन्मोचन की ईप्सा करते हुए सेशन न्यायाधीश के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । सेशन न्यायाधीश ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए आरोप पत्र से प्रथमदृष्ट्या पर्याप्त साक्ष्य प्रकट होता है इसलिए इन परिस्थितियों में, अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन अपराधों के लिए विचारण से उन्मोचित नहीं किया जा सकता और उसके आवेदन को खारिज कर दिया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन एक दांडिक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा यह दृष्टिकोण अपनाया गया कि सच्चाई का पता लगाने के लिए विचारण किए जाने की आवश्यकता है और हस्तक्षेप करने के लिए कोई मामला नहीं बनता है और दांडिक पुनरीक्षण आवेदन को खारिज कर दिया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर विशेष इजाजत लेकर उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोक्त्री के दो कथनों, एक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन पुलिस को किए गए कथन और दूसरे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन किए गए कथन, जो कि 24 घंटे के अंतराल में ही अभिलिखित किया गया था, का परिशीलन और तुलना

करने पर जो दृष्टव्य है, वह यह है कि न केवल दोनों कथन स्वयमेव विरोधाभासी हैं अपितु वे परस्पर भी विरोधाभासी हैं । अभियोक्त्री ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिकथित घटना के दो वर्षों के पश्चात् दर्ज कराई थी, यह तथ्य स्वयमेव इस बात का सूचक है कि संबंध सहमतिजन्य प्रकृति के थे जो कटु हो गए थे । ये सोचने वाली बात है कि यदि अपीलार्थी द्वारा उसे धमकी दी जा रही थी तो अभियोक्त्री, जिसकी आयु अभिकथित घटना के समय लगभग 22 वर्ष थी, अपीलार्थी के साथ मंदिर क्यों जाती । वह वयस्क थी और इसलिए अपने स्वयं के कार्यों के परिणामों से पूरी तरह सचेत थी । अभियोक्त्री का यह पक्षकथन नहीं है कि अपीलार्थी ने उसे झरने के नीचे स्नान करने के लिए बाध्य किया था और उसके पश्चात् उसकी तस्वीरें खींच ली थीं । अभियोक्त्री का अपीलार्थी के साथ झरने के नीचे स्नान करने और उसके पश्चात् अपने वस्त्र बदलने का कृत्य अपीलार्थी द्वारा अभियोक्त्री को कोई धमकी देने या प्रपीड़न करने की बात को वास्तव में नकारता है । सुनवाई के दौरान, न्यायपीठ ने राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल से एक सुस्पष्ट प्रश्न पूछा था कि क्या अपीलार्थी के मोबाइल फोन या अपीलार्थी द्वारा अभियोक्त्री की अभिकथित रूप से उस समय ली गई तस्वीरों को बरामद किया गया था जब वह स्नान कर रही थी और अपने वस्त्र बदल रही थी, जिसका उत्तर अनुदेश प्राप्त होने पर यह दिया गया कि उन्हें न तो बरामद और न ही अभिगृहीत किया गया था । इसके अतिरिक्त, तारीख 28 सितंबर, 2016 के स्टांप-पत्र तथा तारीख 16 जून, 2017 का चैक अभिगृहीत नहीं किया गया है । अभियोक्त्री द्वारा अभिकथित रूप से अपीलार्थी को दिए गए जेवरात भी अभिगृहीत नहीं किए गए हैं । ऐसी सामग्री के अभाव में, अपीलार्थी के विरुद्ध बलात्संग और अभित्रास के आरोपों को अभियोजन पक्ष के लिए साबित करना वास्तव में असंभव होगा । इस न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अधीन उपबंधित बलात्संग की परिभाषा का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है । इस न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 376(2)(ढ) के उपबंधों का भी परिशीलन किया है, जो एक ही स्त्री के साथ बार-बार बलात्संग करने के अपराध के संबंध में है । भारतीय दंड संहिता की धारा 375 में

किसी पुरुष द्वारा 'बलात्संग' को इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि यदि वह खंड (क) से (घ) के निबंधनों के अनुसार इसमें वर्णित सात प्रकार की परिस्थितियों में कोई कार्य करता है । दूसरी प्रकार की परिस्थिति के अनुसार, कोई पुरुष बलात्संग करता है यदि वह उस स्त्री की सम्मति के बिना खंड (क) से (घ) में वर्णित प्रकार का कोई कृत्य करता है । सम्मति को स्पष्टीकरण 2 में परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ है कि जब स्त्री शब्दों, भाव-भंगिमा या मौखिक या अमौखिक संसूचना के रूप में विनिर्दिष्ट लैंगिक कृत्य में सम्मिलित होने के लिए रजामंदी संसूचित करती है तो यह असंदिग्ध रूप से स्वैच्छिक सहमति देना है । तथापि, इसके परंतुक में स्पष्ट किया गया है कि कोई स्त्री जो प्रवेशन के कृत्य का शारीरिक रूप से विरोध नहीं करती, केवल इस तथ्य के कारण ही लैंगिक क्रियाकलाप के लिए सम्मति देना नहीं समझा जाएगा । उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और मामले के संपूर्ण सिंहावलोकन के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि अभियोक्त्री और अपीलार्थी के बीच शारीरिक संबंध उसकी इच्छा के विरुद्ध और उसकी सम्मति के बिना होना नहीं कहा जा सकता है । उपलब्ध सामग्री के आधार पर बलात्संग या आपराधिक अभित्रास का कोई मामला नहीं बनता है । (पैरा 16, 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 18 एस. सी. सी. 191 : **डा. धुवराम मुरलीधर सोनार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	22
[2019]	(2019) 9 एस. सी. सी. 608 : **प्रमोद सूर्यभान पंवार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	23

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2023 की दांडिक अपील सं. 1552.

2019 के दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 2288 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, ग्वालियर द्वारा तारीख 3 अक्तूबर, 2019 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री अभिनव रामकृष्ण, अमित लाहोटी, (सुश्री) अंजलि चौहान और (सुश्री) समिना ठाकुरा

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री हरमीत रूप्राह, उप महाधिवक्ता, यशराज सिंह बुंदेला, सुरजीत सिंह, (श्रीमती) प्रतिमा सिंह, चाणक्य बरुआ, अभिजीत सिंह, (सुश्री) चित्रांग्दा राष्ट्रवरा, अनिरुद्ध सिंह, ऐश्वर्य मिश्रा, धनंजय शेखावत, दशरथ सिंह, (सुश्री) अंजलि सक्सेना और ग्रुप कैप्टन करण सिंह भाटी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति उज्जल भुयन ने दिया ।

न्या. भुयन – विशेष इजाजत लेकर यह दांडिक अपील मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, ग्वालियर (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'उच्च न्यायालय' कहा गया है) द्वारा अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए 2019 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 2288 को खारिज करते हुए तारीख 3 अक्तूबर, 2019 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष पूर्वोक्त दांडिक पुनरीक्षण आवेदन 2018 के सेशन विचारण सं. 505 में 10वें अपर सेशन न्यायाधीश, ग्वालियर (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'सेशन न्यायाधीश' कहा गया है) द्वारा तारीख 24 अप्रैल, 2019 को पारित किए गए उस आदेश को चुनौती देते हुए फाइल किया गया था जिसके द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में भारतीय दंड संहिता) की धारा 376(2)(ढ) और धारा 506 के अधीन आरोप विरचित किए गए थे और अपीलार्थी द्वारा उन्मोचन के लिए फाइल किए गए आवेदन को नामंजूर कर दिया गया था ।

2. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अभियोक्त्री ने तारीख 6 सितंबर, 2018 को एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (एफआईआर) यह अभिकथन करते हुए दर्ज कराई थी कि वर्ष 2016 में अभियुक्त (इस अपील में

अपीलार्थी) उसकी (अभियोक्त्री) तस्वीरें (फोटोग्राफ) दिखाता रहता था और कहता था कि वह उसके साथ ग्वालियर आए अन्यथा उसकी तस्वीरों को व्हटसऐप पर अपलोड कर दिया जाएगा । इस डर के मारे वह डाबरा से रेलगाड़ी द्वारा अपीलार्थी के साथ ग्वालियर आई । अनुपम नगर से एक लड़का उसे लेने के लिए रेलवे स्टेशन आया । उसकी मोटरबाइक पर अभियोक्त्री और अपीलार्थी अनुपम नगर सीटी सेंटर गए जहां अपीलार्थी किराए के परिसर में रह रहा था । वहां अपीलार्थी ने उसके साथ जबरदस्ती दोषपूर्ण कार्य किया । उसके पश्चात् अपीलार्थी ने एक शपथपत्र पर जबरदस्ती अभियोक्त्री के हस्ताक्षर कराए । शपथपत्र में यह वर्णित था कि अभियोक्त्री आजीवन अपीलार्थी के साथ रहेगी । उसके पश्चात् वह अपीलार्थी के साथ डाबरा आई और घर चली गई । अपीलार्थी उसे बारंबार संबंध बनाने के बारे में कहता रहता था । उसने उसे कहा कि वह अपने भाई के विवाह के पश्चात् उससे विवाह कर लेगा । किंतु उसके भाई के विवाह के पश्चात् जब अभियोक्त्री ने विवाह का विषय उठाया, तो अपीलार्थी ने उसे कहा कि उसके भाई को विवाह में 15 लाख रुपए मिले थे ; यदि उसका परिवार 15 लाख रुपए देगा तो केवल तब वह उससे विवाह करेगा, अन्यथा नहीं । उसके माता-पिता विवाह का प्रस्ताव लेकर अपीलार्थी के निवास पर गए किंतु उसके परिवार के सदस्यों ने प्रस्ताव को ठुकरा दिया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह अभिकथन किया गया था कि अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ संबंध बनाते समय उससे विभिन्न अवसरों पर कुल मिलाकर 90,000/- हजार रुपए लिए थे ; इसके अतिरिक्त जेवरात भी लिए गए थे । जब अपीलार्थी अभियोक्त्री को डराने-धमकाने लगा, तो उसने विश्वविद्यालय पुलिस थाना, जिला ग्वालियर में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट फाइल की ।

3. इस प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन 2018 के अपराध सं. 401 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था ।

4. पुलिस ने अन्वेषण किया जिसके दौरान तारीख 11 सितंबर, 2018 को अभियोक्त्री का दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में दंड प्रक्रिया संहिता) की धारा 161 के अधीन कथन अभिलिखित किया

गया । इसके अलावा, अभियोक्त्री का तारीख 12 सितंबर, 2018 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन भी कथन अभिलिखित किया गया था । अन्वेषण पूर्ण होने पर अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया ।

5. अपीलार्थी ने अपने उन्मोचन की ईप्सा करते हुए सेशन न्यायाधीश के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । सेशन न्यायाधीश ने तारीख 24 अप्रैल, 2019 के आदेश द्वारा यह दृष्टिकोण अपनाया कि अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए आरोप पत्र से प्रथमदृष्ट्या पर्याप्त साक्ष्य प्रकट होता है । इन परिस्थितियों में, अभियुक्त (अपीलार्थी) को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन अपराधों के लिए विचारण से उन्मोचित नहीं किया जा सकता । परिणामत:, अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया गया ।

6. सेशन न्यायाधीश के पूर्वोक्त आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन एक दांडिक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया । उक्त आवेदन को 2019 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 2288 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । उच्च न्यायालय ने तारीख 3 अक्तूबर, 2019 के निर्णय और आदेश द्वारा यह दृष्टिकोण अपनाया कि सच्चाई का पता लगाने के लिए विचारण किए जाने की आवश्यकता है और हस्तक्षेप करने के लिए कोई मामला नहीं बनता है । परिणामत:, दांडिक पुनरीक्षण आवेदन को खारिज कर दिया गया ।

7. अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के पूर्वोक्त विनिश्चय को चुनौती देते हुए इस न्यायालय के समक्ष 2019 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 11671 फाइल की । इस न्यायालय ने तारीख 7 जनवरी, 2020 के आदेश द्वारा सूचना जारी की और सेशन न्यायाधीश के समक्ष लंबित 2018 के सेशन विचारण सं. 505 में आगे की कार्यवाहियों पर रोक लगाते हुए एक अंतरिम आदेश पारित किया । तत्पश्चात् इस

न्यायालय ने तारीख 12 मई, 2023 के आदेश द्वारा इजाजत प्रदान की और दांडिक अपील के लंबित रहने के दौरान अंतरिम आदेश जारी रहने का निदेश दिया, जिसे 2023 की दांडिक अपील सं. 1552 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया ।

8. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि अपीलार्थी और अभियोक्त्री के बीच संबंध पूरी तरह से सहमतिजन्य था । इसलिए अपीलार्थी द्वारा न तो भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और न ही धारा 506 के अधीन कोई अपराध कारित करने का प्रश्न नहीं है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और आरोप पत्र के परिशीलन मात्र से यह दर्शित होता है कि मामले में कोई आपराधिक तत्व अंतर्वलित नहीं है । अत: यह न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल होगा यदि अपीलार्थी को एक लंबे खींचने वाले दांडिक विचारण की कठिन परीक्षा को सहन करना पड़े और इस प्रक्रिया में बदनामी सहन करनी पड़े, जिसके अपूरणीय परिणाम होंगे । सेशन न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू की अनदेखी की गई थी । अत: उन्होंने सेशन न्यायाधीश और उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेशों को अभिखंडित करने और इसके अतिरिक्त सेशन न्यायाधीश के समक्ष लंबित 2018 के सेशन विचारण सं. 505 में कार्यवाहियों को भी अभिखंडित करने की ईप्सा की ।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि अभियोक्त्री की इत्तिला के आधार पर पुलिस ने अभियुक्त (अपीलार्थी) के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 506 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की थी । पुलिस ने मामले का अन्वेषण किया और सामग्री एकत्रित की । चिकित्सा अभिलेखों, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन अभियोक्त्री के कथन और अन्य संपुष्टिकारी सामग्री पर विचार करने के पश्चात् अभियुक्त (अपीलार्थी) को भारतीय दंड संहिता के पूर्वोक्त उपबंधों के अधीन अभियोजित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन एक रिपोर्ट फाइल की गई थी ।

9.1 विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि विद्वान् सेशन न्यायाधीश के लिए अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री थी । यह अति-सामान्य विधि है कि आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर एक पूर्व विचारण किया जाना अपेक्षित नहीं है । न्यायालय के लिए यह अपेक्षित है कि वह अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर एक प्रथमदृष्ट्या दृष्टिकोण अपनाए कि क्या मामला विचारण करने के लिए उपयुक्त है । विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री पाई । उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण अधिकारिता का प्रयोग करते हुए मामले की विस्तार से परीक्षा की और अपीलार्थी के आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाया । अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ विवाह के मिथ्या वचन के आधार पर और उसकी तस्वीरों को सार्वजनिक करने की धमकी देकर बलात्संग किया था । इस प्रकार, यह एक उपयुक्त मामला है जो भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अधीन बलात्संग की परिभाषा की परिधि के अंतर्गत आता है । विवाह के मिथ्या वचन के आधार पर लैंगिक संबंध बनाने के लिए किसी स्त्री को उत्प्रेरित करना भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अर्थान्तर्गत बलात्संग होगा । इस प्रक्रम पर, अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन अभिलिखित किए गए अभियोक्त्री के कथन और अन्य संपुष्टिकारी सामग्री से होता है । यह ऐसा मामला नहीं है जहां विचारण को आरंभ में ही बंद कर दिया जाना चाहिए । कम से कम एक विचारणीय मामला बनता है जहां अपीलार्थी को अपनी निर्दोषिता साबित करने के लिए स्वयं की प्रतिरक्षा करने का पूरा अवसर मिलेगा । अत: उन्होंने दलील दी कि उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने का कोई मामला नहीं बनता है और यह अपील खारिज किए जाने योग्य है ।

10. प्रत्यर्थी सं. 2 (अभियोक्त्री) की ओर से विद्वान् काउंसेल ने तथ्यात्मक स्थिति का वर्णन करने के पश्चात् यह दलील दी कि अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के छोटे भाई का मित्र होने के कारण अभियोक्त्री के मिलनसार स्वभाव का फायदा उठाया था । अपीलार्थी ने उसकी अति

संवेदनशीलता का फायदा उठाकर उसकी उस समय प्राइवेट तस्वीरें खींच ली थीं जब वह एक मंदिर परिसर के निकट स्नान करने के पश्चात् अपने वस्त्र बदल रही थी, जहां वे एक साथ गए थे । अपीलार्थी ने बाद में इन तस्वीरों को अभियोक्त्री को दिखाया और उसके साथ शारीरिक संबंध बनाने के लिए उसका भयादोहन किया । उसने उसे धमकी दी कि यदि उसने उसकी मांग मानने से इनकार किया तो वह उसकी प्राइवेट तस्वीरों को सोशल मिडिया पर अपलोड कर देगा । इन परिस्थितियों में ही अभियोक्त्री अपीलार्थी के साथ ग्वालियर गई थी, जहां उसने अपने किराए के परिसर में उसके साथ जबरदस्ती की । विद्वान् काउंसेल ने इस बात पर जोर दिया कि अभियोक्त्री को अपीलार्थी के साथ इस डर के मारे मैथुन करने के लिए बाध्य करना कि वह उसकी तस्वीरों को उजागर कर देगा, यह सारत: प्रपीड़न द्वारा दूषित सम्मति थी । ऐसी सम्मति को कतई सम्मति नहीं कहा जा सकता है । यह एक स्पष्ट मामला है जो बलात्संग की परिभाषा की परिधि के अंतर्गत आता है ।

10.1 अपीलार्थी ने अभियोक्त्री को शांत करने के लिए और उसका शारीरिक और मानसिक रूप से शोषण करते रहने के लिए तारीख 28 सितंबर, 2016 को एक शपथपत्र बनाया जिसमें यह उल्लेख किया गया कि वह अभियोक्त्री से प्रेम करता है और हर परिस्थिति में उसकी देखरेख करेगा । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, दोनों के बीच शारीरिक संबंध अभियोक्त्री की ऐसे सम्मति के आधार पर थे जो विवाह के मिथ्या वचन के आधार पर 'तथ्य के भ्रम' के अधीन अभिप्राप्त की गई थी । अपीलार्थी का आशय बिल्कुल स्पष्ट था । उसने विवाह के बहाने अभियोक्त्री को प्रवंचित किया और शारीरिक संबंध बनाए रखे ।

10.2 उन्होंने दलील दी कि अपीलार्थी ने तारीख 7 जुलाई, 2017 को एक स्टांप-पत्र अभिप्राप्त किया, जिसमें उसने अभियोक्त्री से विवाह करने की अपनी इच्छा व्यक्त की । प्रत्यर्थी सं. 2 अर्थात् अभियोक्त्री की ओर से विद्वान् काउंसेल के अनुसार, ऐसा उससे अपने 'तात्पर्यित' कारबार में विनिधान करने के लिए वित्तीय सहायता उपाप्त करने के असद्भावी आशय से किया गया था जिसके कारण प्रत्यर्थी सं. 2 ने अपीलार्थी को 90,000/- रुपए मूल्य की विभिन्न वस्तुएं सौंपी थीं ।

10.3 यद्यपि प्रत्यर्थी सं. 2 लगातार अपीलार्थी से विवाह अनुष्ठापित करने का अनुरोध करती रही किंतु अपीलार्थी किसी न किसी बहाने इससे टाल-मटोल करता रहा । साथ ही उसने उसका शारीरिक शोषण करना जारी रखा । आरंभ में, उसने अभियोक्त्री को आश्वासन दिया था कि वह अपने बड़े भाई के विवाह के पश्चात् उससे विवाह करेगा । किंतु उसका असद्भावी आशय उस समय सुस्पष्ट हो गया जब उसने यह कहते हुए 15 लाख रुपए की मांग की कि उसके बड़े भाई के विवाह में इतनी ही रकम प्राप्त हुई थी ।

10.4 विद्वान् काउंसेल ने अपनी दलीलों के अनुक्रम में भारतीय दंड संहिता की धारा 90 का भी इस बिंदु पर बल देने के लिए अवलंब लिया कि अभियोक्त्री की सम्मति एक 'तथ्य के भ्रम' के आधार पर अभिप्राप्त की गई थी ।

11. न्यायालय द्वारा पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में राज्य अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अनुदेश प्राप्त होने पर यह बताया कि न तो तस्वीरें और न ही अपीलार्थी के मोबाइल फोन को अभिगृहीत किया गया है । उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि तारीख 28 सितंबर, 2016 का शपथपत्र और तारीख 7 जुलाई, 2017 के स्टांप-पत्र को भी अभिगृहीत नहीं किया गया है । अभियोक्त्री द्वारा अभिकथित रूप से अपीलार्थी को दिया गया कोई जेवरात भी अपीलार्थी से बरामद या अभिगृहीत नहीं किया गया है ।

12. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर इस न्यायालय द्वारा सम्यक् विचार किया गया है ।

13. आरंभ में, हम पुलिस के समक्ष किए गए अभियोक्त्री के कथन की परीक्षा करेंगे । अभियोक्त्री ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अपने कथन में यह कहा था कि अपीलार्थी न केवल उसके छोटे भाई मुकुल राणा का मित्र था अपितु उसके जीजा शैलेन्द्र राणा का भी एक दूर का भाई था । अपीलार्थी डाबरा में एक प्रतियोगिता कोचिंग सेंटर चलाता था जिस पर अभियोक्त्री वर्ष 2015-16 के दौरान अपने भाई मुकुल के साथ जाया करती थी । अपीलार्थी की सिफारिश पर अभियोक्त्री

को एक कंपनी में रिसेप्शनिस्ट की नौकरी मिली थी । वर्ष 2016 में अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के प्रति अपने प्रेम का प्रकटन किया जिसे उसके द्वारा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि वह न केवल उससे आयु में छोटा है अपितु उसके छोटे भाई मुकुल का मित्र भी है । तथापि उनकी मित्रता हो गई । उसने कथन किया कि उस वर्ष के सावन के महीने में एक सोमवार को अपीलार्थी उसे गिजोड़ा के आगे किटोरे गांव के बाहर एक जंगल में ले गया जहां दूधखो शंकर जी का एक मंदिर था । वहां उसने झरने में स्नान किया । बाद में, अपीलार्थी ने उसे वे तस्वीरें दिखाईं जो उसने उस समय खींची थीं जब वह मंदिर में अपने वस्त्र बदल रही थी । यद्यपि अभियोक्त्री ने अपीलार्थी को इन तस्वीरों को मिटाने के लिए कहा किंतु उसने ऐसा नहीं किया । उसके पश्चात्, वह उसे उसकी तस्वीरें दिखाकर उसका भयादोहन करने लगा और इस कारण उसने कोचिंग सेंटर और नौकरी छोड़ दी थी । ऐसा होते हुए भी, अपीलार्थी ने उसे यह कहते हुए धमकी देना जारी रखा कि तस्वीरों को वायरल कर दिया जाएगा और उन्हें उसके पिता को दिखा दिया जाएगा । इसी धमकी के कारण वह रेलगाड़ी से अपीलार्थी के साथ डाबरा से ग्वालियर गई थी । ग्वालियर पहुंचने पर वह उसे अनुपम नगर में एक स्थान पर ले गया जहां उसने जबरदस्ती उसके साथ शारीरिक संबंध बनाए । उस स्थान को अपीलार्थी के एक मित्र नितिन नागरिया द्वारा किराए पर लिया गया था । तारीख 28 सितंबर, 2016 को अपीलार्थी ने एक स्टांप-पत्र अभिप्राप्त किया जिस पर उसने अपने हस्ताक्षरों के साथ-साथ अभियोक्त्री के हस्ताक्षर कराए । स्टांप-पत्र में यह उल्लेख किया गया था कि वह उसकी आजीवन सहायता करेगा । अभियोक्त्री के अनुसार, उसने अपीलार्थी से बहुत बार उससे विवाह करने के लिए कहा किंतु किसी न किसी बहाने वह इस प्रस्ताव से बचता रहा । बाद में, उसने कहा कि वह अपने भाई जयदीप के विवाह के पश्चात् उससे विवाह करेगा । अभियोक्त्री ने कथन किया कि उसने अपीलार्थी को अनेक अवसरों पर बैंक से धन व्यपहृत करके दिया था । तारीख 16 जून, 2017 को अभियोक्त्री ने अपीलार्थी को अपनी माता का 10,000/- रुपए का एक चैक दिया था । अपीलार्थी ने यह भी कहा था कि उसने कोचिंग

सेंटर छोड़ दिया है और अपना स्वयं का कारबार करना चाहता है और इसके बाद उसके परिवार के सदस्य विवाह के लिए तैयार हो जाएंगे । तारीख 7 जुलाई, 2018 को अपीलार्थी ने अभियोक्त्री को अपने नाम में एक ई-स्टांप दिया था जिसमें यह उल्लिखित था कि वह उससे विवाह करेगा और उसके आश्वासन पर तारीख 22 नवंबर, 2017 को अभियोक्त्री ने अपनी बहिन के मंगलसूत्र की लटकन ली और इसे अपीलार्थी को दे दिया । वह अपीलार्थी के साथ बैंक गई जहां उसने मंगलसूत्र की लटकन को बंधक किया और 8,000/- रुपए का ऋण लिया । उसने 5,000/- रुपए का ऋण अभिप्राप्त करने में भी उसकी सहायता की थी । बाद में, जब उसने विवाह का विषय उठाया, चूंकि तारीख 18 अप्रैल, 2018 को उसके भाई का विवाह हो गया था, अपीलार्थी ने अभियोक्त्री से कहा कि उसके भाई को विवाह में 15 लाख रुपए मिले हैं, इसलिए यदि वह 15 लाख रुपए देगी तो वह उससे विवाह कर लेगा । तथापि, जब उसके परिवार के सदस्यों ने अपीलार्थी के परिवार के सदस्यों के साथ उसके मकान पर बातचीत की, तो उन्होंने इनकार कर दिया । यद्यपि नातेदारों की बैठक में अपीलार्थी को अभियोक्त्री के जेवरात और धनराशि को वापस करने और उसके साथ विवाह करने का भी आदेश दिया गया था किंतु उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया । उसके पश्चात् ही उसने तारीख 5 सितंबर, 2018 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई ।

14. अब हम तारीख 12 सितंबर, 2018 को अभियोक्त्री के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन किए गए कथन की परीक्षा करेंगे ।

15. अभियोक्त्री ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में यह कहा था कि घटना वर्ष 2016 के सावन महीने की है । तथापि, चूंकि दो वर्ष बीत गए हैं इसलिए वह तारीख का स्मरण नहीं कर सकती । वह अपीलार्थी के साथ कोचिंग कक्षा में जाती रहती थी, जो उसके जीजा का दूर का भाई था । कोचिंग कक्षा अपीलार्थी के चचेरे भाई के मकान में लगती थी । एक दिन

अपीलार्थी ने अभियोक्त्री को बताया कि कार्यालय में रिसेप्शनिस्ट का एक पद रिक्त है जिस पर वह काम कर सकती है । उसके पश्चात्, उसने उसके प्रति अपना प्रेम व्यक्त किया जिससे उसने इस आधार पर स्वीकार कर दिया कि अपीलार्थी उसके छोटे भाई का मित्र है और उससे भी छोटा है । कुछ दिनों के पश्चात्, सावन के महीने में अपीलार्थी अभियोक्त्री को अपने गांव के निकट एक मंदिर में ले गया जहां उसने एक झरने के नीचे स्नान किया । जब अभियोक्त्री स्नान कर रही थी तब अपीलार्थी ने उसकी तस्वीरें ले लीं । 5/6 दिनों के पश्चात् जब वह कोचिंग कक्षा गई, तो अपीलार्थी ने उसे तस्वीरें दिखाई । उसने उससे विवाह करने की इच्छा भी व्यक्त की किंतु अभियोक्त्री ने अपीलार्थी के ऐसे प्रस्ताव से इनकार कर दिया । उस समय अपीलार्थी ने उससे कहा कि यदि वह उसके प्रस्ताव से इनकार करती रही तो वह तस्वीरें उसके पिता के पास भेज देगा ।

15.1 कुछ दिनों के पश्चात् अपीलार्थी उसे ग्वालियर के अनुपम नगर ले गया, जहां उसका मित्र नितिन एक किराए के परिसर में रह रहा था । वहां अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ जबरदस्ती की और जब उसने इनकार किया, तो उसने उसकी सम्मति के बिना उससे शारीरिक संबंध बनाए । तस्वीरें मिटाने के उसके अनुरोध पर अपीलार्थी ने उससे कहा कि वह ऐसा केवल तब करेगा यदि वह उससे विवाह करने के लिए सहमत हो जाए । उसके पश्चात्, उसने अभियोक्त्री को डाबरा में छोड़ा और उससे शारीरिक संबंध बनाना जारी रखा । तारीख 28 सितंबर, 2016 को अपीलार्थी ने अभियोक्त्री को यह कहते हुए एक स्टांप-पत्र दिया कि वह उसकी आजीवन सहायता करेगा । तारीख 16 जून, 2017 को अपीलार्थी ने अभियोक्त्री से धन की मांग की, जिसके अनुसरण में उसने उसे अपनी माता का 10,000/- रुपए की रकम का एक चैक दिया । पुनः तारीख 7 जुलाई, 2017 को अपीलार्थी ने अभियोक्त्री को एक स्टांप-पत्र दिया जिसमें विवाह के लिए उसकी सम्मति चाही गई । फिर जब उसने और धन देने के लिए कहा तो अभियोक्त्री ने उसे अपनी माता और बहिन के जेवरात दे दिए चूंकि उसके पास कोई धनराशि नहीं

थी । अपीलार्थी ने एक बैंक में जेवरात बंधक किए और उनके विरुद्ध उसने कुछ धन व्यपहृत किया । उसके पश्चात्, अभियोक्त्री ने कथन किया कि जब उसने अपीलार्थी की मांग को पूरा करने के लिए बैंक से धन व्यपहृत किया, तो उसके परिवार के सदस्यों को इस संबंध के बारे में पता चला ।

15.2 अपीलार्थी ने अप्रैल, 2018 में अपने बड़े भाई के विवाह से पूर्व उससे कहा था कि उसके भाई का विवाह हो जाने तक उसके परिवार के सदस्य उसके स्थान पर नहीं आने चाहिएं । विवाह हो जाने के पश्चात् अपीलार्थी ने उसे कहा कि उसके भाई को विवाह में 15 लाख रुपए मिले थे और उससे पूछा कि क्या उसके परिवार के सदस्य इतनी ही रकम देने की स्थिति में होंगे । उसके भाई के विवाह के पश्चात् अभियोक्त्री के परिवार के सदस्य माह जून, 2018 में अपीलार्थी के मकान पर गए किंतु उसके परिवार के सदस्यों को विवाह के प्रश्न पर टाल-मटोल करते हुए पाया । यद्यपि समुदाय के लोगों ने अपीलार्थी और उसके परिवार के सदस्यों को जेवरात वापस करने के साथ-साथ अभियोक्त्री के साथ विवाह करने के लिए भी कहा, किंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया । उसके पश्चात्, अपीलार्थी ने अपना मोबाइल फोन बंद कर दिया और डाबरा से गायब हो गया । अपीलार्थी के भाई ने अभियोक्त्री से कहा कि यदि वह पुलिस के समक्ष शिकायत करेगी तो उसे जान से मार दिया जाएगा और उसके भाई को किसी मिथ्या मामले में फंसा दिया जाएगा । उसके पश्चात् ही उसने तारीख 5 सितंबर, 2018 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई ।

16. अभियोक्त्री के दो कथनों, एक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन पुलिस को किए गए कथन और दूसरे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन किए गए कथन, जो कि 24 घंटे के अंतराल में ही अभिलिखित किया गया था, का परिशीलन और तुलना करने पर जो दृष्टव्य है, वह यह है कि न केवल दोनों कथन स्वयमेव विरोधाभासी हैं अपितु वे परस्पर भी विरोधाभासी हैं । अभियोक्त्री ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिकथित घटना के दो वर्षों के पश्चात् दर्ज कराई थी, यह तथ्य

स्वयमेव इस बात का सूचक है कि संबंध सहमतिजन्य प्रकृति के थे जो कटु हो गए थे । ये सोचने वाली बात है कि यदि अपीलार्थी द्वारा उसे धमकी दी जा रही थी तो अभियोक्त्री, जिसकी आयु अभिकथित घटना के समय लगभग 22 वर्ष थी, अपीलार्थी के साथ मंदिर क्यों जाती । वह वयस्क थी और इसलिए अपने स्वयं के कार्यों के परिणामों से पूरी तरह सचेत थी । अभियोक्त्री का यह पक्षकथन नहीं है कि अपीलार्थी ने उसे झरने के नीचे स्नान करने के लिए बाध्य किया था और उसके पश्चात् उसकी तस्वीरें ली थीं । अभियोक्त्री का अपीलार्थी के साथ झरने के नीचे स्नान करने और उसके पश्चात् अपने वस्त्र बदलने का कृत्य अपीलार्थी द्वारा अभियोक्त्री को कोई धमकी देने या प्रपीड़न करने की बात को वास्तव में नकारता है ।

17. सुनवाई के दौरान, न्यायपीठ ने राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल से एक सुस्पष्ट प्रश्न पूछा था कि क्या अपीलार्थी के मोबाइल फोन या अपीलार्थी द्वारा अभियोक्त्री की अभिकथित रूप से उस समय ली गई तस्वीरों को बरामद किया गया था जब वह स्नान कर रही थी और अपने वस्त्र बदल रही थी, जिसका अनुदेश प्राप्त होने पर यह उत्तर दिया गया कि उन्हें न तो बरामद और न ही अभिगृहीत किया गया था । इसके अतिरिक्त, तारीख 28 सितंबर, 2016 के स्टांप-पत्र तथा तारीख 16 जून, 2017 का चैक अभिगृहीत नहीं किया गया है । अभियोक्त्री द्वारा अभिकथित रूप से अपीलार्थी को दिए गए जेवरात भी अभिगृहीत नहीं किए गए हैं । ऐसी सामग्री के अभाव में, अपीलार्थी के विरुद्ध बलात्संग और अभित्रास के आरोपों को अभियोजन पक्ष के लिए साबित करना वास्तव में असंभव होगा ।

18. हमने भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अधीन उपबंधित बलात्संग की परिभाषा का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है । हमने भारतीय दंड संहिता की धारा 376(2)(ढ) के उपबंधों का भी परिशीलन किया है, जो एक ही स्त्री के साथ बार-बार बलात्संग करने के अपराध के संबंध में है । भारतीय दंड संहिता की धारा 375 में किसी पुरुष द्वारा 'बलात्संग' को इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि यदि वह खंड (क)

से (घ) के निबंधनों के अनुसार इसमें वर्णित सात प्रकार की परिस्थितियों में कोई कार्य करता है । दूसरी प्रकार की परिस्थिति के अनुसार, कोई पुरुष बलात्संग करता है यदि वह उस स्त्री की सम्मति के बिना खंड (क) से (घ) में वर्णित प्रकार का कोई कृत्य करता है । सम्मति को स्पष्टीकरण 2 में परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ है कि जब स्त्री शब्दों, भाव-भंगिमा या मौखिक या अमौखिक संसूचना के रूप में विनिर्दिष्ट लैंगिक कृत्य में सम्मिलित होने के लिए रजामंदी संसूचित करती है तो यह असंदिग्ध रूप से स्वैच्छिक सहमति देना है । तथापि, इसके परंतुक में स्पष्ट किया गया है कि कोई स्त्री जो प्रवेशन के कृत्य का शारीरिक रूप से विरोध नहीं करती, केवल इस तथ्य के कारण ही लैंगिक क्रियाकलाप के लिए सम्मति देना नहीं समझा जाएगा ।

19. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और मामले के संपूर्ण सिंहावलोकन के पश्चात् हमारा यह मत है कि अभियोक्त्री और अपीलार्थी के बीच शारीरिक संबंध उसकी इच्छा के विरुद्ध और उसकी सम्मति के बिना होना नहीं कहा जा सकता है । उपलब्ध सामग्री के आधार पर बलात्संग या आपराधिक अभित्रास का कोई मामला नहीं बनता है ।

20. प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने भारतीय दंड संहिता की धारा 90 के उपबंधों का, विशिष्ट रूप से "तथ्य के भ्रम के अधीन" अभिव्यक्ति का पर्याप्त अवलंब लिया है । भारतीय दंड संहिता की धारा 90 इस प्रकार है :–

> "**90. सम्मति, जिसके संबंध में यह ज्ञात हो कि वह भय या भ्रम के अधीन की गई है –** कोई सम्मति ऐसी सम्मति नहीं है जैसी इस संहिता की किसी धारा से आशयित है, यदि वह सम्मति किसी व्यक्ति ने क्षति, भय के अधीन, या तथ्य के भ्रम के अधीन दी हो, कोई भी कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो या उसके पास विश्वास करने का कारण हो कि ऐसे भय या भ्रम के परिणामस्वरूप वह सम्मति दी गई थी ; अथवा
>
> **उन्मत्त व्यक्ति की सम्मति –** यदि वह सम्मति ऐसे व्यक्ति ने दी हो जो चित्तविकृति या मत्तता के कारण उस बात की, जिसके

लिए वह अपनी सम्मति देता है, प्रकृति और परिणाम को समझने में असमर्थ हो ; अथवा

शिशु की सम्मति – जब तक कि संदर्भ से तत्प्रतिकूल प्रतीत न हो, यदि वह सम्मति ऐसे व्यक्ति ने दी हो जो बारह वर्ष से कम आयु का है ।"

21. भारतीय दंड संहिता की धारा 90 में कहा गया है कि कोई सम्मति ऐसी सम्मति नहीं है जैसी भारतीय दंड संहिता की धारा की किसी धारा से आशयित है, यदि वह सम्मति किसी व्यक्ति ने क्षति, भय के अधीन, या तथ्य के भ्रम के अधीन दी हो ।

22. **डा. धुवराम मुरलीधर सोनार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 90 की परीक्षा करने के पश्चात् निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

"इस प्रकार, धारा 90 में यद्यपि 'सम्मति' को परिभाषित नहीं किया गया है, किंतु यह वर्णित किया गया है कि 'सम्मति' क्या नहीं है । सम्मति अभिव्यक्त या विवक्षित, प्रपीड़क या भ्रांतिजनक, स्वेच्छा से या प्रवंचना द्वारा अभिप्राप्त की गई हो सकती है । यदि शिकायतकर्ता द्वारा सम्मति तथ्य के भ्रम के अधीन दी जाती है, तो यह दूषित है । धारा 375 के प्रयोजन के लिए सम्मति के लिए स्वेच्छा से भागीदारी न केवल कार्य के महत्व और नैतिक गुणवत्ता के ज्ञान पर आधारित बुद्धि का प्रयोग करने के पश्चात् होनी चाहिए, अपितु विरोध और सहमति के बीच विकल्प का पूरी तरह प्रयोग करने के पश्चात् ही की गई होनी चाहिए । क्या कोई सम्मति थी या नहीं, इसको सभी सुसंगत परिस्थितियों का सावधानी से अध्ययन करके अभिनिश्चित किया जाना चाहिए ।"

23. **प्रमोद सूर्यभान पंवार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामले में भी इस न्यायालय ने सम्मति के संदर्भ में भारतीय दंड संहिता की धारा

---

[1] (2019) 18 एस. सी. सी. 191.

[2] (2019) 9 एस. सी. सी. 608.

375 और भारतीय दंड संहिता की धारा 90 के बीच पारस्परिक प्रभाव की परीक्षा की और अभिनिर्धारित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के संबंध में सम्मति में परिस्थितियों, क्रियाओं और प्रस्तावित कृत्य के परिणामों की सक्रिय समझ अंतर्वलित होती है । कोई व्यक्ति, जो विभिन्न आनुकल्पिक क्रियाओं (या निष्क्रियाओं) तथा ऐसी क्रिया (या निष्क्रिया) से निकलने वाले विभिन्न संभाव्य परिणामों का मूल्यांकन करने के पश्चात् कार्य करने का एक सुविचारित विकल्प चुनता है, तो ऐसी क्रिया की सम्मति देता है । इस न्यायालय ने विभिन्न निर्णयज विधियों पर विचार-विमर्श करने के पश्चात् विधिक स्थिति का निम्न प्रकार से सारांश दिया :–

> "विधिक स्थिति का सारांश जो उपरोक्त मामलों से प्रकटित होता है यह है कि धारा 375 के संबंध में किसी स्त्री की 'सम्मति' में प्रस्तावित कृत्य के प्रति अवश्य एक सक्रिय और सुविचारित विमर्श होना चाहिए । यह सिद्ध करने के लिए कि क्या 'सम्मति' विवाह करने के किसी वचन से उद्भूत 'किसी तथ्य के भ्रम' द्वारा दूषित थी या नहीं, दोनों प्रतिपादनाओं को अवश्य सिद्ध किया जाना चाहिए । विवाह करने का वचन अवश्य एक मिथ्या वचन होना चाहिए जो सद्भावपूर्वक दिया गया हो और इसे देने के समय पर इसे पूरा करने का कोई आशय न रहा हो । मिथ्या वचन की स्वयमेव अव्यवहित सुसंगता, लैंगिक कृत्य में सम्मिलित करने के लिए स्त्री के विनिश्चय के साथ प्रत्यक्ष संबंध होना चाहिए ।"

24. प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने "तथ्य का भ्रम" अभिव्यक्ति पर जोरदार अवलंब लिया था । तथापि, हमारे अनुसार, यहां कोई तथ्य का भ्रम नहीं है । आरंभ से ही अभियोजन का यह पक्षकथन रहा है कि जब अपीलार्थी अभियोक्त्री के साथ संबंध बनाने पर जोर दे रहा था, तो अभियोक्त्री ने इसे इस आधार पर अस्वीकार कर दिया था कि अपीलार्थी उसके छोटे भाई का मित्र है और उसके जीजा का एक दूर का नातेदार है । इसके अतिरिक्त, अभियोक्त्री के अनुसार अपीलार्थी आयु में उससे छोटा हे । तो भी, अभियोक्त्री अपीलार्थी के साथ एक मंदिर में

गई, जहां उसने स्वेच्छा से एक झरने के नीचे स्नान किया । उसका यह अभिकथन कि अपीलार्थी ने गुप्त रूप से उसकी उस समय तस्वीरें खींच ली थीं जब वह स्नान कर रही थी और बाद में वस्त्र बदल रही थी तथा इन तस्वीरों से वह उसका भयादोहन कर रहा था, ऐसी तस्वीरों या उस मोबाइल फोन जिससे अपीलार्थी द्वारा ऐसी तस्वीरें खींची गई थीं, के अभिग्रहण के अभाव में निराधार हो जाता है । यदि, वास्तव में, वह अपीलार्थी से किसी प्रकार से भयभीत थी, तो इससे इस तर्क का खंडन हो जाता है जब अभियोक्त्री अपीलार्थी के साथ ग्वालियर से डाबरा गई थी, जो एक ऐसी यात्रा थी जो उन्होंने एक साथ रेलगाड़ी से की थी । ग्वालियर पहुंचने पर वह अपीलार्थी के साथ एक स्कूटर पर अनुपम नगर में एक किराए के परिसर में गई, जहां उसके अभिकथन किए गए अनुसार अपीलार्थी ने उसके साथ जबरदस्ती की । किंतु उसने किसी भी समय पर कोई आवाज नहीं उठाई या शोर नहीं मचाया । बल्कि, वह अपीलार्थी के साथ डाबरा वापस लौट आई । इससे संबंध समाप्त नहीं हुए । यहां तक कि उसके पश्चात् भी संबंध जारी रहे । स्वयं अभियोक्त्री का यह पक्षकथन है कि एक सुसंगत समय पर दोनों परिवारों के सदस्य उनके विवाह के बारे में चर्चा करने के लिए मिले थे किंतु उनके विवाह के संबंध में किसी अंतिम निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सका । केवल उसके पश्चात् ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी । जैसा कि पहले ही ऊपर उल्लेख किया गया है, पुलिस द्वारा न तो शपथपत्र और न ही स्टांप-पत्र बरामद या अभिगृहीत किए गए हैं, और यही बात जेवरात के संबंध में भी है । अपीलार्थी को दिया गया अभियोक्त्री की माता के अभिकथित चैक या बैंक के विवरण को पुलिस द्वारा एकत्रित नहीं किया गया है जिससे यह उपदर्शित हो सके कि ऐसे धन का अंतरण हुआ था । ऐसी सामग्री के अभाव में अभियोक्त्री के पक्षकथन का संपूर्ण ताना-बाना ध्वस्त हो जाता है । इस प्रकार, अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने की मुश्किल से कोई संभावना है । वास्तव में, यह एक ऐसा मामला तक नहीं है जिसका विचारण किया जा सके । यह एक सहमतिजन्य संबंध का मामला प्रतीत होता है, जो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने के कारण कटु हो गया था । इन परिस्थितियों में, इस

न्यायालय का मत है कि इन सामग्रियों के आधार पर अपीलार्थी को दांडिक विचारण का सामना करने के लिए बाध्य करना और कुछ नहीं अपितु न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करना होगा ।

25. मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि से निम्नलिखित सुसंगत विशेषताएं निकाली जा सकती हैं :–

(i) अपीलार्थी और अभियोक्त्री के बीच संबंध एक सहमति-जन्य प्रकृति का था ;

(ii) पक्षकार लगभग दो वर्षों की अवधि से संबंध में थे ; और

(iii) यद्यपि पक्षकारों और उनके परिवार के सदस्यों के बीच विवाह के संबंध में बातचीत हुई थी, किंतु वह फलीभूत नहीं हुई और परिणामस्वरूप प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी ।

26. इस स्थिति में और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, हमारा मत है कि यह न्याय के हित में होगा यदि इस प्रक्रम पर ही कार्रवाइयों को समाप्त कर दिया जाए । परिणामतः, उच्च न्यायालय के तारीख 3 अक्तूबर, 2019 के आक्षेपित आदेश और सेशन न्यायाधीश के तारीख 24 अप्रैल, 2019 के आदेश को तद्द्वारा अपास्त और अभिखंडित किया जाता है ।

27. परिणामतः, 2008 के सेशन विचारण सं. 505 में 10वें अपर सेशन न्यायाधीश, ग्वालियर के समक्ष लंबित कार्यवाहियों को तद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है ।

28. परिणामतः, यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 (1890 का अधिनियम संख्यांक 8)[1]

[21 मार्च, 1890]

संरक्षक और प्रतिपाल्य से सम्बन्धित विधि का समेकन और संशोधन करने के लिए अधिनियम

संरक्षक और प्रतिपाल्य से सम्बन्धित विधि का समेकन और संशोधन करना समीचीन है, अतः एतद्द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित किया जाता है :–

अध्याय 1
प्रारम्भिक

1. **नाम, विस्तार और प्रारम्भ** – (1) यह अधिनियम संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 कहा जा सकेगा ।

(2) इसका विस्तार [2][जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय] सम्पूर्ण भारत पर है । [3]*** ; [4]*** ।

---

[1] यह अधिनियम 1963 के विनियम 6 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा दादरा और नागर हवेली पर, 1965 के विनियम 8 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा सम्पूर्ण लक्षद्वीप संघ राज्यक्षेत्र पर और अधिसूचना सं. का. आ. 644 (अ), तारीख 24-8-1984, भारत के राजपत्र, असाधारण, भाग 2, खंड 3(ii) द्वारा (1-9-1984 से) सिक्किम पर विस्तारित किया गया ;

यह अधिनियम निम्नलिखित उपांतरणों के साथ 1968 के अधिनियम सं. 26 द्वारा पांडिचेरी पर विस्तारित किया गया –

धारा 1 में, उपधारा (2) के पश्चात् निम्नलिखित अन्तःस्थापित करें :–

"परन्तु इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई बात पांडिचेरी के संघ राज्यक्षेत्र के रेनोसाओं को लागू नहीं होगी ।"।

[2] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "भाग ख राज्यों के सिवाय" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा "ब्रिटिश बलुचिस्तान को सम्मिलित करते हुए" शब्द निरसित ।

[4] 1949 के अधिनियम सं. 40 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "और" शब्द का लोप किया गया ।

(3) यह 1890 की जुलाई के प्रथम दिन को प्रवृत्त होगा ।

2. [**निरसन** ।] – निरसन अधिनियम, 1938 (1938 का 1) की धारा 2 और अनुसूची द्वारा निरसित ।

3. **प्रतिपाल्य अधिकरण और चार्टरित उच्च न्यायालयों की अधिकारिता की व्यावृत्ति** – यह अधिनियम किसी भी राज्य के, [1][2] [जिस पर इस अधिनियम का विस्तार है,] किसी सक्षम विधान-मण्डल, प्राधिकारी या व्यक्ति] द्वारा किसी प्रतिपाल्य अधिकरण से सम्बन्धित एतद्पूर्व या एतद्पश्चात् पारित हर अधिनियमिति के अध्यधीन रहते हुए पढ़ा जाएगा, और इस अधिनियम की किसी बात का यह अर्थ न लगाया जाएगा कि वह किसी प्रतिपाल्य अधिकरण की अधिकारिता या प्राधिकार पर प्रभाव डालती है अथवा उसे किसी प्रकार से अल्पीकृत करती है, अथवा उस शक्ति को, जो [3][उच्च न्यायालय [4]***] के पास है, ले लेती है ।

4. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, जब तक कि विषय या संदर्भ में कोई बात विरुद्ध न हो, –

(1) "अप्राप्तवय" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जिसके बारे में भारतीय प्राप्तवयता अधिनियम, 1875 (1875 का 9) के उपबन्धों के अधीन यह समझा जाता है कि वह प्राप्तवयता को नहीं पहुंचा है ;

(2) "संरक्षक" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जो अप्राप्तवय के शरीर की या उसकी सम्पत्ति की, या उसके शरीर और संपत्ति दोनों की देखरेख रखता है ;

(3) "प्रतिपाल्य" से ऐसा अप्राप्तवय अभिप्रेत है, जिसके शरीर

---

[1] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल अथवा सपरिषद् गवर्नर या लेफ्टिनेंट द्वारा" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "भाग क राज्यों और भाग ग राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "विक्टोरिया स्टेट्यूट 24 और 25, अध्याय 104 (भारत में उच्च न्यायालय स्थापित करने के लिए अधिनियम) के अधीन कोई उच्च न्यायालय स्थापित" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[4] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "भाग क राज्यों तथा भाग ग राज्यों में स्थापित" शब्दों का लोप किया गया ।

या सम्पत्ति, या दोनों के लिए कोई संरक्षक है ;

(4) "जिला न्यायालय" का वही अर्थ है, जो "डिस्ट्रिक्ट कोर्ट" को कोड आफ सिविल प्रोसीजर, 1882 (1882 का 14)[1] में समनुदेशित है ; और मामूली आरम्भिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में उच्च न्यायालय इसके अन्तर्गत आता है ;

[2][(5) "न्यायालय" से –

(क) वह जिला न्यायालय अभिप्रेत है जो किसी व्यक्ति को संरक्षक नियुक्त या घोषित करने वाले आदेश के लिए इस अधिनियम के अधीन आवेदन को ग्रहण करने की अधिकारिता रखता है ; अथवा

(ख) जहां कि ऐसे किसी आवेदन के अनुसरण में कोई संरक्षक नियुक्त या घोषित किया जा चुका है, वहां -

(i) वह न्यायालय, जिसने या उस आफिसर का न्यायालय, जिसने संरक्षक को नियुक्त या घोषित किया है या जो इस अधिनियम के अधीन संरक्षक को नियुक्त या घोषित करने वाला समझा जाता है, अभिप्रेत है ; अथवा

(ii) प्रतिपाल्य के शरीर से सम्बन्धित किसी भी मामले में, वह जिला न्यायालय अभिप्रेत है, जिसकी अधिकारिता ऐसे स्थान पर है, जहां प्रतिपाल्य तत्समय मामूली तौर पर निवास करता है ; अथवा

(ग) धारा 4क के अधीन अन्तरित किसी कार्यवाही के सम्बन्ध में उस आफिसर का न्यायालय अभिप्रेत है जिसे ऐसी कार्यवाही अन्तरित की गई है ;]

(6) "कलक्टर" से जिले के राजस्व प्रशासन का भारसाधक

---

[1] अब देखिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) ।

[2] 1926 के अधिनियम सं. 4 की धारा 2 द्वारा मूल खण्ड (5) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

मुख्य आफिसर अभिप्रेत है, और ऐसा कोई भी आफिसर इसके अन्तर्गत आता है, जिसे राज्य सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा किसी भी स्थानीय क्षेत्र में, या व्यक्तियों के किसी वर्ग के बारे में, इस अधिनियम के समस्त या किन्हीं प्रयोजनों के लिए नाम से या पदेन कलक्टर होने के लिए नियुक्त करें ;

[1]* * * *

तथा

(8) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ।

[2][4क. **अधीनस्थ न्यायिक आफिसरों को अधिकारिता प्रदत्त करने की और ऐसे आफिसरों को कार्यवाहियां अन्तरित करने की शक्ति** – (1) उच्च न्यायालय आरंभिक सिविल अधिकारिता का प्रयोग करने वाले किसी ऐसे अधिकारी को, जो जिला न्यायालय के अधीनस्थ है, अथवा जिला न्यायालय के न्यायाधीश को उसके अधीनस्थ किसी ऐसे आफिसर को यह शक्ति देने का प्राधिकार कि ऐसा आफिसर इस धारा के अधीन उसे अन्तरित इस अधिनियम के अधीन की किन्हीं भी कार्यवाहियों को निपटाए, साधारण या विशेष आदेश द्वारा दे सकेगा ।

(2) जिला न्यायालय का न्यायाधीश, इस अधिनियम के अधीन की किसी भी ऐसी कार्यवाही का, जो उसके न्यायालय में लंबित है, लिखित आदेश द्वारा किसी भी प्रक्रम में अन्तरण अपने अधीनस्थ किसी भी ऐसे आफिसर को जो उपधारा (1) के अधीन सशक्त किया गया है उसे निपटाने के लिए कर सकेगा ।

(3) जिला न्यायालय का न्यायाधीश अपने न्यायालय को या अपने अधीनस्थ किसी आफिसर को, जो उपधारा (1) के अधीन सशक्त किया गया है, इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही को, जो ऐसे आफिसर को जो ऐसे किसी अन्य आफिसर के न्यायालय में लम्बित है, किसी भी प्रक्रम में अन्तरित कर सकेगा ।

---

[1] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा खण्ड (7) का लोप किया गया ।

[2] 1926 के अधिनियम सं. 4 की धारा 3 द्वारा अन्तःस्थापित ।

(4) जब कि किसी ऐसे मामले में, जिसमें कोई संरक्षक नियुक्त या घोषित किया जा चुका है, कोई कार्यवाहियां इस धारा के अधीन अन्तरित की जाती हैं तब जिला न्यायालय का न्यायाधीश लिखित आदेश द्वारा घोषणा कर सकेगा कि उस न्यायाधीश का न्यायालय अथवा वह आफिसर जिसे वे अन्तरित की गई हैं, इस अधिनियम के सभी प्रयोजनों या उनमें से किन्हीं के लिए वह न्यायालय समझा जाएगा जिसने संरक्षक की नियुक्ति या घोषणा की थी ।]

अध्याय 2
संरक्षकों की नियुक्ति और घोषणा

5. [**यूरोपीय ब्रिटिश प्रजा की दशा में माता-पिता को नियुक्त करने की शक्ति ।**] – भाग ख राज्य (विधि) अधिनियम, 1951 (1951 का 3) की धारा 3 और अनुसूची द्वारा निरसित ।

6. **अन्य दशाओं में नियुक्त करने की शक्ति की व्यावृत्ति** - अप्राप्तवय की दशा में [1]*** इस अधिनियम की किसी बात का यह अर्थ न लगाया जाएगा कि वह उसके शरीर या सम्पत्ति या दोनों का संरक्षक नियुक्त करने की किसी ऐसी शक्ति को लेती है या अल्पीकृत करती है, जो उस विधि की दृष्टि से विधिमान्य है, जिसके वह अप्राप्तवय अध्यधीन है ।

7. **संरक्षकता के बारे में न्यायालय की आदेश करने की शक्ति** – (1) जहां कि न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अप्राप्तवय का इसमें कल्याण है कि –

(क) उसके शरीर या सम्पत्ति, या दोनों के लिए संरक्षक की नियुक्ति करने वाला, अथवा

(ख) किसी व्यक्ति को ऐसा संरक्षक घोषित करने वाला,

आदेश किया जाए, वहां न्यायालय तद्नुसार आदेश कर सकेगा ।

(2) इस धारा के अधीन दिए गए आदेश से यह विवक्षित होगा कि

---

[1] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "जो यूरोपीय ब्रिटिश प्रजा नहीं है" शब्दों का लोप किया गया है ।

कोई भी संरक्षक, जो विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त या न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित नहीं किया गया है, हटा दिया गया है ।

(3) जहां कि कोई संरक्षक विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त या न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है, वहां उसके स्थान पर दूसरे व्यक्ति को संरक्षक नियुक्त या घोषित करने का इस धारा के अधीन कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक पूर्वोक्त नियुक्त या घोषित संरक्षक, की शक्तियां इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन परिविरत न हो गई हों ।

8**. आदेश के लिए आवेदन करने के हकदार व्यक्ति** – अन्तिम पूर्वगामी धारा के अधीन कोई आदेश निम्नलिखित के आवेदन पर किए जाने के सिवाय न किया जाएगा –

(क) अप्राप्तवय का संरक्षक बनने के लिए वांछा या होने का दावा करने वाला व्यक्ति, अथवा

(ख) अप्राप्तवय का कोई भी नातेदार या मित्र, अथवा

(ग) उस जिले या अन्य स्थानीय क्षेत्र का कलक्टर जिसके भीतर अप्राप्तवय मामूली तौर से निवास करता है या जिसमें उसकी सम्पत्ति है, अथवा

(घ) जिस वर्ग का अप्राप्तवय है, उसके बारे में प्राधिकार रखने वाला कलक्टर ।

9. **आवेदन ग्रहण करने की अधिकारिता रखने वाला न्यायालय** – (1) यदि आवेदन अप्राप्तवय के शरीर की संरक्षकता के बारे में है तो वह उस जिला न्यायालय में किया जाएगा जिसकी उस स्थान में अधिकारिता है जहां अप्राप्तवय मामूली तौर से निवास करता है ।

(2) यदि आवेदन अप्राप्तवय की सम्पत्ति की संरक्षकता के बारे में है तो वह या तो उस जिला न्यायालय में किया जा सकेगा, जिसकी उस स्थान में अधिकारिता है जहां अप्राप्तवय मामूली तौर से निवास करता है या उस जिला न्यायालय में किया जा सकेगा, जिसकी अधिकारिता ऐसे स्थान में है, जहां उसकी सम्पत्ति है ।

(3) यदि अप्राप्तवय की सम्पत्ति की संरक्षकता के बारे में आवेदन ऐसे जिला न्यायालय में किया गया है, जो उस स्थान में अधिकारिता रखने वाला जिला न्यायालय से भिन्न है, जिसमें अप्राप्तवय मामूली तौर से निवास करता है, तो यदि उस न्यायालय की यह राय है कि उसका निपटारा अधिकारिता रखने वाले किसी अन्य जिला न्यायालय द्वारा अधिक न्यायसंगत तौर पर या सुविधा से किया जा सकेगा तो वह उस आवेदन को लौटा सकेगा ।

10. **आवेदन का प्ररूप** – (1) यदि आवेदन कलक्टर द्वारा नहीं किया जाता, तो वह उस प्रकार से, जो वादपत्र के हस्ताक्षर और सत्यापन के लिए कोड आफ सिविल प्रोसीजर,1882[1] (1882 का 14) द्वारा विहित है, हस्ताक्षर और सत्यापित अर्जी द्वारा किया जाएगा जिसमें निम्नलिखित का कथन होगा जहां तक कि वे अभिनिश्चित किए जा सकें -

(क) अप्राप्तवय का नाम, लिंग, धर्म, जन्म तिथि और मामूली निवास-स्थान ;

(ख) जहां कि अप्राप्तवय नारी है, वहां यह कि वह विवाहिता है या नहीं, और यदि है, तो उसके पति का नाम और आयु ;

(ग) अप्राप्तवय की सम्पत्ति की, यदि कोई हो, प्रकृति, स्थिति और लगभग मूल्य ;

(घ) अप्राप्तवय के शरीर या सम्पत्ति की अभिरक्षा या कब्जा रखने वाले व्यक्ति का नाम और निवास-स्थान ;

(ङ) अप्राप्तवय के निकट नातेदार कौन हैं, और वे कहां निवास करते हैं ;

(च) यह कि अप्राप्तवय के शरीर या सम्पत्ति या दोनों का संरक्षक किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा नियुक्त किया गया है या नहीं, जो उस विधि से, जिसके अध्यधीन अप्राप्तवय है, ऐसी नियुक्ति करने का हक रखता है या हक रखने का दावा करता है ;

---

[1] अब देखिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) ।

(छ) यह कि अप्राप्तवय के शरीर या सम्पत्ति, या दोनों की संरक्षकता के बारे में आवेदन उस न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय से किसी समय किया गया है या नहीं, और यदि किया गया है, तो कब, और किस न्यायालय से किया गया और उसका परिणाम क्या हुआ ;

(ज) यह कि क्या आवेदन अप्राप्तवय के शरीर या उसकी सम्पत्ति या दोनों के संरक्षक की नियुक्ति या घोषणा के लिए है ;

(झ) जहां कि आवेदन संरक्षक नियुक्त करने के लिए है, वहां प्रस्थापित संरक्षक की अर्हताएं ;

(ञ) जहां कि आवेदन किसी व्यक्ति को संरक्षक घोषित करने के लिए है, वहां वे आधार जिस पर वह व्यक्ति दावा करता है ;

(ट) वे हेतुक जिनसे प्रेरित होकर आवेदन किया गया है ; तथा

(ठ) ऐसी अन्य विशिष्टियां, यदि कोई हों, जैसी विहित की जाएं या जिनका कथन किया जाना आवेदन की प्रकृति आवश्यक बना देती है ।

(2) यदि आवेदन कलक्टर द्वारा किया जाता है, तो वह न्यायालय को संबोधित और डाक द्वारा ऐसे अन्य प्रकार से, जो सुविधाजनक पाया जाए, भेजे गए पत्र द्वारा होगा और उपधारा (1) में वर्णित विशिष्टियों का यावत्संभव कथन करेगा ।

(3) प्रस्थापित संरक्षक की कार्य करने के लिए रजामंदी की घोषणा आवेदन के साथ देनी होगी और उस घोषणा को उसे हस्ताक्षरित करना होगा और वह न्यूनतम दो साक्षियों द्वारा अनुप्रमाणित होंगी ।

11. **आवेदन के ग्रहण किए जाने पर प्रक्रिया** – (1) यदि न्यायालय का समाधान हो जाता है कि आवेदन पर कार्यवाही करने के लिए आधार है, तो वह उसकी सुनवाई के लिए दिन नियत करेगा, और आवेदन की, और सुनवाई के लिए नियत तारीख की सूचना –

(क) की तामील कोड आफ सिविल प्रोसीजर, 1882[1] (1882 का 14) में निदेशित प्रकार से –

[1] अब देखिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) ।

(i) अप्राप्तवय की माता या पिता पर कराएगा, यदि वे किसी [1][ऐसे राज्य में निवास करते हों, जिस पर इस अधिनियम का विस्तार है],

(ii) उस व्यक्ति पर, यदि कोई हो, कराएगा जो अर्जी में या पत्र में अप्राप्तवय के शरीर या सम्पत्ति की अभिरक्षा या कब्जा रखने वाले के तौर पर नामित है,

(iii) उस व्यक्ति पर कराएगा, जो आवेदन या पत्र में संरक्षक नियुक्त या घोषित किए जाने के लिए प्रस्थापित है जब तक कि वह व्यक्ति स्वयं ही आवेदक न हो, तथा

(iv) अन्य किसी व्यक्ति पर कराएगा जिसे न्यायालय की राय में आवेदन की विशेष सूचना दी जानी चाहिए ; तथा

(ख) न्याय सदन के और अप्राप्तवय के निवास-स्थान के किसी सहजदृश्य भाग पर लगवाएगा, और अन्यथा ऐसे प्रकार से प्रकाशित कराएगा, जैसा उच्च न्यायालय द्वारा इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों के अध्यधीन रहते हुए वह न्यायालय ठीक समझे ।

(2) राज्य सरकार, साधारण या विशेष आदेश द्वारा अपेक्षित कर सकेगी कि जब धारा 10 की उपधारा (1) के अधीन की अर्जी में वर्णित सम्पत्ति का कोई भाग ऐसी भूमि है जिसका अधीक्षण प्रतिपाल्य अधिकरण ले सकता है ; तब न्यायालय उस कलक्टर पर, जिसके जिले में अप्राप्तवय मामूली तौर से निवास करता है, और हर कलक्टर पर, जिसके जिले में ऐसी भूमि का कोई भी प्रभाग स्थित है, पूर्वोक्त सूचना की भी तामील कराएगा, और कलक्टर ऐसे प्रकार से, जिसे वह ठीक समझे, उस सूचना को प्रकाशित कराएगा ।

(3) उपधारा (2) के अधीन तामील या प्रकाशित की गई किसी सूचना की तामील या प्रकाशन के लिए कोई प्रभार न्यायालय या कलक्टर द्वारा नहीं लिया जाएगा ।

12. **अप्राप्तवय के पेश किए जाने और शरीर तथा सम्पत्ति के अन्तरिम संरक्षण के लिए अन्तर्वर्ती आदेश देने की शक्ति** – (1)

---

[1] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "किसी भाग क राज्य या किसी भाग ग राज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

न्यायालय निदेश दे सकेगा कि वह व्यक्ति, यदि कोई हो, जिसकी अभिरक्षा में अप्राप्तवय है उसे ऐसे स्थान और समय पर और ऐसे व्यक्ति के समक्ष, जिसे उस न्यायालय ने नियुक्त किया है, पेश करे या कराए और न्यायालय अप्राप्तवय के शरीर या सम्पत्ति की अस्थायी अभिरक्षा और संरक्षण के लिए ऐसा आदेश दे सकेगा जैसा वह उचित समझे ।

(2) यदि अप्राप्तवय ऐसी लड़की है, जिसे लोक समक्ष आने के लिए विवश नहीं किया जाना चाहिए, तो उपधारा (1) के अधीन उसके पेश किए जाने के निदेश में यह अपेक्षा होगी कि वह देश की रूढ़ियों और रीतियों के अनुसार पेश की जाए ।

(3) इस धारा की कोई भी बात –

(क) किसी अप्राप्तवय लड़की को ऐसे व्यक्ति को, जो इस आधार पर कि वह उसका पति है उसका संरक्षक होने का दावा करता है, अस्थायी अभिरक्षा में रखने को न्यायालय को तब के सिवाय, प्राधिकृत न करेगी जब कि वह लड़की अपने माता-पिता की, यदि कोई हो, सम्मति से अभिरक्षा में पहले से ही है, अथवा

(ख) उस व्यक्ति को, जिसे अप्राप्तवय की सम्पत्ति की अस्थायी अभिरक्षा और संरक्षण न्यस्त है, प्राधिकृत न करेगी कि वह किसी व्यक्ति को, जो भी ऐसी सम्पत्ति पर कब्जा रखता है, विधि के सम्यक् अनुक्रम से अन्यथा बेकब्जा करे ।

13. **आदेश करने से पहले साक्ष्य की सुनवाई** – आवेदन की सुनवाई के लिए नियत दिन को, या तत्पश्चात् यथाशक्य शीघ्र न्यायालय वह साक्ष्य सुनेगा, जो आवेदन के समर्थन में या विरोध में दिया जाए ।

14. **विभिन्न न्यायालयों में साथ-साथ कार्यवाहियां** – (1) यदि अप्राप्तवय के संरक्षक की नियुक्ति या घोषणा के लिए कार्यवाहियां एक से अधिक न्यायालयों में की जाती हैं तो उन न्यायालयों में से हर एक अन्य न्यायालय या न्यायालयों में की कार्यवाहियों से अवगत कराए जाने पर, अपने समक्ष की कार्यवाहियों को रोक देगा ।

(2) यदि वे दोनों या सभी न्यायालय एक ही उच्च न्यायालय के अधीनस्थ हैं, तो वे मामले की रिपोर्ट उस उच्च न्यायालय को करेंगे, और वह उच्च न्यायालय अवधारित करेगा कि इन न्यायालयों में से किसमें

अप्राप्तवय के संरक्षक की नियुक्तियों या घोषणा के बारे में कार्यवाहियां की जाएंगी ।

[1][(3) अन्य किसी दशा में, जिसमें उपधारा (1) के अधीन कार्यवाहियां रोकी जाती हैं, न्यायालय अपनी-अपनी राज्य सरकार को मामले की रिपोर्ट करेंगे और उससे मिले आदेशों से मार्गदर्शित होंगे ।]

15. **कई संरक्षकों की नियुक्ति या घोषणा** – (1) यदि उस विधि के अनुसार, जिसके अप्राप्तवय अध्यधीन है, उसके शरीर या सम्पत्ति या दोनों के लिए दो या अधिक संयुक्त संरक्षक हो सकते हैं, तो न्यायालय, यदि वह ठीक समझे, उन्हें नियुक्त या घोषित कर सकेगा ।

[2]* * * *

(4) अप्राप्तवय के शरीर के लिए और सम्पत्ति के लिए पृथक्-पृथक् संरक्षक नियुक्त या घोषित किए जा सकेंगे ।

(5) यदि अप्राप्तवय की कई सम्पत्तियां हैं, तो न्यायालय यदि वह ठीक समझे, उन सम्पत्तियों में से किसी एक या अधिक के लिए पृथक्-पृथक् संरक्षक की नियुक्ति या घोषणा कर सकेगा ।

16. **न्यायालय की अधिकारिता से परे की सम्पत्ति के लिए संरक्षक की नियुक्ति या घोषणा** – यदि न्यायालय अपनी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के परे स्थित किसी सम्पत्ति के लिए संरक्षक नियुक्त या घोषित करता है तो, जिस स्थान में सम्पत्ति स्थित है, वहां अधिकारिता रखने वाला न्यायालय संरक्षक नियुक्त या घोषित करने वाले आदेश की प्रमाणित प्रतिलिपि के पेश किए जाने पर उसे सम्यक् नियुक्त या घोषित संरक्षक के तौर पर प्रतिगृहीत करेगा और आदेश को प्रभावशील करेगा ।

17. **संरक्षक नियुक्त करने में न्यायालय द्वारा विचारणीय बातें** – (1) अप्राप्तवय का संरक्षक नियुक्त या घोषित करने में इस धारा के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए, न्यायालय उस विधि से संगत, जिसके

---

[1] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा मूल उपधारा (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा उपधारा (2) और (3) का लोप किया गया ।

अप्राप्तवय अध्यधीन है, उस बात से मार्गदर्शित होगा, जो उन परिस्थितियों में अप्राप्तवय के कल्याण के लिए प्रतीत हो ।

(2) यह विचार करने में कि अप्राप्तवय के लिए क्या कल्याणकर होगा, न्यायालय अप्राप्तवय की आयु, लिंग और धर्म, प्रस्थापित, संरक्षक शील और सामर्थ्य तथा अप्राप्तवय से रक्त संबंध में उसकी निकटता, मृत जनक की इच्छाओं को, यदि कोई हों और अप्राप्तवय से या उसकी सम्पत्ति से प्रस्थापित संरक्षक के किसी वर्तमान या पूर्वतम संबंधों को ध्यान में रखेगा ।

(3) यदि अप्राप्तवय इतनी आयु का है कि वह बुद्धिमत्तापूर्ण अधिमान कर सकता है तो न्यायालय उस अधिमान पर विचार कर सकेगा ।

[1]* * * *

(5) न्यायालय किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध संरक्षक नियुक्त या घोषित नहीं करेगा ।

18. **कलक्टर के पद के आधार पर नियुक्ति या घोषणा** – जहां कि कलक्टर अपने पद के आधार पर अप्राप्तवय के शरीर या सम्पत्ति या दोनों का संरक्षक होने के लिए न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया जाता है, वहां उसकी नियुक्ति या घोषणा करने वाला आदेश वह पद तत्समय धारण करने वाले व्यक्ति को, यथास्थिति, अप्राप्तवय के शरीर या सम्पत्ति, या दोनों के बारे में अप्राप्तवय के संरक्षक के तौर पर कार्य करने को प्राधिकृत और अपेक्षित करने वाला समझा जाएगा ।

19. **कतिपय दशाओं में न्यायालय द्वारा संरक्षक नियुक्त न किया जाना** – इस अध्याय की कोई भी बात न्यायालय को प्राधिकृत न करेगी कि वह ऐसे अप्राप्तवय की, जिसकी सम्पत्ति प्रतिपाल्य अधिकरण के अधीक्षण के अधीन है, सम्पत्ति का संरक्षक नियुक्त या घोषित करे, अथवा –

(क) उस अप्राप्तवय के, जो विवाहिता नारी है और जिसका पति न्यायालय की राय में उसके शरीर का संरक्षक होने के अयोग्य नहीं,

---

[1] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा उपधारा (4) का लोप किया गया ।

है, अथवा

[1][(ख) किसी विवाहिता नारी से भिन्न उस अप्राप्तवय के, जिसका पिता या माता जीवित है और न्यायालय की राय में अप्राप्तवय के शरीर का संरक्षक होने के अयोग्य नहीं है ; अथवा]

(ग) उस अप्राप्तवय के, जिसकी सम्पत्ति उसके शरीर का संरक्षक नियुक्त करने के लिए सक्षम प्रतिपाल्य अधिकरण के अधीक्षण के अधीन है,

शरीर का संरक्षक नियुक्त या घोषित करे ।

अध्याय 3
संरक्षकों के कर्तव्य, अधिकार और दायित्व
साधारण

20. **संरक्षक का प्रतिपाल्य से वैश्वासिक संबंध** – (1) संरक्षक का अपने प्रतिपाल्य से वैश्वासिक संबंध होता है, और विल या अन्य लिखत द्वारा, यदि कोई हो, जिसमें वह नियुक्त किया गया है, या इस अधिनियम द्वारा, यथा उपबंधित के सिवाय, वह अपने पद से कोई लाभ नहीं उठाएगा ।

(2) अपने प्रतिपाल्य के प्रति संरक्षक के इस वैश्वासिक संबंध का विस्तार और प्रभाव संरक्षक द्वारा प्रतिपाल्य की सम्पत्ति के, और प्रतिपाल्य द्वारा संरक्षक की सम्पत्ति के ऐसे क्रयों पर होता है, जो प्रतिपाल्य की अप्राप्तवयता समाप्त होने के अव्यवहित या शीघ्र पश्चात् किए गए हैं, और साधारणतया उनके बीच तब किए गए सब संव्यवहारों पर होता है, जब संरक्षक का असर बना हुआ था या कुछ ही पहले तक बना रहा था ।

21. **संरक्षक के तौर पर कार्य करने की अप्राप्तवय की सामर्थ्य** – अप्राप्तवय, अपनी पत्नी या सन्तान के, या जहां कि वह अविभक्त हिन्दू कुटुम्ब का कर्ता है वहां उस कुटुम्ब के दूसरे अप्राप्तवय सदस्य की पत्नी या सन्तान के संरक्षक के तौर पर कार्य करने के सिवाय किसी भी अप्राप्तवय के संरक्षक के तौर पर कार्य करने के लिए अक्षम है ।

---

[1] 2010 के अधिनियम सं. 30 की धारा 2 द्वारा प्रतिस्थापित ।

22. **संरक्षक का पारिश्रमिक** – (1) न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक उस भत्ते का, यदि कोई हो, हकदार होगा, जिसे न्यायालय उसके कर्तव्यों के निष्पादन में उसकी सतर्कता और परिश्रम के लिए ठीक समझे ।

(2) जब कि सरकार का कोई आफिसर ऐसे आफिसर की हैसियत में, ऐसा संरक्षक होने के लिए नियुक्त या घोषित किया जाता है, तब प्रतिपाल्य की सम्पत्ति में से सरकार को ऐसी फीसें दी जाएंगी जैसी राज्य सरकार साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्दिष्ट करे ।

23. **संरक्षक के तौर पर कलक्टर पर नियंत्रण** – न्यायालय द्वारा अप्राप्तवय के शरीर या संपत्ति, या दोनों का संरक्षक होने के लिए नियुक्त या घोषित कलक्टर, अपने प्रतिपाल्य की संरक्षकता से सम्बन्धित, सब बातों में राज्य सरकार के या उस प्राधिकारी के, जैसा वह सरकार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना[1] द्वारा इस निमित्त नियुक्त करे, नियंत्रण के अध्यधीन होगा ।

शरीर का संरक्षक

24. **शरीर के संरक्षक के कर्तव्य** – प्रतिपाल्य के शरीर के संरक्षक पर प्रतिपाल्य की अभिरक्षा का भार है और उसे उसके संभाल, स्वास्थ्य और शिक्षा की और प्रतिपाल्य जिस विधि के अध्यधीन है उस द्वारा अपेक्षित अन्य बातों की ओर ध्यान देना होगा ।

25. **प्रतिपाल्य की अभिरक्षा का संरक्षक का हक** – (1) यदि प्रतिपाल्य अपने शरीर के संरक्षक की अभिरक्षा को छोड़ देता है या उससे हटा दिया जाता है, तो, यदि न्यायालय इस राय का है कि प्रतिपाल्य के लिए यह कल्याणकर होगा कि वह संरक्षक की अभिरक्षा में लौट आए, तो वह उसके लौट आने के लिए आदेश कर सकेगा और उस आदेश का प्रवर्तन कराने के प्रयोजन से प्रतिपाल्य को गिरफ्तार करा सकेगा और संरक्षक की अभिरक्षा में रखे जाने के लिए उसे परिदत्त करा सकेगा ।

---

[1] नियुक्ति करने वाले ऐसे प्राधिकारियों की बाबत अधिसूचनाओं के लिए जिनके नियंत्रण में अधिनियम के अधीन नियुक्त आयुक्त होंगे, देखिए विभिन्न स्थानीय नियम और आदेश ।

(2) प्रतिपाल्य की गिरफ्तारी के प्रयोजन से न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता, 1882[1] (1882 का 10) की धारा 100 द्वारा प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट को प्रदत्त शक्ति का प्रयोग कर सकेगा ।

(3) ऐसे व्यक्ति के पास, जो उसका संरक्षक नहीं है, प्रतिपाल्य का अपने संरक्षक की इच्छा के विरुद्ध निवास, स्वतः संरक्षकता का पर्यवसान नहीं कर देता ।

26. **प्रतिपाल्य का अधिकारिता से हटाया जाना** – (1) जो व्यक्ति न्यायालय द्वारा शरीर का संरक्षक नियुक्त या घोषित है, जब तक वह कलक्टर न हो अथवा विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त संरक्षक न हो, वह उस न्यायालय की इजाजत के बिना जिसके द्वारा वह नियुक्त या घोषित किया गया था प्रतिपाल्य को उन प्रयोजनों के सिवाय, जो विहित किए जाएं, उस न्यायालय की अधिकारिता की सीमाओं से बाहर नहीं हटाएगा ।

(2) न्यायालय द्वारा उपधारा (1) के अधीन अनुदत्त इजाजत विशेष या साधारण हो सकेगी, और उसे अनुदत्त करने वाले आदेश द्वारा परिभाषित की जा सकेगी ।

संपत्ति का संरक्षक

27. **सम्पत्ति के संरक्षक के कर्तव्य** – प्रतिपाल्य की सम्पत्ति का संरक्षक उस सम्पत्ति से ऐसी सतर्कता से बरतने के लिए आबद्ध है, जैसी से मामूली प्रज्ञा वाला व्यक्ति उससे बरतता यदि वह सम्पत्ति उसी की अपनी होती, और इस अध्याय के उपबंधों के अध्यधीन यह है कि वह वे सब कार्य कर सकेगा जो उसे सम्पत्ति के आपन, संरक्षा या फायदे के लिए युक्तियुक्त और उचित हैं ।

28. **वसीयती संरक्षक की शक्तियां** – जहां कि संरक्षक विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त किया गया है वहां अपने प्रतिपाल्य की स्थावर सम्पत्ति को बंधक या भारित करने या विक्रय, दान, विनिमय द्वारा या अन्यथा अन्तरित करने की उसकी शक्ति, उस निर्बन्धन के अध्यधीन, जो लिखत द्वारा अधिरोपित किया गया हो, तब के सिवाय होगी जब कि वह

[1] अब देखिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (1898 का 5) ।

इस अधिनियम के अधीन संरक्षक घोषित कर दिया गया है और उस घोषणा को करने वाले न्यायालय ने लिखित आदेश द्वारा वह स्थावर सम्पत्ति जो उस आदेश में विनिर्दिष्ट हो, आदेश द्वारा अनुज्ञात रीति से व्ययनित करने के लिए अनुज्ञा ऐसे निबंधन के होते हुए भी दे दी है ।

29. **न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किए गए सम्पत्ति के संरक्षक की शक्तियों की परिसीमा** – जहां कि कलक्टर से, या विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त संरक्षक से विभिन्न कोई व्यक्ति प्रतिपाल्य की सम्पत्ति का संरक्षक होने के लिए न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है, वहां वह न्यायालय की पूर्व अनुज्ञा के बिना –

(क) अपने प्रतिपाल्य की स्थावर सम्पत्ति के किसी भी भाग को बंधक या भारित नहीं करेगा, या विक्रय, दान, विनिमय द्वारा, या अन्यथा अन्तरित नहीं करेगा, अथवा

(ख) उस सम्पत्ति के किसी भाग को पांच वर्ष से अधिक की अवधि के लिए, या उस तारीख से, जिसको वह प्रतिपाल्य अप्राप्तवय न रहेगा, आगे एक वर्ष तक विस्तृत किसी अवधि के लिए पट्टे पर नहीं देगा ।

30. **धारा 28 या धारा 29 के उल्लंघन में किए गए अन्तरणों की शून्यकरणीयता** – संरक्षक द्वारा दोनों अन्तिम पूर्वगामी धाराओं में से किसी के उल्लंघन में स्थावर सम्पत्ति का व्ययन तद्द्वारा प्रभारित किसी भी अन्य व्यक्ति की प्रेरणा पर शून्यकरणीय है ।

31. **धारा 29 के अधीन अन्तरणों के लिए अनुज्ञा देने विषयक पद्धति** – (1) संरक्षक को धारा 29 में वर्णित कार्यों में से किसी को करने की अनुज्ञा न्यायालय आवश्यकता की दशा में देने के सिवाय या तब देने के सिवाय जबकि वह प्रतिपाल्य की सुव्यक्त भलाई के लिए हों, न देगा ।

(2) अनुज्ञा प्रदान करने वाले आदेश में, यथास्थिति, आवश्यकता या भलाई का परिवर्णन होगा या उस सम्पत्ति का वर्णन होगा जिसके संबंध में अनुज्ञात कार्य किया जाता है, और ऐसी शर्तें, यदि कोई हों, विनिर्दिष्ट होंगी, जैसी न्यायालय अनुज्ञात से संलग्न करना ठीक समझे, और वह उस न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा स्वयं अपने हाथ से अभिलिखित, दिनांकित और हस्ताक्षरित किया जाएगा अथवा जब किसी कारण से वह हाथ से

आदेश को अभिलिखित करने से निवारित हो तब वह उसके बोलने के अनुसार लिखा जाएगा तथा उस द्वारा दिनांकित और हस्ताक्षरित किया जाएगा ।

(3) न्यायालय अनुज्ञा के साथ स्वविवेक में शर्तें संलग्न कर सकेगा जिनमें अन्य शर्तों के अतिरिक्त निम्नलिखित शर्तें भी हो सकेंगी, अर्थात् :–

(क) यह कि विक्रय न्यायालय की मंजूरी के बिना पूर्ण नहीं किया जाएगा ;

(ख) यह कि विक्रय उस आशयित विक्रय की ऐसी उद्घोषणा के पश्चात् जैसी उच्च न्यायालय द्वारा इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों के अध्यधीन रहते हुए न्यायालय ने निर्दिष्ट की है, उस समय और स्थान पर, जो न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट किया जाएगा, लोक नीलामी द्वारा उस व्यक्ति को किया जाएगा जिसने न्यायालय के या न्यायालय द्वारा उस प्रयोजन के लिए विशेषतया नियुक्त व्यक्ति के समक्ष सबसे ऊंची बोली लगाई हो ;

(ग) यह कि पट्टा किसी प्रीमियम के प्रतिफल में न किया जाएगा या इतने वर्षों की अवधि के लिए और ऐसे भाटकों और प्रसंविदाओं के अध्यधीन किया जाएगा जो न्यायालय निर्दिष्ट करे ;

(घ) यह कि संरक्षक अनुज्ञात कार्य के सम्पूर्ण आगम या उनका कोई भाग न्यायालय से संवितरण किए जाने या विहित प्रतिभूतियों में न्यायालय द्वारा विनिहित किए जाने को अथवा अन्यथा ऐसे व्ययनित किए जाने को, जैसे न्यायालय निर्दिष्ट करे, न्यायालय में जमा करेगा ।

(4) संरक्षक को धारा 29 में वर्णित कार्य के करने की अनुज्ञा अनुदत्त करने से पहले न्यायालय अनुज्ञा देने के आवेदन की सूचना का प्रतिपाल्य के नातेदार या मित्र को दिलाया जाना कारित कर सकेगा जिसे न्यायालय की राय में उसकी सूचना मिलनी चाहिए, और आवेदन के विरोध में उपसंजात होने वाले किसी भी व्यक्ति को सुनेगा और उसका कथन अभिलिखित करेगा ।

32. **सम्पत्ति के संरक्षक की जो न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित**

किया गया है, शक्तियों में फेरफार – जहां कि प्रतिपाल्य की सम्पत्ति का संरक्षक न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है और ऐसा संरक्षक कलक्टर नहीं है, वहां न्यायालय प्रतिपाल्य की संपत्ति के बारे में उस संरक्षक की शक्तियों को आदेश द्वारा उस रीति से और विस्तार तक समय-समय पर परिभाषित, निर्बन्धित या विस्तारित कर सकेगा जिसे वह प्रतिपाल्य के फायदे के लिए और जिस विधि के अध्यधीन वह अप्राप्तवय है उस विधि से संगत समझे ।

33. **प्रतिपाल्य की संपत्ति के प्रबन्ध के लिए राय लेने को न्यायालय से आवेदन करने का ऐसे नियुक्त या घोषित संरक्षक का अधिकार** – (1) न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक उस न्यायालय से, जिसने उसे नियुक्त या घोषित किया है, अपने प्रतिपाल्य की संपत्ति के प्रबन्ध या प्रशासन विषयक किसी भी वर्तमान प्रश्न के संबंध में उस न्यायालय की राय, सलाह या निदेश के लिए अर्जी द्वारा आवेदन कर सकेगा ।

(2) यदि न्यायालय का यह विचार है कि वह प्रश्न संक्षिप्तत: निपटाए जाने योग्य है, तो वह अर्जी की प्रतिलिपि की तामील आवेदन में हितबद्ध ऐसे व्यक्तियों पर, जिन्हें न्यायालय ठीक समझे, कराएगा तथा वे उसकी सुनवाई में हाजिर रह सकेंगे ।

(3) जो संरक्षक अर्जी में तथ्यों का सद्भावपूर्वक कथन करता है और न्यायालय द्वारा दी गई राय, सलाह या निदेश पर कार्य करता है, जहां तक कि उसका अपना उत्तरदायित्व है, यह समझा जाएगा कि उसने आवेदन की विषयवस्तु के बारे में अपने उन कर्तव्यों का पालन कर दिया है जो संरक्षक के नाते उसके हैं ।

34. **संपत्ति के उस संरक्षक की बाध्यताएं जो न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है** – जहां कि प्रतिपाल्य की संपत्ति का संरक्षक न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है, और ऐसा संरक्षक कलक्टर नहीं है, वहां वह, –

(क) यदि उससे न्यायालय द्वारा ऐसी अपेक्षा की जाए, तो तत्समय न्यायाधीश के फायदे के लिए प्रवृत्त बन्धपत्र, प्रतिभुओं सहित या रहित जैसा विहित किया जाए, न्यायालय के न्यायाधीश को यथाशक्य निकटतम विहित प्ररूप में देगा, जिसमें यह वचनबन्ध

होगा कि प्रतिपाल्य की संपत्ति की बाबत जो कुछ उसे प्राप्त हो, उसका सम्यक् तौर पर लेखा-जोखा देगा ;

(ख) यदि उससे न्यायालय द्वारा ऐसी अपेक्षा की जाए, प्रतिपाल्य की स्थावर संपत्ति का विवरण, ऐसे धन और ऐसी अन्य जंगम संपत्ति का विवरण, जिसे उसने प्रतिपाल्य की ओर से विवरण के परिदान की तारीख तक प्राप्त किया है, और प्रतिपाल्य को या प्रतिपाल्य द्वारा उस तारीख को शोध्य ऋणों का विवरण, न्यायालय द्वारा उसकी नियुक्ति या घोषणा की तारीख से छह मास के भीतर या इतने अन्य समय के भीतर, जितना न्यायालय द्वारा निर्दिष्ट किया जाए, न्यायालय को परिदत्त कर देगा ;

(ग) यदि उससे न्यायालय द्वारा ऐसी अपेक्षा की जाए, अपने लेखाओं को न्यायालय में ऐसे समय पर और ऐसे प्ररूप में, जैसा न्यायालय समय-समय पर निर्दिष्ट करे, प्रदर्शित करेगा ;

(घ) यदि उससे न्यायालय द्वारा ऐसी अपेक्षा की जाए, उन लेखाओं में अपने द्वारा शोध्य बाकी या, उसका उतना भाग, जितना न्यायालय निर्दिष्ट करे, न्यायालय में उस समय जमा कर देगा, जिसे न्यायालय निर्दिष्ट करे ; तथा

(ङ) प्रतिपाल्य और ऐसे व्यक्तियों के, जो उस पर आश्रित हों, भरण-पोषण, शिक्षा और अभिवर्धन के लिए, तथा उन गृह कर्मों के अनुष्ठान के लिए जिनमें प्रतिपाल्य या उन व्यक्तियों में से कोई एक पक्षकार है, प्रतिपाल्य की संपत्ति की आय का उतना प्रभाग जितना न्यायालय समय-समय पर निर्दिष्ट करे, और उस दशा में, जब कि न्यायालय ऐसा निर्दिष्ट करे, तो संपूर्ण संपत्ति या उसका कोई भाग उपयोजित करेगा ।

[1][34क. **लेखाओं की संपरीक्षा करने के लिए पारिश्रमिक अधिनिर्णीत करने की शक्ति** – जब कि प्रतिपाल्य की संपत्ति के संरक्षक द्वारा लेखा धारा 34 के खंड (ग) के अधीन की गई अपेक्षा के अनुसरण में या अन्यथा प्रदर्शित किए जाएं, तब न्यायालय लेखाओं की संपरीक्षा करने के

[1] 1929 के अधिनियम सं. 17 की धारा 2 द्वारा अंत:स्थापित ।

लिए एक व्यक्ति को नियुक्त कर सकेगा और निदेश दे सकेगा कि उस काम के लिए पारिश्रमिक संपत्ति की आय में से दिया जाए ।]

35. **संरक्षक के विरुद्ध वाद, जहां कि प्रशासन बंधपत्र लिया गया था** – जहां कि न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक ने यह बंधपत्र दिया है कि उसे प्रतिपाल्य की संपत्ति की बाबत जो कुछ प्राप्त होगा, वह उसका सम्यक् तौर पर लेखा-जोखा देगा, वहां न्यायालय अर्जी द्वारा किए गए आवेदन पर, और अपना यह समाधान हो जाने पर कि बंधपत्र वचनबंध का पालन नहीं किया गया है और प्रतिभूति के बारे में ऐसे निबन्धनों पर, अथवा यह उपबंध करके कि प्राप्त होने वाले सब धन न्यायालय में जमा कर दिए जाएं या अन्यथा, जैसे न्यायालय ठीक समझे, वह बंधपत्र किसी उचित व्यक्ति को समनुदेशित कर सकेगा, जो तदुपरि उस बंधपत्र के आधार पर स्वयं अपने नाम में ऐसे वाद लाने का हकदार होगा मानो वह बंधपत्र न्यायालय ने न्यायाधीश के बजाय आरम्भत: उसी को दिया गया था और प्रतिपाल्य के न्यासी की हैसियत में वह उसके, किसी भंग की बाबत उस पर वसूली करने का हकदार होगा ।

36. **संरक्षक के विरुद्ध वाद, जहां कि प्रशासन बंधपत्र नहीं लिया गया था** – (1) जहां कि न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक ने यथापूर्वोक्त बंधपत्र नहीं दिया है वहां कोई भी व्यक्ति प्रतिपाल्य की संपत्ति की बाबत संरक्षक को हुई प्राप्ति के लिए वाद न्यायालय की इजाजत से वादमित्र के तौर पर संरक्षक के विरुद्ध या उस दशा में जिसमें उसकी मृत्यु हो चुकी हो, उसके प्रतिनिधि के विरुद्ध प्रतिपाल्य की अप्राप्तवयता के दौरान किसी समय संस्थित कर सकेगा और वाद में ऐसी रकम, जो यथास्थिति, संरक्षक या उसके प्रतिनिधि द्वारा देय पाई जाए प्रतिपाल्य के न्यासी के रूप में वसूल कर सकेगा ।

(2) जहां तक उपधारा (1) के उपबंध संरक्षक के विरुद्ध वाद से संबंधित हैं, वहां तक वे कोड आफ सिविल प्रोसीजर, 1882 (1882 का 14)[1] के इस अधिनियम के द्वारा यथासंशोधित धारा 440 के उपबंधों के अध्यधीन रहेंगे ।

---

[1] अब देखिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम सं. 5) की प्रथम अनुसूची में आदेश 32, नियम 1 और 4(2) ।

37. **संरक्षक का न्यासी के तौर पर साधारण दायित्व** – पूर्वगामी अन्तिम दो धाराओं में से किसी धारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह प्रतिपाल्य को या उसके प्रतिनिधि को संरक्षक या उसके प्रतिनिधि के विरुद्ध किसी ऐसे उपचार से वंचित करती है जो इन दोनों धाराओं में तो अभिव्यक्त तौर पर उपबंधित नहीं है किन्तु किसी भी अन्य हिताधिकारी या उसके प्रतिनिधि को अपने न्यासी या उसके प्रतिनिधि के विरुद्ध प्राप्त हों ।

संरक्षकता का पर्यवसान

38. **संयुक्त संरक्षकों के बीच उत्तरजीविताधिकार** – दो या अधिक संयुक्त संरक्षकों में से एक की मृत्यु पर संरक्षकता उत्तरजीवी या उत्तरजीवियों में तब तक बनी रहती है, जब तक न्यायालय द्वारा अतिरिक्त नियुक्ति नहीं कर दी जाती ।

39. **संरक्षक का हटाया जाना** – न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक को, या विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त संरक्षक को न्यायालय किसी हितबद्ध व्यक्ति के आवेदन पर या स्वप्रेरणा से, निम्नलिखित हेतुकों में से किसी या किन्हीं के लिए, अर्थात् :-

(क) अपने न्यास के दुरुपयोग के लिए,

(ख) अपने न्यास के कर्तव्यों के पालन में निरन्तर असफलता के लिए,

(ग) अपने न्यास के कर्तव्यों के पालन में असमर्थता के लिए,

(घ) अपने प्रतिपाल्य से बुरे बर्ताव, या उसकी उचित देखरेख करने में उपेक्षा के लिए,

(ङ) उस अधिनियम के किसी उपबंध या न्यायालय के किसी आदेश की धृष्टतापूर्ण अवहेलना के लिए,

(च) ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्धि के लिए जिसमें न्यायालय की राय में शील की ऐसी त्रुटि विवक्षित है, जिसे वह अपने प्रतिपाल्य का संरक्षक रहने के अयोग्य हो जाता है,

(छ) ऐसा हित रखने के लिए जो उसके कर्तव्यों के निष्ठापूर्वक पालन के प्रतिकूल है,

(ज) न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर निवास करना बन्द कर देने के लिए,

(झ) संपत्ति का संरक्षक होने की दशा में शोध-अक्षमता या दिवाले के लिए,

(ञ) जिस विधि के अध्यधीन अप्राप्तवय है, उसके अधीन संरक्षक की संरक्षकता के समाप्त हो जाने या समाप्त होने के कारण, हटा सकेगा :

परन्तु विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त संरक्षक चाहे वह इस अधिनियम के अधीन घोषित किया गया हो, या नहीं -

(क) खंड (छ) में वर्णित हेतुक के लिए तब के सिवाय हटाया न जाएगा जब कि उसकी नियुक्ति करने वाले व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् प्रतिकूल हित प्रोद्भूत हुआ हो या वह दर्शित कर दिया गया हो कि उस व्यक्ति ने प्रतिकूल हित की अनभिज्ञता में वह नियुक्ति की थी और बनाए रखी थी ; अथवा

(ख) खंड (ज) में वर्णित हेतुक के लिए तब के सिवाय हटाया न जाएगा जब कि ऐसा संरक्षक ऐसे निवास करने लगा हो, जिससे न्यायालय की राय में उस संरक्षक के लिए यह साध्य नहीं रह गया है कि वह संरक्षक के कर्तव्यों का निर्वहन कर सके ।

40. **संरक्षक का उन्मोचन** – (1) यदि न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक अपना पद त्यागना चाहे, तो वह उन्मोचित किए जाने के लिए न्यायालय से आवेदन कर सकेगा ।

(2) यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि आवेदन के लिए पर्याप्त कारण है, तो वह उसे उन्मोचित करेगा और यदि आवेदन करने वाला संरक्षक कलक्टर है, और राज्य सरकार उसके उन्मोचित किए जाने के लिए आवेदन करने का अनुमोदन करती है, तो न्यायालय हर दशा में उसे उन्मोचित करेगा ।

41. **संरक्षक के प्राधिकार का अन्त हो जाना** – (1) शरीर के संरक्षक की शक्तियों का अन्त –

(क) उसकी मृत्यु, उसके हटाए जाने या उसके उन्मोचन से ;

(ख) प्रतिपाल्य के शरीर का अधीक्षण प्रतिपाल्य अधिकरण द्वारा संभाल लिए जाने से ;

(ग) प्रतिपाल्य की अप्राप्तवयता के अन्त हो जाने से ;

(घ) नारी प्रतिपाल्य की दशा में उसका ऐसे पति से विवाह हो जाने से, जो उसके शरीर का संरक्षक होने के अयोग्य नहीं है या यदि संरक्षक न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है तो, ऐसे पति से, जो न्यायालय की राय में ऐसे अयोग्य नहीं है, विवाह हो जाने से ; अथवा

(ङ) ऐसे प्रतिपाल्य की दशा में जिसका पिता प्रतिपाल्य के शरीर का संरक्षक होने के अयोग्य था, पिता के ऐसा न रहने से या, यदि पिता, न्यायालय द्वारा ऐसे अयोग्य समझा गया था, तो न्यायालय की राय में उसके ऐसा न रहने से, हो जाता है ।

(2) संपत्ति के संरक्षक की शक्तियों का अन्त -

(क) उसकी मृत्यु, उसके हटाए जाने या उसके उन्मोचन से ;

(ख) प्रतिपाल्य की संपत्ति का अधीक्षण प्रतिपाल्य अधिकरण द्वारा संभाल लिए जाने से ; अथवा

(ग) प्रतिपाल्य की अप्राप्तवयता के अन्त हो जाने से ;

हो जाता है ।

(3) जब कि संरक्षक की शक्तियों का किसी हेतुकवश अन्त हो जाता है तब न्यायालय उससे या, यदि वह मर चुका हो तो, उसके प्रतिनिधि से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह प्रतिपाल्य की संपत्ति, जो उसके अपने कब्जे या नियंत्रण में है, अथवा प्रतिपाल्य की भूतपूर्व या वर्तमान संपत्ति से संबद्ध कोई लेखा, जो उसके अपने कब्जे या नियंत्रण में है, ऐसे परिदत्त कर दे जैसे न्यायालय निर्दिष्ट करे ।

(4) जब कि वह न्यायालय द्वारा अपेक्षित तौर पर संपत्ति या लेखाओं का परिदान कर चुका हो तब न्यायालय उस कपट के बारे में के सिवाय जिसके तत्पश्चात् पता चले यह घोषित कर सकेगा कि वह अपने दायित्वों से उन्मोचित कर दिया गया है ।

42. **मृत, उन्मोचित या हटाए गए संरक्षक के उत्तरवर्ती की नियुक्ति** – जब कि न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक उन्मोचित कर दिया गया है, या उस विधि के अधीन, जिसके प्रतिपाल्य अध्यधीन है, कार्य करने का हकदार नहीं रह जाता या जब कि कोई ऐसा संरक्षक या विल या अन्य लिखत द्वारा नियुक्त संरक्षक हटा दिया जाता है या मर जाता है, तब यदि प्रतिपाल्य तब भी अप्राप्तवय हो तो न्यायालय स्वप्रेरणा से, या अध्याय 2 के अधीन आवेदन पर, यथास्थिति, अप्राप्तवय के शरीर या संपत्ति या दोनों का दूसरा संरक्षक नियुक्त या घोषित कर सकेगा ।

अध्याय 4
अनुपूरक उपबंध

43. **संरक्षकों के आचरण या कार्यवाहियों के विनियमन के लिए आदेश और उन आदेशों का प्रवर्तन कराना** – (1) न्यायालय किसी ऐसे संरक्षक के, जो न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया है, आचरण या कार्यवाहियों के विनियमन के लिए आदेश किसी हितबद्ध व्यक्ति के आवेदन पर, या स्वप्रेरणा से, कर सकेगा ।

(2) जहां कि प्रतिपाल्य के एक से अधिक संरक्षक हैं, और वे ऐसे प्रश्न पर, जो उसके कल्याण पर प्रभाव डालने वाला है, एकमत होने में असमर्थ है, वहां उनमें से कोई भी न्यायालय से उसके निदेश के लिए, आवेदन कर सकेगा, और न्यायालय मतभेदग्रस्त विषय के बारे में ऐसा आदेश कर सकेगा जैसा वह ठीक समझे ।

(3) वहां के सिवाय, जहां कि यह प्रतीत होता है कि उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन आदेश करने का उद्देश्य विलम्ब होने से विफल हो जाएगा, न्यायालय यह आदेश करने के पहले, यथास्थिति, तदर्थ किए गए, आवेदन की, या वैसा आदेश करने के न्यायालय के आशय की सूचना, उपधारा (1) की दशा में, संरक्षक को या उपधारा (2) की दशा में संरक्षक को, जिसने आवेदन नहीं किया है, दिए जाने का निदेश देगा ।

(4) उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन किए गए आदेश की

अवज्ञा की दशा में उस आदेश का प्रवर्तन उसी रीति से, जो कोड आफ सिविल प्रोसीजर, 1882 (1882 का 14)[1] की धारा 492 या धारा 493 के अधीन अनुदत्त व्यादेश का प्रवर्तन कराने के लिए उपधारा (1) के अधीन की दशा में ऐसे कराया जा सकेगा, मानो प्रतिपाल्य वादी हो या संरक्षक प्रतिवादी हो और उपधारा (2) के अधीन की दशा में ऐसे कराया जा सकेगा मानो वह संरक्षक, जिसने आवेदन किया है, वादी हो और अन्य संरक्षक प्रतिवादी हो ।

(5) उपधारा (2) के अधीन की दशा के सिवाय, इस धारा की कोई भी बात कलक्टर को, जो कलक्टर होने के नाते संरक्षक है, लागू नहीं होगी ।

44. **अधिकारिता में से प्रतिपाल्य के हटाए जाने की शास्ति** – यदि न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक, न्यायालय को प्रतिपाल्य के बारे में अपने प्राधिकार का प्रयोग करने से निवारित करने के प्रयोजन से या तत्परिणाम सहित न्यायालय की अधिकारिता की सीमाओं में से प्रतिपाल्य को धारा 26 के उपबंधों का उल्लंघन करके हटा लेगा तो वह न्यायालय के आदेश द्वारा एक हजार रुपए से अनधिक जुर्माने से, या ऐसी अवधि के लिए, जो छह मास तक की ही हो सकेगी, सिविल जेल में कारावास से दंडनीय होगा ।

45. **धृष्टता के लिए शास्ति** – (1) निम्नलिखित दशाओं में, अर्थात् :–

(क) यदि अप्राप्तवय की अभिरक्षा रखने वाला व्यक्ति धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन निदेश के अनुपालन में उसे पेश करने या कराने में या धारा 25 की उपधारा (1) के अधीन के आदेश के अनुपालन में अप्राप्तवय को उसके संरक्षक की अभिरक्षा में लौटने के लिए विवश करने का अपना पूरा प्रयास करने में असफल रहेगा ; अथवा

---

[1] अब देखिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम सं. 5) की प्रथम अनुसूची में आदेश 39, नियम 1 और 2 ।

(ख) यदि न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक धारा 34 के खंड (ख) के द्वारा या अधीन अनुज्ञात समय के भीतर, न्यायालय को उस उपखंड के अधीन अपेक्षित विवरण परिदान करने में या उस धारा के खंड (ग) के अधीन की अपेक्षा के अनुपालन में लेखाओं का प्रदर्शन करने में, या उन लेखाओं मद्धे उस द्वारा शोध्य बाकी उस धारा के खंड (घ) के अधीन की अपेक्षा के अनुपालन में न्यायालय में जमा करने में असफल रहेगा ; अथवा

(ग) यदि कोई व्यक्ति, जो ऐसे व्यक्ति का संरक्षक या प्रतिनिधि नहीं रह गया है, धारा 41 की उपधारा (3) के अधीन की अपेक्षा के अनुपालन में किसी संपत्ति या लेखाओं का परिदान करने में असफल रहेगा ;

तो, यथास्थिति, वह व्यक्ति, संरक्षक या प्रतिनिधि, न्यायालय के आदेश द्वारा एक सौ रुपए से अनधिक जुर्माने से, और अवज्ञा जारी रहने की दशा में पहले दिन के पश्चात् जितने दिन तक यह व्यतिक्रम बना रहता है, उतने हर एक दिन के लिए दस रुपए से अनधिक अतिरिक्त जुर्माने से, जो कुल मिलाकर पांच सौ रुपए से अधिक न होगा, दंडनीय होगा और सिविल जेल में तब तक निरुद्ध किए जाने के दायित्व के अधीन होगा, जब तक वह, यथास्थिति, अप्राप्तवय को पेश करने या कराने या उसे लौट आने को विवश करने, या विवरण परिदत्त करने, या लेखा प्रदर्शित करने देने, या बाकी देने, या संपत्ति या लेखाओं का परिदान करने का परिवचन न दे दे ।

(2) यदि वह व्यक्ति, जो उपधारा (1) के अधीन परिवचन देने पर विरोध से निर्मुक्त कर दिया गया है, न्यायालय द्वारा अनुज्ञात समय के अन्दर परिवचन पूरा करने में असफल रहेगा, तो न्यायालय उसकी गिरफ्तारी और सिविल जेल को उसका फिर से सुपुर्द किया जाना कारित कर सकेगा ।

46. **कलक्टर और अधीनस्थ न्यायालयों के द्वारा रिपोर्ट** –- (1) न्यायालय कलक्टर से या अपने अधीनस्थ किसी अन्य न्यायालय से, इस अधिनियम के अधीन की किसी भी कार्यवाही में उद्भूत किसी भी बात पर रिपोर्ट मांग सकेगा और उस रिपोर्ट को साक्ष्य के तौर पर बरत सकेगा ।

(2) यथास्थिति, कलक्टर या अधीनस्थ न्यायालय का न्यायाधीश रिपोर्ट तैयार करने के प्रयोजन के लिए ऐसी जांच करेगा, जैसी वह आवश्यक समझे, और साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए साक्षी को हाजिर होने को विवश करने की शक्ति का, जो न्यायालय को कोड आफ सिविल प्रोसीजर, 1882 (1882 का 14)[1] द्वारा प्रदत्त है, प्रयोग जांच के प्रयोजनों के लिए कर सकेगा ।

47. **अपीलनीय आदेश** – ऐसे आदेश की अपील उच्च न्यायालय में होगी जो [2]*** न्यायालय ने, –

(क) संरक्षक नियुक्त या घोषित करने या नियुक्त या घोषित करने से इनकार करने की धारा 7 के अधीन किया है ; अथवा

(ख) आवेदन लौटाने को धारा 9 की उपधारा (3) के अधीन किया है ; अथवा

(ग) प्रतिपाल्य को उसके संरक्षक की अभिरक्षा में लौट आने के लिए आदेश करने या आदेश करने से इनकार करने का धारा 25 के अधीन किया है ; अथवा

(घ) न्यायालय की अधिकारिता की सीमाओं में से प्रतिपाल्य के हटाए जाने के लिए इजाजत देने से इनकार करने या उसके बारे में शर्तें अधिरोपित करने का धारा 26 के अधीन किया है ; अथवा

(ङ) धारा 28 या धारा 29 में निर्दिष्ट कार्य करने की संरक्षक को उस धारा के अधीन अनुज्ञा देने से इनकार करने का किया है ; अथवा

(च) संरक्षक की शक्तियों को परिभाषित, निर्बन्धित या विस्तारित करने की धारा 32 के अधीन किया है ; अथवा

(छ) संरक्षक को हटाने की धारा 39 के अधीन किया है ; अथवा

(ज) संरक्षक को उन्मोचित करने से इनकार करने का धारा 40 के अधीन किया है ; अथवा

---

[1] अब देखिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम सं. 5) की धारा 115 ।

[2] 1926 के अधिनियम 4 की धारा 4 द्वारा "जिला" शब्द निरसित ।

(झ) संरक्षक के आचरण या कार्यवाहियों के विनियमन का या संयुक्त संरक्षकों के बीच में मतभेदग्रस्त विषय को तय करने या आदेश का प्रवर्तन कराने का धारा 43 के अधीन किया है ; अथवा

(ञ) शास्ति अधिरोपित करने की धारा 44 या धारा 45 के अधीन किया है ।

48. **अन्य आदेशों की अन्तिमता** – अन्तिम पूर्वगामी धारा द्वारा और कोड आफ सिविल प्रोसीजर, 1882 (1882 का 14)[1] की धारा 622 द्वारा यथा उपबंधित के सिवाय इस अधिनियम के अधीन किया गया आदेश अन्तिम होगा, और वाद द्वारा या अन्यथा प्रतिवादनीय न होगा ।

49. **खर्चे** – इस अधिनियम के अधीन की किसी कार्यवाही के खर्चे, जिनके अंतर्गत सिविल जेल संरक्षक या अन्य व्यक्ति के भरण-पोषण के खर्चे आते हैं, उच्च न्यायालय द्वारा इस अधिनियम के अधीन बनाए गए किन्हीं नियमों के अध्यधीन रहते हुए उस न्यायालय के विवेकाधीन होंगे जिसमें कार्यवाही की गई है ।

50. **उच्च न्यायालय की नियम बनाने की शक्ति** – (1) नियम बनाने की किसी अन्य शक्ति के अतिरिक्त, जो इस अधिनियम द्वारा अभिव्यक्त तौर पर या विवक्षित तौर पर प्रदत्त है, उच्च न्यायालय इस अधिनियम से संगत नियम निम्नलिखित के लिए समय-समय पर बना सकेगा –

(क) वे बातें, जिनके बारे में और वह समय जिस पर कलक्टर और अधीनस्थ न्यायालयों से रिपोर्ट मांगी जानी चाहिए ;

(ख) संरक्षकों को अनुदत्त किए जाने वाले भत्ते और उनसे अपेक्षित की जाने वाली प्रतिभूति और वे दशाएं, जिनमें ऐसे भत्ते अनुदत्त किए जाने चाहिएं ;

(ग) धारा 28 और 29 में निर्दिष्ट कार्यों को करने की अनुज्ञा के लिए संरक्षकों के आवेदनों के बारे में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया ;

---

[1] अब देखिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम सं. 5) की धारा 115 ।

(घ) वे परिस्थितियां जिनमें वे अपेक्षाएं की जानी चाहिएं जैसी धारा 34 के खंड (क), (ख), (ग) और (घ) में वर्णित हैं ;

(ङ) संरक्षकों द्वारा परिदत्त और प्रदर्शित विवरणों और लेखाओं का परिरक्षण ;

(च) उन विवरणों और लेखाओं का हितबद्ध व्यक्तियों द्वारा निरीक्षण ;

[1][(चच) धारा 34क के अधीन लेखाओं की संपरीक्षा और उन व्यक्तियों का वर्ग जो लेखाओं की संपरीक्षा के लिए नियुक्त किए जाने चाहिएं और पारिश्रमिक का मापमान जो उन्हें अनुदत्त किया जाना है ;]

(छ) प्रतिपाल्यों के धन की अभिरक्षा और उनके धन के लिए प्रतिभूतियां ;

(ज) वे प्रतिभूतियां, जिनमें प्रतिपाल्यों के धन विनिहित किए जा सकेंगे ;

(झ) उन प्रतिपाल्यों की शिक्षा, जिनके लिए न्यायालय द्वारा, ऐसे संरक्षक नियुक्त या घोषित कर दिए गए हैं जो कलक्टर नहीं हैं, तथा

(ञ) इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने में न्यायालयों का साधारणत: मार्गदर्शन ।

(2) उपधारा (1) खंड (क) और (झ) के अधीन के नियम उस समय तक प्रभावशील नहीं होंगे, जब तक वे राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित न कर दिए गए हों, और न इस धारा के अधीन का कोई नियम उस समय तक प्रभावशील होगा, जब तक वह शासकीय राजपत्र में प्रकाशित न कर दिया गया हो ।

51. **न्यायालय द्वारा पहले ही नियुक्त संरक्षकों को अधिनियम का**

---

[1] 1929 के अधिनियम सं. 17 की धारा 3 द्वारा अंत:स्थापित ।

लागू होना – इस अधिनियम द्वारा निरसित किसी अधिनियमिति के अधीन सिविल न्यायालय द्वारा नियुक्त, या उससे प्राप्त प्रशासन प्रमाणपत्र धारण करने वाला संरक्षक, जैसा विहित किया जाए, उसके सिवाय इस अधिनियम के उपबन्धों और इसके अधीन बनाए गए नियमों के ऐसे अध्यधीन होगा मानो वह अध्याय 2 के अधीन न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित किया गया हो ।

52. **[इण्डियन मेजोरिटी ऐक्ट का संशोधन ।]** – निरसन अधिनियम, 1938 (1938 का 1) की धारा 2 और अनुसूची द्वारा निरसित ।

53. [**कोड आफ सिविल प्रोसीजर के अध्याय 31 का संशोधन** ।] – सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) की धारा 156 तथा अनुसूची 5 द्वारा निरसित ।

अनुसूची – **[निरसित अधिनियमितियां ।]** – निरसन अधिनियम, 1938 (1938 का 1) की धारा 2 और अनुसूची द्वारा निरसित ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास – (103वां संविधान संशोधन तक) – श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व – डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ` 2,100/-, ` 1,300/- और ` 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in